CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी शहीद स्मृति

सम्पादक

डा॰ भगवानदास माहौर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी शहीद स्मृति

सम्पादक
डा. भगवानदास माहौर

प्रकाशक
काकोरी शहीद अर्धशताब्दी
समारोह समिति
लखनऊ

प्रकाशक :
रामकृष्ण खत्री, संयोजक
काकोरी शहीद अर्धशताब्दी
समारोह समिति
२, मेंहदी बिल्डिंग, कैसरबाग़
लखनऊ – २२६ ००१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आवरण कलाकार :
मोहम्मद जमशेद

मूल्य : पचास रुपये

State Museum Library Lucknow
4923

मुद्रक :
धीरूभाई देसाई
स्टेट्स पीपुल प्रेस
जन्मभूमि भवन, घोगा स्ट्रीट
बम्बई – ४०० ००१

फोटो-प्लेट मुद्रक :
कलर प्रिंट्स एण्ड पैकेजिंग्ज़
९, अध्यारू इण्डस्ट्रियल एस्टेट
सन मिल कम्पाउण्ड, लोअर परेल
बम्बई – ४०० ०१८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रम

शुभकामना सन्देश		:	५
प्रस्तावना	—श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा	:	१३
सम्पादकीय		:	१५
काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह		:	१७
काकोरी क्रान्ति : एक नज़र में		:	३०
अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल'	—काकोरी के क्रान्तिवीर प्रेमकृष्ण खन्ना	:	३३
अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी	—श्री बाबूलाल शर्मा	:	३५
अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ	—श्री कृपाशंकर हजेला, एडवोकेट	:	४१
अमर शहीद रोशनसिंह	—क्रान्तिवीर रामसेवक रावत	:	५४
अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद	—क्रान्तिवीर रमेशचन्द्र गुप्त	:	५६
स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल	—क्रान्तिवीर विजयकुमार सिनहा	:	५९
स्वर्गीय क्रान्तिवीर जोगेशचन्द्र चटर्जी	—प्रो. राधेश्याम शर्मा	:	६१
स्वर्गीय क्रान्तिवीर मुकुन्दीलाल	—श्री रामसिंह बघेले	:	६४
स्वर्गीय क्रान्तिवीर गोविन्दचरण कर	—क्रान्तिवीर रामचन्द्र नरहरि बापट	:	६८
स्वर्गीय क्रान्तिवीर सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य	—क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा	:	७२
स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामदुलारे त्रिवेदी	—क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा	:	७३
स्वर्गीय क्रान्तिवीर भूपेन्द्रनाथ सान्याल	—क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा	:	७५
स्वर्गीय क्रान्तिवीर राजकुमार सिनहा	—क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा	:	७६
स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामनाथ पाण्डेय	—क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा	:	७८
स्वर्गीय क्रान्तिवीर कुन्दनलाल गुप्ता	—क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा	:	७९
क्रान्तिवीर विष्णुशरण दुबलिश	—क्रान्तिवीर गजानन सदाशिव पोतदार	:	८०
क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ बख्शी	—क्रान्तिवीर शंकरराव मलकापुरकर	:	८२
क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री	—क्रान्तिवीर शिव शर्मा	:	८५
क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्त	—क्रान्तिवीर शिव वर्मा	:	८७
क्रान्तिवीर प्रेमकृष्ण खन्ना	—क्रान्तिवीर शिव वर्मा	:	८९
भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष की प्रगति : एक सिंहावलोकन	—डा. भगवानदास माहौर	:	९५
काकोरी षड़यंत्र की एक झलक	—क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्त	:	१०६
फाँसी की छाया में क्रान्तिकारी मनोविनोद और दृढ़ता	—क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री	:	११८
काकोरी दल की झाँसी शाखा	—क्रान्तिवीर सदाशिवराव मलकापुरकर	:	१३२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिकारी और साहित्य —श्रीपाद अमृत माहौर : १४०
नेताजी काकोरी के शहीदों की गाथा सुनाते थे —ठाकुर रामसिंह : १४६
शहीदों के गीत : हमारी नयी गीता —क्रान्तिकारी वीरांगना दुर्गादेवी वोहरा : १५०
अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास —क्रान्तिवीर जयदेव कपूर : १५३
रावी-तट के बलिदानी भगवतीचरण वोहरा —क्रान्तिवीर जयदेव कपूर : १६३
काकोरी काण्ड और मेरठ —क्रान्तिवीर राजेन्द्रपालसिंह वारियर : १६९
The Last Struggle —Major M. H. Alvi : १७१

परिशिष्ट

स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों का ऐलान : १९१
Presidential Address of Dr. Bhupendranath Dutta : १९५
'The Revolutionary' quoted in Kakori Judgement : २०२
Constitution of The Hindustan Republican Association : २०५
फाँसी की कोठरी से शहीद के स्मरणीय उद्गार —अमर शहीद 'बिस्मिल' : २१०
अन्तिम इच्छा : हिन्दू-मुस्लिम एकता —अमर शहीद 'बिस्मिल' : २१३
क्रान्ति एक सामाजिक आवश्यकता —प्रिंस क्रोपाटकिन : २१५
वे दीवाने —अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी : २१६
'बिस्मिल' की आत्मकथा की भूमिका —स्व. पं. विष्णुदत्त शुक्ल : २१७
अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ का ख़त : २२०
अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ का पैग़ाम : २२२
अशआ'रे अशफ़ाक़ : २२७
कुछ क्रान्तिकारी गाने : २३२
'बिस्मिल' का शिकवा : २३८

चित्र-सूची

काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह : २१–२६
काकोरी के अमर शहीद : ३७–४०
४५–४८
लाहौर षड़यंत्र के अमर शहीद : ४९–५१
काकोरी के क्रान्तिवीर : ६९, ९१–९४
'काकोरी शहीद स्मृति' के लेखक : ११९–१२२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली – ११० ००४
नवम्बर ९, १९७७

काकोरी काण्ड हमारे स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास की एक उज्ज्वल घटना है। काकोरी शहीदों के प्रति मैं अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ और आशा करता हूँ कि उनकी देशभक्ति व बलिदान की कहानी युवा पीढ़ी के लिए सदा प्रेरणादायी होगी।

काकोरी अर्धशताब्दी समारोह की सफलता के लिए मैं अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

नीलम संजीव रेड्डि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

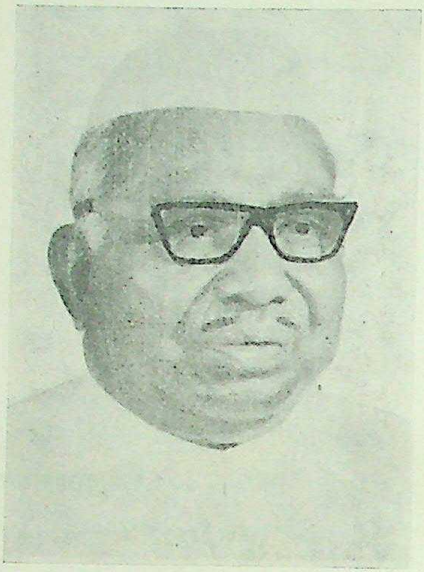

नं. ४१६९/आर. एम./७७
रक्षा मंत्री, भारत
नई दिल्ली
दिनांक १८ नवम्बर, १९७७

काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह समिति, लखनऊ द्वारा काकोरी घटना के ५०वें वर्ष के अवसर पर एक श्रद्धांजलि समारोह का आयोजन किया जा रहा है और इस अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन भी किया जा रहा है, यह ज्ञात हुआ।

देश के स्वातंत्र्य आन्दोलन से सम्बन्धित अनेक ऐतिहासिक घटनाएँ हैं, जिनमें काकोरी की घटना एक महत्त्वपूर्ण घटना है। अपने प्राणों की आहुति देकर देश के क्रान्तिकारी तत्व ने भी इस स्वातंत्र्य को सफल बनाने में योगदान किया। इनकी स्मृति में आयोजन करके और इनके प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करके लखनऊ निवासी अपने एक पावन कर्तव्य का पालन करेंगे।

आशा है, स्मारिका में इस अवसर पर बलिदान हुए शहीदों, उनके शौर्य एवं काकोरी घटना का समुचित विवरण होगा। इससे वर्तमान पीढ़ी लाभान्वित होगी और भावी पीढ़ियों को प्रेरणा मिल सकेगी।

इस अवसर पर मैं भी शहीदों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। आयोजन सफल हो।

जगजीवन राम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जसलोक अस्पताल

बम्बई

काकोरी के शहीदों की शहादत की अर्धशताब्दी के अवसर पर एक शहीद स्मृति समारोह किया जा रहा है, यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई है।

काकोरी केस में राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़उल्ला खाँ और रोशनसिंह को १७ और १९ दिसम्बर, १९२७ को फाँसी दी गयी थी। उस बलिदान को ५० वर्ष हुए।

देश को विदेशी दासता से स्वतंत्र कराने की दृढ़ लगन इन और इन जैसे दूसरे शहीदों के रोम-रोम में भरी थी। सरफ़रोशी की ही तमन्ना उनके दिलों में थी। वतन के लिए उन्होंने अपने प्राण न्योछावर कर दिये।

इन शहीदों के त्याग और बलिदान से देश के नौजवानों को देश की आज़ादी की लड़ाई में अपनी जान तक झोंक देने की प्रेरणा मिली। उसी के फलस्वरूप भारत को अंग्रेज़ी हुकूमत से स्वतंत्रता प्राप्त हुई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब देश में तानाशाही का दौर शुरू हो गया तब इन्हीं शहीदों से प्रेरणा लेकर, शहादत की इसी परंपरा में, देश के नौजवानों ने अपने प्राणों की बाज़ी लगाकर 'समग्र क्रान्ति' का बिगुल बजा दिया और देश को तानाशाही से मुक्ति मिली।

शहीदों की स्मृति में ऐसे समारोह बराबर होते रहने चाहिये ताकि वतन पर मर मिटनेवालों की याद सदा बनी रहे और आनेवाली पीढ़ियों को प्रेरणा मिलती रहे।

१९-१२-७७ **जयप्रकाश नारायण**

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टेलीफोन : ५१०५०
५११०१
सेवा कुटीर
पान दरीबा
लखनऊ

दिनांक १६ नवम्बर, १९७७

मुझे यह जानकार हार्दिक प्रसन्नता हुई कि काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह समिति काकोरी केस के उन अमर शहीदों की स्मृति में एक स्मारिका प्रकाशित करने जा रही है। काकोरी केस के अभियुक्तों में जो अभियुक्त थे वे देश को आज़ाद कराने की भावना से ओतप्रोत थे और हिंसात्मक ढंगों में विश्वास करते थे। वे देश को येनकेनप्रकारेण अंग्रेज़ी हुकूमत के चंगुल से छुड़ाना चाहते थे और उसके उपरान्त देश में एक ऐसी समाजवादी व्यवस्था को स्थापित करना चाहते थे जिसके अन्तर्गत मानव मानव का शोषण न कर सके। वे सदैव त्याग की भावना से ओतप्रोत रहे। उनमें से कुछ ने इन्हीं भावनाओं के अन्तर्गत कुछ भूलें भी की थीं जो उनके अपनाये हुए आदर्श के मापदण्ड से कदाचित भुलायी भी जा सकती हैं। उनका त्याग और उत्सर्ग का मार्ग आज भी नवयुवकों को प्रेरणा देने वाला है। आज की पीढ़ी को उनके उस उत्साह और लगन की भावना को अपनाते हुए देश की, आजकल की, जो समाज में कमजोरियाँ हैं उन्हें दूर करने में तत्परता अपनानी चाहिये और अपना सहयोग प्रदान करना चाहिये। मैं स्मारिका की पूर्ण सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ।

शुभकामनाओं सहित,

चन्द्रभानु गुप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आशा की नयी किरण दिखायी पड़ी थी

आज के ५० साल पहले काकोरी षड़यंत्र का मुकदमा चालू किया गया था। यह समय वह था जबकि गाँधीजी द्वारा चलाया गया असहयोग आन्दोलन समाप्त हो गया था और देश का भविष्य अंधकारमय था। किसी की समझ में नहीं आता था कि क्या करें। साम्प्रदायिक दंगों की शुरूआत हो गयी थी, हिन्दू-मुसलमान में मतभेद बहुत बढ़ गया था और बड़े-बड़े अपनी जगह पर राष्ट्रीयता के पथ से अलग हो गये थे। कांग्रेस की बुरी हालत थी। कुछ कांग्रेसी असेम्बलियों व कौंसिलों में दाखिल हो गये थे। कुछ लोगों ने वकालत शुरू कर दी थी। विद्यार्थियों ने पुनः सरकारी स्कूलों में पढ़ना शुरू कर दिया था।

इस समय देश के कुछ नवजवान जो स्वतंत्रता के लिए उतावले थे उन्होंने पुनः क्रान्तिकारी आन्दोलन शुरू किया। बंगाल में उसने उग्र रूप धारण किया। यहाँ तक कि १९२४ में बंगाल आर्डिनेंस जारी किया गया और उसके अन्तर्गत एक हज़ार से ज्यादा देशभक्त नज़रबन्द किये गये। इधर उत्तर भारत और पंजाब में नवयुवकों ने करवट बदली और हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन की स्थापना की। मुझे याद है, १ जनवरी, १९२५ को अंग्रेज़ी में एक पर्चा बँटा जिसमें पहला वाक्य था : "Chaos is necessary to the birth of a new star."

यह पर्चा हाथोंहाथ उत्तर प्रदेश के बड़े शहरों में नवजवानों में बँटा जिससे एक नयी स्फूर्ति पैदा हुई और आशा की किरण दिखायी पड़ी। बाद में काकोरी के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
करीब तत्कालीन अवध-रुहेलखण्ड रेलवे की गाड़ी का ख़ज़ाना लूटा गया। मौके पर तो कोई पकड़ा नहीं गया लेकिन दुर्भाग्य से कुछ मुखबिर हो गये। और काकोरी तथा बिचपुरी में जहाँ कोई डाका पड़ा था, उसके सिलसिले में मुकदमा चलाया गया जो 'काकोरी षड़यंत्र' के नाम से प्रसिद्ध है। इस मुक़दमे में अनेक लोगों को आजीवन कारावास हुआ और पाँच-दस साल की सज़ा हुई। श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल जो एक उच्च कोटि के साहित्यिक और विचारक थे, उनको आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई। सरकार ने उनके विरुद्ध अपील नहीं करी। तत्कालीन अवध के चीफ़ जज ने अपने फैसले में लिखा कि अगर सरकार ने अपील की होती तो उनकी सज़ा बढ़ाकर उन्हें फाँसी दे देते। चार आदमियों को फाँसी हुई—रोशनसिंह, राजेन्द्र लाहिड़ी, अशफ़ाक़उल्ला व रामप्रसाद बिस्मिल। जिस प्रकार यह लोग फाँसी के तख्ते पर चढ़े, वह इतिहास का भाग बन गया है। यह बात ५० साल पहले की है, १९२७ की। इनको तो फाँसी हो गयी, लेकिन देश भर में एक आग-सी लग गयी और सरकार के प्रति लोगों की जो भावना थी वह और उत्तेजित हुई और पुनः नवजवानों में देशभक्ति की भावना पैदा हुई।

इस मुकदमे की पैरवी में यह बात उल्लेखनीय है कि प्रदेश के समस्त कांग्रेस वाले जो हिंसा में विश्वास नहीं करते थे वह भी जुट गये। एक कमेटी बनी जिसमें श्री मोहनलाल सक्सेना, श्री गोपीनाथ श्रीवास्तव, श्री हरकरणनाथ मिश्र इत्यादि थे। श्री चन्द्रभानु गुप्त का राजनीति में प्रवेश इसी केस की पैरवी से हुआ। उन्होंने १९२६ में वकालत पास की थी और लखीमपुर खीरी के श्री हरनामसुन्दर काकोरी केस में फँस गये थे। बाद में उनके खिलाफ़ कुछ पाया नहीं गया इसलिए उन्हें छोड़ दिया गया। श्री हरनामसुन्दरजी और श्री चन्द्रभानु गुप्त की भेंट लखीमपुर खीरी की थी और उन्होंने गुप्तजी को सन्देश भेजा और कहा कि वह उनके केस की पैरवी करें। हालाँकि गुप्तजी नये वकील थे लेकिन काम में जुट गये। यहाँ तक कि उन्होंने अन्ततोगत्वा वकालत छोड़ दी और सारा जीवन राजनीति और देश-सेवा, समाज-सेवा में बिताया।

ऐसे अवसर पर जब कि ५० साल इन महापुरुषों के बलिदान के पूरे हो रहे हैं, उनकी यादगार मनाकर हम अपने को गौरवान्वित करेंगे और मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि उनके त्याग व तपस्या से भारत आज़ाद हुआ और आज भी उनकी स्मृति वह लहर पैदा करती है जिससे एक भारतीय का सर गर्व से उठता है।

त्रिलोकीसिंह
संसद सदस्य (राज्यसभा)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

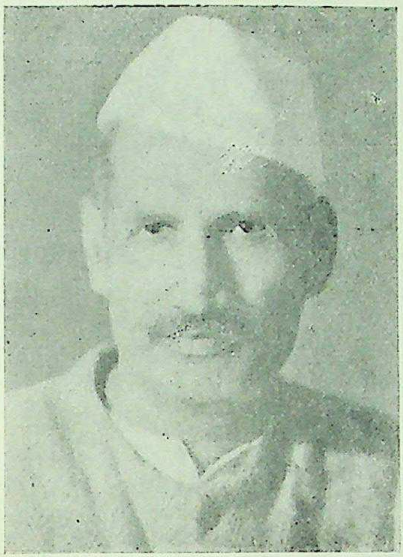

शहीदों का श्राद्ध : भावी कार्यक्रम

प्रारम्भ में ही मुझे यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिये कि पिछले ३०-३१ वर्षों में जो थोड़ी-सी सेवा इस विषय में मेरे द्वारा बन पड़ी है, वह केवल प्रायश्चित स्वरूप ही है। स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने का सौभाग्य मुझे नहीं प्राप्त हुआ, फिर भी स्वाधीनता के शुभ परिणाम मैंने भरपूर मात्रा में भोगे हैं।

शहीदों तथा क्रान्तिकारियों के बारे में जो २२-२३ चीज़ें मैंने निकलवायी हैं उन्हें मैं इतिहास का कच्चा मसाला (रॉ मैटीरियल) ही मानता हूँ।

इसे मैं आकस्मिक घटना ही मानता हूँ कि काकोरी केस सम्बन्धी कई ग्रंथ या विशेषांक मेरे द्वारा ही प्रकाश में आये। शहीद बिस्मिल की आत्मकथा, शहीद अशफ़ाक़ की हिन्दी-उर्दू जीवनियाँ तथा 'नर्मदा' के 'आज़ाद अंक' के सिवाय शहीद गणेशजी पर भी, जो काकोरी के क्रान्तिकारियों के सबसे बड़े समर्थक थे, मेरे द्वारा कई पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। शहीद आज़ाद की पूज्या माताजी तथा अशफ़ाक़ के भाई तथा भतीजे की पेंशनें कराने के लिए भी मुझे प्रयत्न करना पड़ा था।

पर जिस शहीद संग्रहालय की कल्पना मैं वर्षों से करता रहा हूँ, वह अभी तक स्थापित नहीं हो सका। यद्यपि छोटे-मोटे ३-४ संग्रहालय हैं तथापि केन्द्रीय संग्रहालय कोई भी नहीं। जब तक उसकी स्थापना विधिवत न हो जाय, तब तक बहुमूल्य सामग्री दिल्ली के राष्ट्रीय अभिलेखागार या नेहरू म्यूजियम में सुरक्षित करायी जा सकती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्री जगदीशचन्द्र माथुर की कृपा से क्रान्तिकारियों की जो वार्ताएँ रेडियो द्वारा प्रसारित हुई थीं उनके टेपों को वैज्ञानिक ढंग पर रक्षित करा लेना चाहिये ।

सशस्त्र क्रान्तिकारियों तथा सत्याग्रही क्रान्तिकारियों में हमें कोई भेद नहीं करना है। दोनों की ही कीर्तिरक्षा होनी चाहिये। अकेले चम्पारन ज़िले में ही ५० से ऊपर शहीद हुए थे, पर उनकी स्मृतिरक्षा के लिए कुछ भी प्रयत्न किया गया हो तो उसका हमें पता नहीं ।

शहीदों के मज़ारों पर मेले जुड़ने की बात कविता की दो पंक्तियों तक ही सीमित रह गयी है, कोई संगठित आयोजना उसके लिए तैयार नहीं की गयी । इस पवित्र कार्य को जनपदीय ढंग पर ज़िलेवार करना सुविधाजनक होगा । अल्मोड़ा ज़िले ने स्वाधीनता संग्राम में जो भाग लिया था उसका सांगोपांग विवरण भाई शान्तिलाल त्रिवेदी ने प्रकाशित करा दिया था। वह हमारे लिए एक आदर्श है। आगरे से भी एक ऐसी पुस्तक छपी थी। बिहार से एक ग्रंथ निकला था और अमर शहीद फुलैना प्रसाद श्रीवास्तव के बारे में भी एक पुस्तिका छपी थी ।

ज़रूरत इस बात की है कि हिन्दी, उर्दू, गुजराती, बँगला तथा अन्य राष्ट्र-भाषाओं में जो किताबें या पामफ्लेट छपी हों, उन्हें एक जगह इकट्ठा कर लिया जाये । स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों के अनुभव टेप कर लिये जायें। हमारे स्वाधीनता संग्राम का विस्तृत इतिहास तो आगे चलकर ही तैयार हो सकेगा, पर मौजूदा सामग्री को नष्ट होने से बचाना है ।

हमारे दो श्रेष्ठ कार्यकर्ता हाल ही में चल बसे — श्री चमनलाल आज़ाद और श्री बटुकनाथ अग्रवाल। उन दोनों ने बहुत काम किया था। कुन्दनलाल गुप्ता भी स्वर्ग-वासी हो गये ।

अमर शहीद भगतसिंहजी के छोटे भाई कुलतारसिंहजी ने अपने मंत्रित्व के थोड़े-से समय में ही बहुत काम कर दिखाया । इस पुण्यकार्य के लिए केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों में विशेष विभाग होने चाहिये ।

काकोरी केस के शहीदों की शहादत की अर्धशताब्दी मनाकर भाई रामकृष्ण खत्री और उनके साथियों ने जो कार्य किया है वह सर्वथा प्रशंसनीय है। मैं अपनी विनम्र शुभ कामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

फीरोज़ाबाद (आगरा)

बनारसीदास चतुर्वेदी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्तावना

☐ हेमवतीनन्दन बहुगुणा

भारत की आज़ादी की लड़ाई मात्र भारतीय भूभाग की लड़ाई नहीं थी। औद्योगिक सभ्यता की शक्ति और संस्कृति से परिपूरित एक ऐसी शक्ति का भारत मुक़ाबला कर रहा था, जिसका जन्म औद्योगिक क्रान्ति का प्रतिफल था। वस्तुतः भारत की आज़ादी की लड़ाई साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध संसार के सबसे बड़े भूभाग का युगान्तरकारी उद्घोष था।

इस लड़ाई ने अनेक योद्धा देखे। इस लड़ाई में अनेक शक्तियाँ उभरीं। इस लड़ाई में शस्त्र भी उठे और आत्मा की शक्ति ने हिंसात्मक आन्दोलन को जन्म दिया। बहादुरशाह ज़फ़र, रानी झाँसी, और तात्या टोपे से लेकर विभिन्न दशकों में, बढ़ते और घटते चाँद की तरह, यह लड़ाई उभरती रही, डूबती रही, लेकिन निरन्तर सूर्य की तरह अटल रही। उसका तेज, उसका प्रकाश, उसकी चकाचौंध साम्राज्यवाद को झकझोरती रही। देश बढ़ता गया। साम्राज्यवाद और उसके सहचर सामन्तवाद और उसकी औलाद धार्मिक मतभेद और जातिवाद पर भी प्रहार होता गया।

यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर १९१९ तक जब महात्मा गाँधी के नेतृत्व में भारतीय जनता ने स्वतंत्रता संग्राम को सत्याग्रह अर्थात सिविल नाफ़रमानी के द्वारा एक नया और विशिष्ट स्वरूप देकर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया, तब तक की पूरी अवधि में अर्थात लगभग ६२ वर्ष तक भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य से भारत के स्त्री और पुरुष, युवा-अवाल और वृद्ध हथियार-बंद टक्कर लेते रहे।

१८५७ के आन्दोलन के बाद सबसे पहले बंगाल में स्थान-स्थान पर गुप्त क्रान्तिकारी दलों का गठन हुआ था जिनमें शिवनाथ शास्त्री का दल (१८७६) प्रमुख था। उसी श्रृंखला में अलीपुर बम काण्ड (१९०८), पंजाब की ग़दर पार्टी का मोर्चा (१९१४-१७), प्रथम लाहोर षड़यंत्र (१९१५), मैनपुरी षड़यंत्र (१९२०), काकोरी ट्रेन काण्ड (१९२५), मेरठ षड़यंत्र (१९२९), दूसरा लाहोर षड़यंत्र (१९२९), चिटगाँव शस्त्रागार पर धावा (१९३०), जलालाबाद काण्ड (१९३०), मिदनापुर काण्ड (१९३२), ऊटकमण्ड बैंक काण्ड (१९३३) आदि के बाद १९४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान बलिया की महान क्रान्ति, १९४६ में नौसेना का विद्रोह आदि क्रान्तिकारी कार्यवाही हुई।

इस प्रकार १९१९ के बाद का स्वतंत्रता संग्राम अहिंसक जन-आन्दोलन और क्रान्तिकारियों के हथियारबंद प्रयासों की कहानी है। बाल गंगाधर तिलक, मदनमोहन मालवीय, गाँधी, नेहरू, पटेल बन्धु, अली बन्धु, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद, सुभाषचन्द्र बोस जैसे प्रबुद्ध नेताओं के नेतृत्व में स्वतंत्रता

संग्राम अनेक रूपरूपाय चलता रहा ।
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हर आन्दोलन का लक्ष्य साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने का रहा । साम्राज्यवाद और अधिक क्रूर उपायों से इन आन्दोलनों को दबाने की कुचेष्टा करता रहा । लेकिन भारत की विद्रोही आत्मा को दबा नहीं पाया । किसान, मज़दूर और अन्य शोषित, पीड़ित जनता में सबल अहिंसात्मक आन्दोलन ज़ोर पकड़ता गया । साथ ही यह भी सच है कि गाँधी युग में भी हथियारबंद क्रान्ति की चिनगारियाँ रह-रहकर अँधेरे में उजाला और सार्वभौम स्वाधीनता की झलक, हिन्दू-मुस्लिम एकता पर आधारित सर्वधर्म समभाव की मान्यता को चार चाँद लगाती हुई, भारत के स्वतंत्रता संग्राम को और अधिक पैना और गाँधीजी के नेतृत्व में चलने वाली लड़ाई को और अधिक सक्रिय व स्वाधीनता संग्राम के मौलिक स्वरूप के स्पष्ट चित्र को बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती रहीं । १८५७ की पहली आज़ादी की लडाई में और लगभग सभी सशस्त्र संघर्षों में भारतवासियों ने जाति और धर्म की नकली दीवारों को तोड़कर कन्धे से कन्धा मिलाकर जहाँ एक ओर अंग्रेज़ी साम्राज्य के दाँत खट्टे किये वहाँ दूसरी ओर भारत के भविष्य की नयी झलक, चेतना और प्रेरणा के इतिहास की रचना की ।

इस तरह अहिंसा और हिंसा पर आधारित दोनों आन्दोलन परिपूरक शक्ति बनकर चलते रहे । भारत आगे बढ़ता गया । यह सिलसिला १९३५ तक चला, जब अंग्रेज़ों ने प्रान्तीय स्वराज्य देना मंजूर कर लिया और जन-आन्दोलन कुछ ठण्डा पड़ गया । लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने पर जब अंग्रेज़ों ने भारत को बिना उसकी राय के ही युद्ध में शामिल कर लिया तो कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों ने इस्तीफ़ा दे दिया और कांग्रेस के सत्याग्रह आन्दोलन के साथ ही क्रान्तिकारी आन्दोलन भी फिर शुरू हो गया । उसी दौरान नेताजी सुभाषचन्द्र बोस तथा उनकी आज़ाद हिन्द फ़ौज ने अपनी शानदार और महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और आख़िरकार १९४७ की १५ अगस्त को भारत अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से आज़ाद हो गया । एक माने में भाप की सभ्यता की कुरूप देन साम्राज्यवादी और फाशिस्ट शक्ति का अन्त एक साथ हो गया ।

काकोरी अर्द्धशताब्दी समारोह के अवसर पर इस चेतनाशील युगान्तरकारी भारतीय बलिदान के प्रति हम नतमस्तक होकर देश की आज की समस्याओं को हल करने के लिए कृत-संकल्प होते हैं ।

भारतीय राष्ट्र के जीवन में साम्राज्यवाद से लड़ने वाली जुझारू शक्तियाँ आज भी हमारे पुरुषत्व, हमारे यौवन और हमारे राष्ट्र-प्रेम को रह-रहकर चुनौती दे रही हैं; क्रान्तिकारियों का वह इतिहास ललकार-ललकारकर आज की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विषमताओं को मिटाने के लिए हमें पुकार रहा है और एक नयी ललक के साथ वर्तमान को उन आदर्शों पर ढालने के लिए बुला रहा है । यदि हमने इस प्रकार का साहसिक उत्तर दे दिया तो भारत माँ के इन नौनिहालों के प्रति यही हमारी सच्ची श्रद्धांजलि हो सकती है ।

जय हिन्द !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्पादकीय

आज से लगभग एक-चौथाई शताब्दी पूर्व कुछ अमर शहीद क्रान्तिकारियों के संस्मरणों को **'यश की धरोहर'** के रूप में जनता को अर्पित करते हुए कहा गया था :

> "लोग अक्सर शिकायत करते हैं कि राजनीति के क्षेत्र में भ्रष्टाचार हो रहा है। हर तरफ स्वार्थपरता और अधिकार पदों की छीना-झपटी ही लोगों को दीख पड़ती है। एक व्यापक कलुष जनता के मन पर चढ़ता जाता है। ऐसी परिस्थिति में शहीदों के शौक़े-शहादत की याद में से एक चुल्लू भरकर इस कलुष को धोने का प्रयत्न करना व्यर्थ न होगा। स्वार्थ की विषैली वायु से मूर्च्छित जनता के मन को पावन बलिदानों के स्मरण वारि के छींटे लगने से कुछ होश तो आयेगा ही। शहीदों की याद हमें मनुष्यमात्र को स्वार्थ के पुतले समझने की भूल न करने देगी। वह हमारे हृदय में मनुष्यता की आशा को जागृत रखेगी। दम्भ और स्वार्थ के रोग से पीड़ित और खिन्न मन को पुन: स्वस्थ करने के लिए शहीदों के स्मृति-सरोवर में एक डुबकी लगाने से अधिक अच्छा उपचार और हो ही क्या सकता है?"

इसलिए देश-भर में मनाया जा रहा काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह और इस अवसर पर प्रकाशित किया जा रहा **'काकोरी शहीद स्मृति'** नामक यह ग्रंथ निश्चय ही और भी उपयोगी होगा।

राजनीति के क्षेत्र में स्वार्थ और पदों की छीना-झपटी और शक्ति के दुरुपयोगों के जो भयानक विस्फोट हाल में ही हुए हैं, और हो रहे हैं, उनकी दुर्गन्ध और कानों को बहरा करनेवाली कर्कश गूँज से सारे राष्ट्र का वातावरण आज दूषित बना हुआ है। परन्तु हमें हर्ष है कि सर्वसाधारण जनता को शहीदों की स्मृति से सदैव ऐसी दुर्गन्ध को दूर करनेवाली मधुर सुगन्ध और कानों को बहरा करनेवाली कर्कशता को निराकृत करनेवाला त्याग और बलिदान का ओजपूर्ण संगीत मिलता रहा है।

काकोरी के क्रान्तिकारी काण्ड के अमर शहीदों की अर्धशताब्दी पर समारोह करने और इस स्मृति ग्रंथ को प्रकाशित करने का यह उपक्रम आम जनता की इसी आशा और आकांक्षा से अनुप्राणित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीदों की शहादत के सुगन्धित संगीत के माधुर्य और ओज को क्या कोई कैसी भी स्मृति ग्रंथ पूरी-पूरी अपने में समाहित कर सकता है ? परन्तु सूर्य की पूजा में एक छोटा-सा दीपक तो जलाया ही जाता है। हमारा यह प्रयास इससे तनिक भी अधिक महत्त्व नहीं रखता, इस तथ्य के प्रति हम उतने ही जागरूक हैं जितने जागरूक होने की आशा हम अपने सहृदय पाठकों से विनयपूर्वक कर सकते हैं।

बस इतना ही कहकर हम इसे उन्हें समर्पित करते हैं, अपनी और उन सभी की ओर से, जिन्होंने इसके लिए शुभ कामनाएँ भेजीं, लेख, चित्र आदि दिये और इसके प्रकाशन के लिए आवश्यक साधन जुटाने और सर्वोपरि, इसको इतने अल्प समय में प्रकाशित कर देने के लिए आवश्यक व्ययभार उठाने और प्रबन्ध करने की महान तत्परता उदारता से दिखायी है।

इस सम्बन्ध में हम उन सभी के प्रति विनीत हार्दिक आभार प्रकट करते हैं जिनके शुभनाम शुभकामना सन्देशों, लेखों आदि के साथ यथास्थान आ ही गये हैं तथा जिनके उदार सहयोग और श्रम के बिना यह स्मृति ग्रन्थ प्रकाशित न हो पाता।

ग्रंथ के प्रस्तावना लेखक माननीय हेमवतीनन्दन बहुगुणा, पेट्रोलियम, रसायन तथा उर्वरक मंत्री, भारत सरकार के हम विशेष रूप से आभारी हैं, जिनके प्रेरक सहयोग से काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह तथा यह स्मृति ग्रंथ प्रकाश में आ सका।

काकोरी के अमर शहीदों ने फाँसी के तख़्ते पर खड़े होकर यह विश्वास प्रकट किया था कि उनके बलिदानों से भारत में ऐसी जनतंत्री स्वतंत्रता स्थापित होगी, "मानव के द्वारा मानव का शोषण जिसमें असंभव हो।" बस यह स्मरण कर लेने और उस स्मृति से शहीदों के सपने साकार करने की दिशा में आगे बढ़ने के लिए आवश्यक मनोबल और उत्साह के प्रेरणा-स्रोत के रूप में ही यह स्मृति ग्रन्थ है।

—डा. भगवानदास माहौर

६९/१ टौरिया नरसिंहराव
झाँसी (उत्तर प्रदेश)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह

जनतंत्री चुनावों की राजनीति में अधिकारपदों की संभवतः अनिवार्य-सी समझी जाने वाली स्वार्थपूर्ण छीना-झपटी से उत्पन्न अस्वस्थ वातावरण में निःस्वार्थ त्याग और बलिदानों की पावन स्मृतियाँ जनमन के लिए सदैव अभीष्ट स्वस्थता का संचार करती रही हैं। काकोरी के क्रान्तिकारी काण्ड के शहीदों की स्मृतियाँ उन प्रेरक बलिदानों की स्मृति में अपना विशेष स्थान रखती हैं। इसी भावना से प्रेरित होकर क्रान्तिकारी आन्दोलन के वे साथी जो उसमें शहादत प्राप्त करने से बालबाल बच रहे, कृतज्ञता से अपने शहीद साथियों का स्मरण करते रहे हैं और सर्वसाधारण जनता को भी उनकी याद दिलाने का उपक्रम करते रहे हैं।

इस सन्दर्भ में काकोरी काण्ड के मुख्य स्थान लखनऊ में उक्त काण्ड के क्रान्तिवीर श्री रामकृष्ण खत्री के निवास स्थान पर प्रति वर्ष १९ दिसम्बर को काकोरी के शहीदों के चित्रों के पदतल में बैठकर क्रान्तिकारी और कांग्रेसी, दोनों परस्पर पूरक आन्दोलनों के स्वतंत्रता सेनानी सम्मिलित रूप में उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलियाँ देते रहे हैं और स्वप्नों का ऐसा भारत बनाने के लिए अनवरत प्रयत्न करते रहने की अपनी प्रतिज्ञाएँ दुहराते रहे हैं जिसमें **"मनुष्य के द्वारा मनुष्य का उत्पीड़न असंभव हो।"**

स्वतंत्रता सेनानियों की उपेक्षा का वातावरण

सन् १९७७ के दिसम्बर में काकोरी के शहीदों की शहादत के पचास वर्ष पूरे हो रहे थे, अतः इस वर्ष समारोह एक बड़े रूप में मनाया जाये, यह सभी की भावना थी। फिर, इस बीच में आपातकालीन अत्याचारों और अनाचारों की अनिवार्य प्रतिक्रिया स्वरूप देश की राजनीति में, और जनता की राजनीतिक भावना में, जो विप्लव हुआ, उसमें उत्तेजनाओं का उबाल आवश्यक और उचित सीमाओं का अतिक्रमण कर कुछ इस हद तक पहुँचा कि हमारे कुछ सम्मान्य राजनीतिक नेताओं का मानसिक सन्तुलन भी डावाँडोल हो गया और स्वतंत्रता सेनानियों को, देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के एक चौथाई शताब्दी के बाद भी, यानी इतने अकृतज्ञतापूर्ण और अपेक्षापूर्ण विलम्ब के बाद भी, जो कुछ थोड़ा-बहुत सम्मान शासकीय स्तर पर दिया गया था, तथा जो पेंशनों आदि की सुविधाएँ उन्हें दी गयी थीं, उन्हें बन्द कर दिये जाने की बातें ज़ोरशोर से हुईं और कहीं-कहीं तो सरकारी स्तर पर व्यवहार में कुछ क़दम भी उठाये गये।

स्वतंत्रता सेनानियों में विक्षोभ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इससे उन सभी स्वतंत्रता सेनानियों में विक्षोभ होना स्वाभाविक था, जो ब्रिटिश साम्राज्यवादी शिकंजे से भारत को मुक्त करने के लिए संघर्षरत हुए थे। परिणामतः जगह-जगह पर स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के सम्मेलन हुए और देश के कल्याण के लिए सत्ता में उभरी इस अस्वस्थ प्रवृत्ति को रोकने के लिए संकल्प किये गये। एतदर्थ एक **'स्वतंत्रता संग्राम सेनानी संघर्ष समिति'** का गठन हुआ और उसका कार्यालय उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में ही रखा गया।

इस विक्षोभपूर्ण वातावरण में इसी संघर्ष समिति के तत्वावधान में ९ अगस्त, १९७७ को उत्तर प्रदेश के सभी भागों से आये स्वतंत्रता सेनानियों के प्रतिनिधियों की एक विशाल सभा हुई। ९ अगस्त का दिन इसलिए चुना गया कि देश के स्वाधीनता आन्दोलन के इतिहास में इसका दुहरा महत्त्व है। सन् १९४२ की अगस्त क्रान्ति से भी यह सम्बद्ध है तथा काकोरी का क्रान्तिकारी काण्ड भी इसी दिन सन् १९२५ में हुआ था।

इस सभा में निश्चय किया गया कि काकोरी के शहीदों की अर्धशताब्दी एक विराट समारोह के रूप में मनायी जाये, और एतदर्थ **'काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह समिति'** का गठन हुआ। इसके संयोजक काकोरी के क्रान्तिकारी श्री रामकृष्ण खत्री बनाये गये और कार्यालय उनके निवास-स्थान २, मेंहदी बिल्डिंग, गौतम बुद्ध मार्ग, लखनऊ में ही रखा गया। इसके सचिव पद का कार्यभार श्री बाबूलाल वर्मा ने सँभाला। सभी स्वतंत्रता सेनानियों का इसे पूर्ण सहयोग मिला, जिनमें विशेषतः उल्लेखनीय है उत्तर प्रदेश की स्वतंत्रता सेनानी कल्याण परिषद के निदेशक सचिव श्री राधेश्याम शर्मा का योगदान, जो इसके कोषाध्यक्ष बने।

इस समिति ने काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह को भव्य रूप में मनाये जाने के लिए एक अपील प्रकाशित की जिसके आरंभ में कहा गया कि "महाकवि कालिदास की उक्ति "**प्रतिबध्नाति हि नः श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः**" के अनुसार देश की आज़ादी की लड़ाई में शहीद होनेवालों को भूलने और उसमें जीवित बचे वृद्ध सेनानियों की उपेक्षा से राष्ट्र का महान अकल्याण होगा इसलिए हम सभी का कर्तव्य है कि ऐसा कुछ कभी न होने दे और जो ऐसा करने पर उतारू हों उनकी मानसिकता को अपनी संगठित शक्ति से बदलने का प्रयास करें। इसके अंत में यह संकल्प दुहराया गया :

न याद शहीदों की मिटेगी, न मिटेगी यह क़ौम
उस पै मर मिटने का क़ायम है अब भी अपना जौम।

उत्साहवर्धक प्रतिक्रिया

इस अपील का बड़ा ही आशाप्रद और उत्साहवर्धक परिणाम हुआ। सत्ता म उच्च पदों पर स्थित हमारे सम्मान्य नेताओं ने भी इसे अभीष्ट रूप में स्वीकार किया। सभी स्वतंत्रता सेनानियों और आम जनता का इसे पूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ। काकोरी शहीद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्धशताब्दी समारोह के संरक्षक हुए सत्ताधारी जनता पार्टी के अन्यतम वरिष्ठ नेता, उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्य मंत्री स्वनामधन्य श्री चन्द्रभानुजी गुप्त, और समारोह के स्वागताध्यक्ष होना सहर्ष सोत्साह स्वीकार किया केन्द्रीय पेट्रोलियम तथा रसायन मंत्री माननीय श्री हेमवतीनन्दन वहुगुणाजी ने और उसका उद्घाटन करना स्वीकार किया सुरक्षा मंत्री माननीय बाबू जगजीवन रामजी ने।

इस प्रकार यह समारोह लखनऊ में डी. ए. वी· कालेज के प्रांगण में १९७७ की १७ दिसम्बर को (अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी की शहादत की पुण्यतिथि पर) महान उत्साह के वातावरण में प्रारंभ हुआ और १९ दिसम्बर को (अमर शहीदों पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफ़ाक़उल्ला खाँ, और ठा. रोशनसिंह की शहादत की पुण्यतिथि पर) सम्पन्न हुआ।

समारोह का संक्षिप्त विवरण

डी. ए. वी. कालेज, लखनऊ के प्रांगण म १७ दिसंबर के प्रातःकाल बंगाल के विख्यात वयोवृद्ध क्रान्तिकारी नेता श्री पूर्णानन्द दासगुप्त ने राष्ट्रध्वज फहराकर समारोह का प्रारम्भ किया। इसमें कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से सूदूर उत्तर-पूर्व में मेघालय प्रदेश तक के समस्त भारत के स्वतंत्रता सेनानियों के प्रतिनिधियों ने वहुत बड़ी संख्या में भाग लिया।

सभी प्रमुख राजनीतिक दलों के स्वतंत्रता सेनानी इसमें सम्मिलित हुए:—फारवर्ड ब्लाक के श्री द्विजेन्द्रनाथ बोस (नेताजी सुभाष बोस के भतीजे), भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के वयोवृद्ध नेता श्री सोहनसिंह जोश, श्री रमेश सिनहा, कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के श्री शिव वर्मा आदि। शेरे-कश्मीर शेख़ अब्दुल्ला अन्य व्यस्तताओं के कारण उपस्थित न हो सके, तो उन्होंने अपने संदेश के साथ कश्मीर से एक प्रतिनिधि-मण्डल भेजा।

राज्यपाल द्वारा काकोरी के कीर्तिस्तम्भ का अनावरण

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम श्री गणपतराव देवराव तपासे ने लखनऊ के. जी. पी. ओ. पार्क में काकोरी काण्ड की स्मृति में निर्मित कीर्तिस्तम्भ का अनावरण किया। शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्होंने कहा कि यह कीर्तिस्तम्भ स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की देशभक्ति और उनकी कुर्बानी का और साथ ही अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला खाँ की शहादत के जुड़ जाने से हिन्दू-मुस्लिम एकता का भी प्रतीक बन गया है। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि यह कीर्तिस्तम्भ आनेवाली पीढ़ियों के लिए आदर्श और प्रेरणा का काम करेगा।

कीर्तिस्तम्भ अनावरण समारोह की अध्यक्षता माननीय श्री चन्द्रभानु गप्त ने की। उन्होंने क्रान्तिकारियों को विशेष रूप में सम्बोधित करते हुए कहा कि उनके शहीद साथियों का सपना तभी पूरा होगा जब देश में समाजवादी व्यवस्था भली भाँति

स्थापित हो जायेगी। इसके लिए हमें अपनी कुर्बानी देने के लिए सदैव उद्यत रहना चाहिये।
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खत्रीजी के मार्मिक संस्मरण

समारोह के संयोजक श्री रामकृष्ण खत्री ने काकोरी के अमर शहीदों के मार्मिक संस्मरण सुनाये। फाँसी पर जाते समय वे कितने निर्भीक थे, उत्साहपूर्ण थे और आशावान थे कि उनकी शहादत देश के स्वातंत्र्य के लिए कारगर होगी। इसका जो विवरण उन्होंने अपने भावनापूर्ण शब्दों में प्रस्तुत किया उससे राज्यपाल सहित प्रायः सभी उपस्थित लोगों के हृदय भावोद्वेलित हो गये और सभी आँखें गीली देखी गयीं।

इसी सभा में उत्तर प्रदेश के स्वायत्त शासन मंत्री श्री सत्यप्रकाश मालवीय ने घोषणा की कि अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला खाँ का एक स्मारक रोशनउद्दौला कचहरी में खड़ा किया जायेगा जहाँ अशफ़ाक़ को फाँसी की सज़ा सुनायी गयी थी। इस तथ्य की ओर श्री चन्द्रभानु गुप्त ने अपने वक्तव्य में ध्यान आकृष्ट किया था।

यह कीर्तिस्तम्भ लखनऊ विकास प्राधिकारण द्वारा उस स्थल पर बनाया गया है जहाँ आज से लगभग पचास वर्ष पहले अंग्रज़ों का एक रिंक थियेटर था और जिसमें अंग्रेज़ सरकार ने एक विशेष अदालत में प्रसिद्ध काकोरी षड्यंत्र केस चलाया था। इस कीर्तिस्तम्भ के पटल पर काकोरी काण्ड में फाँसी की सज़ा पानेवाले सभी अमर शहीदों के नामों के साथ उक्त केस के सब साथियों के नाम भी हैं जिन्हें विभिन्न अवधियों की कालेपानी तथा जेल की सज़ाएँ दी गयी थीं।

समारोह के प्रारम्भ में राज्यपाल महामहिम श्री गणपतराव देवराव तपासे, श्री चन्द्रभानु गुप्त, स्वायत मंत्री श्री सत्यप्रकाश मालवीय के साथ सभी सम्मिलित क्रान्तिकारियों ने भी कीर्तिस्तम्भ पर पुष्पमालाएँ चढ़ायीं।

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के अस्थिकलश तक पदयात्रा

अनावरण समारोह की कार्रवाई पूरी होने के पश्चात् महामहिम राज्यपाल, गुप्तजी आदि के साथ सभी वयोवृद्ध क्रान्तिकारी, जिनमें पं. परमानन्द, बाबा पृथ्वीसिंह आज़ाद, पूर्णानन्द दासगुप्त, शचीन्द्रनाथ बख्शी, मन्मथनाथ गुप्त, प्रेमकृष्ण खन्ना, रामकृष्ण खत्री, आदि सम्मिलित थे, राजसंग्रहालय तक पदयात्रा करके पहुँचे। वहाँ उन्होंने अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के अस्थिकलश पर भी फूल चढ़ाये जो वहाँ सुरक्षित रखा गया है।

महामहिम राज्यपाल, गुप्तजी और मालवीयजी ने इस पदयात्रा में भाग लेकर और उसमें औपचारिक सुरक्षा के नियमों को बाला-ए-ताक रखकर शहीद क्रान्तिकारियों के प्रति जिस अकृत्रिम श्रद्धा का प्रदर्शन किया उसने सभी उपस्थित क्रान्तिकारियों को बहुत ही प्रभावित किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम तपासे द्वारा
काकोरी स्तम्भ का अनावरण ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत सरकार के सुरक्षा मंत्री माननीय बाबू जगजीवन राम समारोह में भाषण करते हुए। उनके पीछे वयोवृद्ध क्रान्तिकारी (बाँयें से) श्री पूर्णानन्द दास गुप्त और पं. परमानन्द।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समारोह में मंच पर भारत सरकार के सुरक्षा मंत्री माननीय जगजीवन राम के साथ बैठे हुए (बाँयें) पं. परमानन्द तथा (दाँयें) श्री अब्दुल गनी दर। पीछे बाँयीं ओर खड़े हुए समारोह समिति के संयोजक श्री रामकृष्ण खत्री।

काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(लखनऊ : १७-१८-१९ दिसम्बर, १९७७)

समारोह में भाषण करते हुए (बाँयें चित्र में) भारत सरकार के पेट्रोलियम एवं रसायन मंत्री माननीय हेमवतीनन्दन बहुगुणा और (दाँयें चित्र में) जनता पार्टी के कोषाध्यक्ष एवं उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री चन्द्रभानु गुप्त। समारोह में सम्मिलित कुछ स्वतंत्रता सेनानी बीच के चित्र में दिखायी दे रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

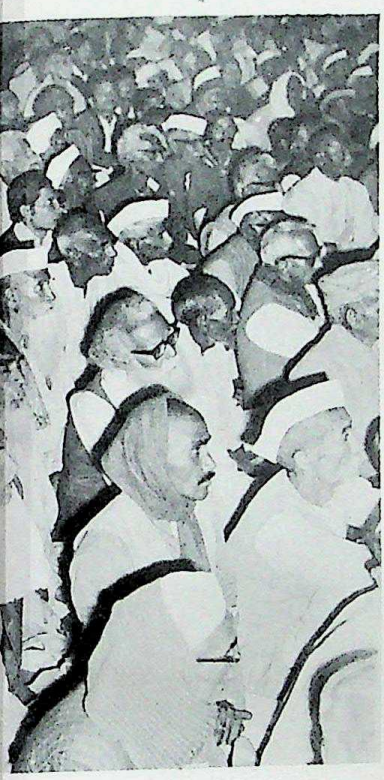

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वयोवृद्ध क्रान्तिकारी बाबा पृथ्वीसिंह आज़ाद
जिन्होंने भी समारोह में भाषण किया

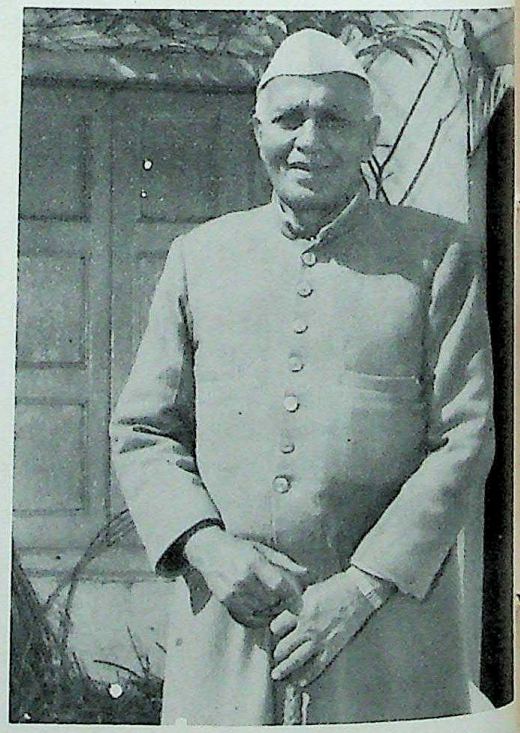

काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह समिति के
संयोजक क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री

बाबू जगजीवन राम द्वारा उद्घाटन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपराह्न में माननीय रक्षा मंत्री बाबू जगजीवन रामजी ने सम्मेलन के खुले अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए कहा : "देश की सरकार ज़रूर बदली, लेकिन समाज और उसके शासक अफ़सरों में कोई बदलाव नहीं हो पाया, अतएव देश के क्रान्तिकारियों को एक बार फिर आगे आकर मार्गदर्शन करना होगा।" उन्होंने शहीद क्रान्तिकारियों को 'युगपुरुष' बताया और विदेशी सत्ता को हटाने में उनके पराक्रम और बलिदानों की तुलना दधीचि के अस्थिदान से की। स्वतंत्रता सेनानियों को दी जानेवाली पेंशनों को बन्द करने के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि इन सेनानियों को जो पेंशनें दी गयी हैं उन्हें बन्द करने का अधिकार जनता ने किसी को नहीं दिया है। इस सम्बन्ध में बाबूजी ने यह भी बताया कि उन्होंने पं. जवाहरलाल नेहरू से स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को पेंशनें देने का जब आग्रह किया था तो नेहरूजी ने उनसे कहा था कि "त्याग और बलिदान का कोई मूल्य लगाया ही कैसे जा सकता है?" उत्तर में उन्होंने नेहरूजी से आग्रहपूर्वक कहा था कि "स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी हमारी आज़ादी के महल की नींव की ईंटें हैं। नींव की ईंटों में भी पानी देकर उन्हें सींचने की आवश्यकता होती है।" तब ये पेंशनें जारी की गयी थीं।

राजनीतिक स्थिति पर बोलते हुए जगजीवन रामजी ने कहा कि "पिछले ३० वर्षों में कुछ नहीं हुआ, ऐसी बात नहीं है। देश बहुत कुछ आगे बढ़ा, लेकिन देश की आत्मा कही जानेवाली नैतिकता का ह्रास हुआ। सरकार बदली, समाज नहीं बदल पाया। समाज वही, उसके शासक भी वही। जो मंत्री दबंग होता है वह तो इन शासकों अथवा अफ़सरों को दबाकर जनहित का काम करा ले जाता है; जिनमें ऐसा करने की क्षमता नहीं होती वे खुद दबकर उन्हें मनमानी करने की छूट दे देते हैं।" उन्होंने सम्मिलित वयोवृद्ध क्रान्तिकारियों की ओर मुड़कर कहा : "देश की गिरती हुई नैतिकता को आपका त्याग और बलिदान सँभाल सकता है, देश आपसे यही अपेक्षा करता है।"

बहुगुणाजी का स्वागत भाषण

इस सम्मेलन में देश के कोने-कोने से आये हुए स्वतंत्रता सेनानियों का स्वागताध्यक्ष पद से स्वागत करते हुए केन्द्रीय पेट्रोलियम तथा रसायन मंत्री माननीय हेमवतीनन्दन बहुगुणाजी ने तो यहाँ तक कहा कि अगर उत्तर प्रदेश की सरकार ने स्वतंत्रता संग्राम के सैनिकों को मिलने वाली पेंशनों के सम्बन्ध में कोई विपरीत निर्णय किया तो उससे लड़ना पड़ेगा।

इस बात पर कि स्वतंत्रता सेनानियों की आर्थिक स्थिति की जाँच-पडताल करके उन्हें पेंशनें दी जाती हैं, बहुगुणाजी ने सुरक्षा मंत्रीजी की ओर मुड़कर कहा कि फ़ौज के सिपाहियों को तो बिना उनकी आर्थिक स्थिति देखे ही पेंशनें दी जाती हैं; परन्तु उत्तर प्रदेश की पिछली सरकारों ने २०-२५ हज़ार स्वतंत्रता सैनिकों को जो पेंशनें दी हैं, आज की सरकार उनकी छानबीन करने पर तुल गयी है, वह उनके खेत-खलिहान ढूँढ़कर उनके प्रमाणपत्रों की माँग कर रही है और पेंशनें वापस करने की बात भी चल पड़ी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बहुगुणाजी ने कहा कि हमारे देश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी यहाँ आज़ादी के लिए लड़ी गयी अनोखी लड़ाई और विभिन्न विचारों के संगम के ज्वलंत प्रतीक हैं। समाज बदलने का संग्राम अभी भी लड़ा जाना है जिसमें स्वतंत्रता सग्राम के इन सेनानियों को वर्तमान राजनीतिक दलों को सही रास्ता दिखाना है। इसी से इन स्वतंत्रता सेनानियों के जीवन में जो रिक्तता आ गयी है वह भर सकेगी। उन्होंने आगे कहा कि स्वराज्य आने पर स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों की सूची बनाने का काम अधिकारियों पर ही छोड़ दिया गया, जिसके दुष्परिणाम भी सामने आये। 'तेरा-मेरा' की राजनीति चल पड़ी। अब बहुतों के दिमाग़ में फिर गड़बड़ी आ गयी है जो पेंशनों को वापस माँग रहे हैं। बहुगुणाजी ने आशा व्यक्त की कि यह सम्मेलन वर्तमान संदर्भ पर विचार कर समाज को शोषण से मुक्त कराने में सहायक होगा। जिन क्रान्तिकारियों ने अपने खून से आज़ादी की लड़ाई में योगदान दिया है उन्हें उसे सही दिशा देनी चाहिये।

श्री चन्द्रभानु गुप्त द्वारा उद्बोधन

श्री चन्द्रभानु गुप्त काकोरी षड्यंत्र केस म अभियुक्तों की ओर से वकील थे। वे आज शासक जनता पार्टी के वयोवृद्ध वरिष्ठ नेता भी हैं। जब वह मंच पर आये तो सभी क्रान्तिकारियों और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों ने 'ज़िन्दाबाद' के नारों से उनका स्वागत किया।

गुप्तजी ने सम्मेलन के आयोजकों को बधाई दी और सामाजिक शोषण के विरुद्ध क्रान्तिकारियों से संघर्षरत होने की अपेक्षा की और सामाजिक विषमता दूर करने में सहायक होने के लिए उनका आह्वान किया। उन्होंने भी उन्हें मिलनेवाली पेंशनें बन्द किये जाने का कड़ा विरोध किया।

वयोवृद्ध क्रान्तिकारी नेताओं का उद्बोधन

इस त्रिदिवसीय सम्मेलन में सम्मिलित स्वतंत्रता सेनानियों को श्री पूर्णानन्द दासगुप्त, पं. परमानन्द, बाबा पृथ्वीसिंह आज़ाद जैसे वयोवृद्ध क्रान्तिकारी नेताओं ने भी सम्बोधित किया। इन्होंने सम्मेलन के विभिन्न अधिवेशनों की बारी-बारी से अध्यक्षता भी की जिसमें काकोरी काण्ड के सर्वश्री शचीन्द्रनाथ बख्शी, मन्मथनाथ गुप्त, प्रेमकृष्ण खन्ना, रामकृष्ण खत्री, अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद और सरदार भगतसिंह के केस के साथी श्री जयदेव कपूर, श्री शिव वर्मा आदि ने भी समाजवाद लाने के लिए संघर्ष में साथियों को सक्रियता से योगदान करने के लिए प्रेरित किया।

सभी ने स्वतंत्रता सेनानियों के संगठनों की एकता पर बल दिया और एतदर्थ एक एकता समिति का निर्माण हुआ जिसमें उपर्युक्त वरिष्ठ नेताओं के अतिरिक्त विभिन्न प्रदेशों के भी अन्य लब्धप्रतिष्ठ स्वतंत्रता सेनानियों को रखा गया। सभी ने देश में समाजवाद की स्थापना के लिए संघर्ष में अपना शेष जीवन लगा देने के अपने संकल्प को दुहराया और सभी क्रान्तिकारियों और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों को भी इसमें योगदान करने को ललकारा। इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव* सर्वसम्मति से पारित किया गया।

---

* इस प्रस्ताव को समग्र रूप में परिशिष्ट में दिया गया है।

काकोरी केस के वकीलों और क्रान्तिकारियों का सम्मान

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri Foundation, Chandigarh

सम्मेलन में काकोरी षड़यंत्र केस के बचाव पक्ष के वकीलों––श्री चन्द्रभानु गुप्त और श्री कृपाशंकर हजेला––का विशेष रूप से सम्मान किया गया । काकोरी काण्ड के जीवित क्रान्तिकारियों––सर्वश्री शचीन्द्रनाथ बख्शी, मन्मथनाथ गुप्त, प्रेमकृष्ण खन्ना, रामकृष्ण खत्री––का भी सम्मान किया गया। सभी सम्मानित व्यक्तियों को रक्षा मंत्री बाबू जगजीवन रामजी ने माल्यार्पण किया और उन्हें रेशमी चादरें भेंट कीं । शहीद रोशनसिंह के पौत्र जगदीशसिंह और शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ के भतीजे श्री इश्तियाक़ का भी इसी भाँति सम्मान किया गया ।

उत्साह और उल्लास के वातावरण में समाजवाद लाने के संकल्प के साथ सम्मेलन की समाप्ति राष्ट्रगान से हुई ।

कवि सम्मेलन और स्वतंत्रता संग्राम प्रदर्शनी भी

इस अवसर पर उत्तर प्रदेश राजकीय अभिलेखागार द्वारा स्वतंत्रता संग्राम से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण अभिलेखों की एक प्रदर्शनी भी की गयी जिसका उद्घाटन पेट्रोलियम तथा रसायन मंत्री माननीय हेमवतीनन्दन बहुगुणाजी ने किया । इसमें १८५७ के क्रान्तिकारी सिपाहियों का झंडा गीत, प्रदेश के विभिन्न ज़िलों के १८५७ की क्रान्ति से सम्बन्धित अभिलेख, नाना साहब पेशवा की गिरफ्तारी के लिए एक लाख रुपये के इनाम की अंग्रेज़ी सरकार की घोषणा, ताँत्या टोपे, राव साहब तथा फ़ीरोज़शाह, मौलवी लियाकत अली आदि से सम्बन्ध रखनेवाले महत्त्वपूर्ण अभिलेख, जलियाँवाला बाग़ काण्ड, ख़िलाफ़त आन्दोलन, अलीबन्धुओं की माताजी का सन्देश, मैनपुरी षड़यंत्र, चौरीचौरा काण्ड, काकोरी षड़यंत्र विवरण, अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल,' अशफ़ाक़-उल्ला ख़ाँ, रोशनसिंह तथा राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी के चित्र, अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद द्वारा लिखित पत्र, उनके अन्य दुर्लभ चित्र, अलफ्रेड पार्क, उसमें उनके पुलिस से संघर्ष और वीरगति के चित्र, नेताजी सुभाष बोस की महारानी झाँसी रेजिमेण्ट की सलामी, आज़ाद हिन्द फ़ौज द्वारा प्रकाशित बुलेटिन के पृष्ठ, स्वतंत्र भारत में पार्लियामेण्ट की पहली बैठक तथा मंत्रिमण्डल के शपथ ग्रहण आदि के चित्र और विवरण प्रदर्शित किये गये ।

एक रात स्वतंत्रता सेनानियों ने अपना एक कवि सम्मेलन भी किया, जिसमें स्वतंत्रता सेनानी कवियों ने अपनी कविताओं का पाठ किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी का क्रान्तिकारी काण्ड : एक झलक

"सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए-क़ातिल में है।"

९ अगस्त १९२५ : चतुर्दिक निराशा का घना अन्धकार। सहसा पराधीनता के बादलों को बिजली की तरह चीरकर देश के सपूत सर पर कफन बाँधे सामने आये। काकोरी में ट्रेन रोककर उन्होंने दिन-दहाड़े अंग्रेज़ सरकार का ख़ज़ाना लूट लिया और ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी, जो उस ज़माने की प्रथम सैनिक शक्ति मानी जाती थी। ख़ज़ाना लूटनेवाले ये क्रान्तिवीर देश की विख्यात क्रान्तिकारी संस्था 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी' के सदस्य थे।

ख़ज़ाना लूटनेवाले क्रान्तिवीर

१. अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' (फाँसी : गोरखपुर : १९-१२-१९२७)
२. अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ वारसी (फाँसी : फैज़ाबाद : १९-१२-१९२७)
३. अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी (फाँसी : गौण्डा : १७-१२-१९२७)
४. अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद (फरार : २७-२-१९३१ को अल्फ्रेड पार्क इलाहाबाद में पुलिस से संघर्ष में बलिदान)
५. श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी (आजन्म क़ैद)
६. श्री मन्मथनाथ गुप्त (१४ वर्ष क़ैद)
७. श्री मुकुन्दलाल गुप्त 'भारतवीर' (आजन्म क़ैद)
८. श्री केशवचन्द्र चक्रवर्ती (पकड़ नहीं गये)
९. श्री मुरारी शर्मा (पकड़े नहीं गये)
१०. श्री बनवारीलाल (इकबाली : दो वर्ष क़ैद)

काकोरी काण्ड मुकदमे में सजा-प्राप्त अन्य क्रान्तिकारी

१. अमर शहीद रोशनसिंह (फाँसी : मलाका, इलाहाबाद : १९-१२-१९२७)
२. श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल (आजन्म क़ैद)
३. श्री जोगेशचन्द्र चटर्जी (आजन्म क़ैद)
४. श्री गोविन्दचरण कर (आजन्म क़ैद)
५. श्री विष्णुशरण दुबलिश (१० वर्ष क़ैद नैनी जेल केस में आजन्म क़ैद)
६. श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य (१० वर्ष क़ैद)
७. श्री रामकृष्ण खत्री (१० वर्ष क़ैद)
८. श्री राजकुमार सिनहा (१० वर्ष क़ैद)
९. श्री प्रेमकृष्ण खन्ना (५ वर्ष क़ैद)
१०. श्री रामदुलारे त्रिवेदी (५ वर्ष क़ैद)
११. श्री भूपेन्द्रनाथ सान्याल (५ वर्ष क़ैद)
१२. श्री रामनाथ पाण्डे (३ वर्ष क़ैद)
१३. श्री प्रणवेशकुमार चटर्जी (४ वर्ष क़ैद)

बैरिस्टर बी. के. चौधरी (कलकत्ता), श्री चन्द्रभान गुप्त, श्री गोविंद बल्लभ पन्त, श्री मोहनलाल सक्सेना तथा श्री कृपाशंकर हजेला वकीलों ने अभियुक्तों की निःशुल्क पैरवी की थी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिन पर केस चला परन्तु जो अभियोग से मुक्त किये गये

१. श्री हरगोविन्द (लखनऊ)
२. श्री शचीन्द्रनाथ विश्वास
३. श्री दामोदर स्वरूप सेठ (बीमारी के कारण छोड़े गये और फिर उन पर मुकदमा नहीं चलाया गया)

जो केस के सम्बन्ध में गिरफ्तार हुए परन्तु बाद में छोड़ दिये गये

१. श्री मदन लाल (शाहजहाँपुर)
२. श्री देवदत्त भट्टाचार्य (बनारस)
३. श्री इन्द्रविक्रम सिंह (बनारस)
४. श्री वीरभद्र तिवारी
५. श्री शीतला सहाय (इलाहाबाद)
६. श्री चन्द्रधर जौहरी (आगरा)
७. श्री चन्द्रभाल जौहरी (आगरा)
८. श्री बाबूराम (एटा)
९. श्री ज्योतिशंकर (इटावा)
१०. श्री हरनाम सुन्दर (लखीमपुर)
११. श्री मोहनलाल गौतम
१२. श्री. भैरों सिंह (हरदोई)
१३. श्री गोपीनाथ (कानपुर)
१४. श्री शरच्चन्द्र गुह
१५. श्री कालिदास बोस (बंगाल)

श्री कुन्दनलाल गुप्त को पुलिस पकड़ नहीं पायी ।

जिन्होंने अप्रूवर (सरकारी इक़बाली गवाह) बनाकर माफी प्राप्त की :

१. बनारसीलाल (शाहजहाँपुर)
२ इन्दुभूषण मित्र (शाहजहाँपुर)

श्री शिवचरणलाल (मथुरा-आगरा) पर से मुकदमा रहस्यमय संदेहास्पद समझे गये कारणों से उठा लिया गया ।

मुकदमा १० महीने चला और उस पर सरकार का १० लाख रुपया ख़र्च हुआ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

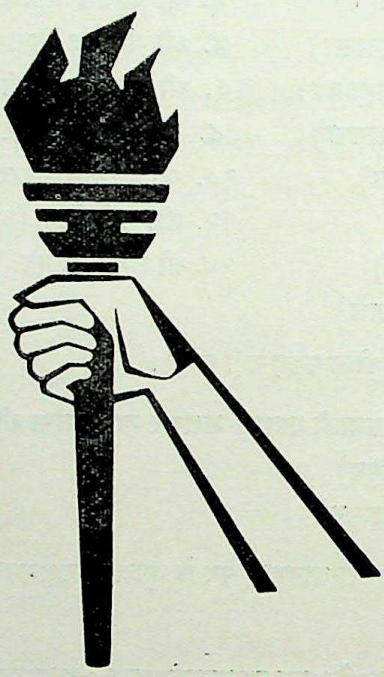

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल'

☐ काकोरी के क्रान्तिवीर प्रेमकृष्ण खन्ना

अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' भारतीय सशस्त्र क्रान्तिकारी प्रयास के इतिहास के 'काकोरी काल' में दल के सर्वप्रमुख सैनिक नेता थे और काकोरी केस में उन्हें सशस्त्र क्रान्तिकारी देशभक्ति का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार 'प्राणदण्ड' मिला था।

उनके पूर्वज मध्य प्रदेश के तोमरघार के निवासी थे और दिनों के फेर से ग्रस्त होकर चरम सीमा की निर्धनता में उत्तर प्रदेश के नगर शाहजहाँपुर में आ बसे थे। उनके पिता का नाम पं. मुरलीधरजी था। रामप्रसादजी का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष की एकादशी संवत् १९५४ विक्रमी में हुआ था। उन्होंने बचपन में ही आर्यसमाजी शिक्षा पायी थी। उस समय की आर्यसमाजी शिक्षा न केवल सामाजिक रूप में अपितु राजनीतिक रूप में भी क्रान्ति की शिक्षा थी। अतः युवा होने के पूर्व ही उनका सम्पर्क तत्कालीन सशस्त्र क्रान्तिकारियों से हो गया था।

पं. गैंदालाल दीक्षित के नेतृत्व में क्रान्ति प्रयास के परिणामतः जो मैनपुरी षड़यंत्र केस चला उसमें रामप्रसादजी फरार हो गये थे और अन्त तक पुलिस की पकड़ में नहीं आये। जब सरकार ने उक्त षड़यंत्र केस के संबंध में माफी की घोषणा कर दी तभी वे प्रकट हुए और पुनः सशस्त्र क्रान्ति के प्रयास में लग गये। काकोरी षड़यंत्र केस में अंग्रेज़ सरकार ने उन्हें फाँसी का सज़ा दी। १९ दिसम्बर सन् १९२७ को उन्हें गोरखपुर जेल में फाँसी दे दी गयी।

पं. रामप्रसाद एक अच्छे लेखक भी थे और शायरी भी करते थे। देश के नौजवानों को क्रान्ति प्रयास में भाग लेने को प्रेरित करने के लिए उन्होंने कई बहुत अच्छी किताबें लिखीं और बड़ा आर्थिक कष्ट उठाकर उन्हें प्रकाशित कराया तथा वितरित किया और बड़ी आर्थिक हानि उठायी। ये पुस्तकें थीं : (१) **बोलशेविकों की करतूतें**, (२) **मन की लहर**, (३) **कैथेराइन**, (४) **स्वदेशी रंग**, (५) **क्रान्तिकारी जीवन** (जो प्रकाशित न हो सकी)। कई अंग्रेज़ी और बँगला की पुस्तकों का अनुवाद भी किया (ये भी प्रकाशित न हो सकीं)। 'राम' तथा 'अज्ञात' नाम से कई मासिक पत्रिकाओं में उन्होंने लेख भी लिखे जो बड़े चाव से पढ़े गये।

लेखक के रूप में रामप्रसादजी की सर्वोत्कृष्ट कृति '**आत्मकथा**' है। इसे उन्होंने फाँसी की कोठरी में फाँसी पर झूलने के तीन दिन पहले तक अधिकारियों की नज़र बचाकर लिखा था और उसे तीन खेपों में, एक सहानुभूति रखनेवाले जेल वार्डर के हाथ, गोरखपुर से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशित होनेवाले सुप्रसिध्द काँग्रेसी पत्र **'स्वदेश'** के सम्पादक श्री दशरथप्रसाद द्विवेदी के पास भेजा था। अन्ततः इस जीवनी की यह पाण्डुलिपि अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी (**'प्रताप'** कानपुर के यशस्वी सम्पादक) के पास पहुँची, जिन्होंने समयानुरूप सुसंपादित करके उसे **'काकोरी के शहीद'** नामक पुस्तक में छापकर प्रकाशित किया। वह पुस्तक सरकार द्वारा ज़ब्त कर ली गयी। इसे सम्पादकाचार्य डा. बनारसीदास चतुर्वेदी ने अब आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली से **'शहीद ग्रंथमाला'** में प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों डा. भगवानदास माहौर द्वारा लिखित 'भूमिका', श्री मन्मथनाथ गुप्त द्वारा लिखित 'परिशिष्ट', और श्री शिव वर्मा द्वारा लिखित रामप्रसादजी की माता की व्यथा-कथा के रूप में बहुत ही मर्मस्पर्शी 'मेरी डायरी का एक पृष्ठ' से समन्वित प्रकाशित कराया।'*

चतुर्वेदीजी ने इसे संसार की सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा कहा है क्योंकि यह एक शहीद द्वारा फाँसी की छाया में अतुलनीय उत्साह तथा साहस से लिखी गयी है, और उन्होंने इसकी तुलना चेकोस्लोवाकिया के नाज़ी अत्याचारों के शहीद फूचिक की आत्मकथा से की है जो जेल में चोरी-छिपे रात्रि में लिखी जाकर बाहर भेजी गयी थी।

जब रामप्रसादजी फाँसी देने के लिए ले जाये जा रहे थे तो 'वन्देमातरम्', 'भारतमाता की जय' कहते हुए वह बड़े उत्साह से उठ खड़े हुए और गा उठे :

मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे
बाक़ी न मैं रहूँ न मेरी आरज़ू रहे।
जब तक कि तन में जान जिगर में लहू रहे
तेरा ही ज़िक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे॥

फाँसीघर के दरवाज़े पर उन्होंने नारा लगाया था : "आइ विश दि डाउनफ़ाल आफ़ दि ब्रिटिश एम्पायर !" (मैं ब्रिटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हूँ !)

अमर शहीद रामप्रसादजी की यह इच्छा तो भारत में २० वर्ष के अन्दर ही पूरी हो गयी और १५ अगस्त १९४७ को स्वराज्य की घोषणा हो गयी। आज उनकी शहादत के दिन उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमें याद रखना है कि उनके सपने का ऐसा जनतंत्रीय शासन अभी तक यहाँ नहीं स्थापित हो पाया "जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण सम्भव न हो।"

---

* श्री शिव वर्मा की डायरी का पृष्ठ और अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' के हिन्दी-उर्दू काव्य के कुछ नमूने तथा उनकी आत्मकथा के कुछ अंश भी परिशिष्ट में दिये गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी

☐ श्री बाबूलाल वर्मा

(संत्री, काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह समिति, लखनऊ)

अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी का जन्म जून १९०१ में बंगाल के पवना ज़िले के भड़गा ग्राम में हुआ था। इनके परिवार के लोग १९०९ में बनारस में आ बसे थे अतः वहीं इनकी शिक्षा-दीक्षा हुई।

राजेन्द्र बाबू श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल के सम्पर्क में आकर क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हुए। सान्याल बाबू बंगाल के 'युगान्तर' दल से सम्बद्ध थे। बंगाल का दूसरा क्रान्तिकारी दल 'अनुशीलन' नाम का था। उत्तर प्रदेश में ये दोनों दल मिल गये और जो सम्मिलित दल बना उसका नाम हुआ 'हिन्दुस्तान प्रजातंत्र संघ'। राजेन्द्र बाबू इस संघ के बनारस के ज़िला संगठनकर्ता नियुक्त हुए। वह उसकी प्रान्तीय समिति के भी सदस्य थे जिसमें विष्णुशरण दुबलिश, सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य तथा पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' भी थे।

काकोरी ट्रेन काण्ड में जो दस क्रान्तिकारी सम्मिलित हुए थे उनमें राजेन्द्र बाबू भी थे। बाद में वह कलकत्ता में बम बनाने की शिक्षा प्राप्त करने और बंगाल के क्रान्तिकारी दलों से सम्पर्क साधने के लिए गये थे। वहाँ वह दक्षिणेश्वर बम फैक्टरी काण्ड में गिरफ्तार कर लिये गये। उस समय वह एम.ए. के छात्र थे। उस केस में वहाँ उन्हें दस वर्ष की सज़ा हुई।

जब काकोरी काण्ड वाला राजनीतिक क्रान्तिकारी षड़यंत्र केस चला तो उसमें भी वह अभियुक्त बनाये गये और उन पर भी भारतीय दण्ड विधान की धारा १२१-ए(सम्राट के विरुद्ध युद्ध का षड़यंत्र),१२०-बी (अन्यथा गैरकानूनी षड़यंत्र, अपराध करने के लिए) और ३९६ (हत्या सहित डकैती) का अभियोग लगाया गया था। उन्हें इसमें मृत्युदण्ड दिया गया।

अवध चीफ़ कोर्ट में की गयी अपील के फैसले में जजों ने इन्हें दल में पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' के बाद दूसरे स्थान का प्रमुख अपराधी माना था और स्पेशल सेशन जज द्वारा दिये गये प्राणदण्ड को उचित ठहराते हुए उसकी पुष्टि की थी।

काकोरी के शहीदों में राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को अन्य तीन शहीदों से दो दिन पूर्व यानी १७ दिसम्बर १९२७ को ही गोण्डा जेल में फाँसी दे दी गयी थी। ऐसा क्यों किया गया, यह निश्चित रूप से आज तक ज्ञात नहीं हो सका। एक धारणा यह है कि अधिकारियों को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहीं से यह खबर मिली थी कि क्रान्तिकारी दल उनको जेल से निकाल ले जाने का प्रयास कर रहा है, अतः ऐसी किसी संभावना से बचने के लिए ही उन्हें अन्य सब से दो दिन पूर्व ही फाँसी दे दी गयी थी ।

१४ दिसम्बर को, फाँसी के दिन से तीन दिन पूर्व, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी ने जेल से अपने पत्र में लिखा था :

> कल मैंने सुना कि प्रीवी कौन्सिल ने मेरी अपील अस्वीकार कर दी। आप लोगों ने हम लोगों की प्राण-रक्षा के लिए बहुत कुछ किया, कुछ उठा नहीं रखा, किन्तु मालूम होता है कि देश की बलिवेदी को हमारे रक्त की आवश्यकता है। मृत्यु क्या है? जीवन की दूसरी दिशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं। इसलिए मनुष्य मृत्यु से भय और दुःख क्यों माने? यह तो नितान्त स्वाभाविक अवस्था है। उतनी ही स्वाभाविक जितना प्रातःकालीन सूर्य का उदय होना। यदि यह सच है कि इतिहास पलटा खाता है तो मैं समझता हूँ, हमारी मृत्यु व्यर्थ न जायेगी ।
>
> सबको मेरा नमस्कार--अन्तिम नमस्कार !
>
> आपका
>
> राजेन्द्र

अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी की मृत्यु व्यर्थ नहीं हुई। वह काकोरी काण्ड मे शहीद होने वाले एक छात्र थे। उनकी शहादत छात्रों को स्वतंत्रता के अत्यन्त कठिन पथ पर चलते रहने को प्रेरित करती रही है और तब तक प्रेरित करती रहेगी जब तक भारत में केवल जनतंत्री राजनीतिक स्वतंत्रता ही नहीं, ऐसी आर्थिक स्वतंत्रता और व्यवस्था भी स्थापित न हो जाये जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण को कोई स्थान न हो।

फाँसी के लिए चलने के पूर्व आपने स्नान और गीतापाठ के साथ कुछ व्यायाम भी किया तो अंग्रेज़ ज़िला मजिस्ट्रेट को आश्चर्य हुआ। उससे रहा न गया और उसने राजेन्द्र बाबू से पूछ ही लिया : "आपने आगे आने वाली घटना के लिए अपने आपको तैयार करने के लिए जो स्नान करके अपने 'धर्मग्रंथ का पाठ किया वह तो ठीक है, परन्तु मैं यह नहीं समझ पाया कि इस अवसर पर आपने जो व्यायाम किया उसकी क्या उपयोगिता है।"

राजेन्द्र बाबू ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया : "मैं हिन्दू हूँ, और मेरा विश्वास है कि मैं अपने देश की आज़ादी के लिए पुनः दूसरा शरीर प्राप्त करने जा रहा हूँ। वह शरीर स्वस्थ और बलिष्ठ हो, यही मेरी कामना है। इसीलिए मैंने व्यायाम भी किया और मुझे विश्वास है कि मैं स्वस्थ और बलिष्ठ शरीर में अपने देश को स्वतंत्र करने के लिए पुनः जन्म लूँगा। मैं आशा करता हूँ कि एक भले अंग्रेज़ की तरह आप मेरा यह अन्तिम संदेश मेरे देशवासियों को पहुँचा देंगे।" ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद राजेन्द्रनाथ लाहिडी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

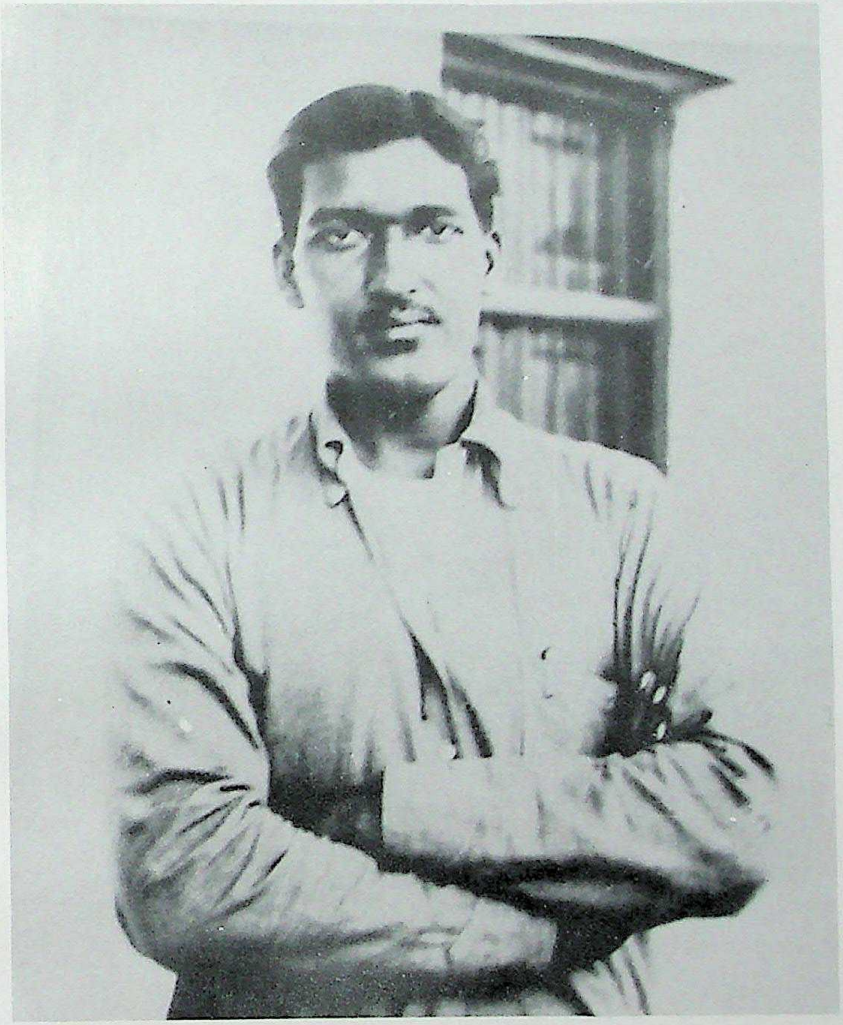

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ
(फाँसी के पहले)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ

☐ श्री कृपाशंकर हजेला, एडवोकेट

[८५ वर्षीय वयोवृद्ध श्री कृपाशंकर हजेला लखनऊ के एक प्रतिष्ठित नागरिक हैं। आप लखनऊ विश्वविद्यालय के विधि (ला) विभाग के १९२२ से १९४७ तक २५ वर्ष रीडर रहे। आप बड़े स्नेह से सर्वश्री चन्द्रभानु गुप्त (भूतपूर्व मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश), बरकतुल्ला (भूतपूर्व मुख्य मंत्री, राजस्थान), शंकरदयाल शर्मा, भूतपूर्व केन्द्रीय मंत्री और कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष को स्नेह-पुलकित होकर अपने प्रिय शिष्यों के रूप में याद करते हैं, जिनमें कई हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के जज भी बने। आप स्वयं भी राजस्थान के एडवोकेट जनरल और विधि महाविद्यालय के प्रिंसिपल तथा उत्तर प्रदेश के स्थायी विधि सलाहकार के पद पर काम कर चुके हैं।

पूरक काकोरी षड़यंत्र केस में अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ ने आपको अपना वकील चुना था। उनके अतिरिक्त किसी अन्य को अपना वकील स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। इस पूरक काकोरी षड़यंत्र केस में अन्य अभियुक्त श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी थे जिनके वकील श्री चन्द्रभानु गुप्त थे। हजेलाजी ने अशफ़ाक़ की फाँसी के एक दिन पहले उनसे फ़ैज़ाबाद जेल में मुलाकात की थी।

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला के सम्बन्ध में उनके भावपूर्ण और उत्साहप्रेरक उद्गार यहाँ प्रस्तुत हैं, जो उन्होंने ११ नवम्बर, १९७७ को व्यक्त किये। अग्रिम भूमिका के रूप में हम अमर शहीद अशफ़ाक़ के विषय में यहाँ नीचे लिखी बातों का उल्लेख कर देना आवश्यक समझते हैं।

देश के हित में फाँसी पर शहीद होने वाले मुसलमानों में अमर शहीद अशफ़ाक़ का नाम हमेशा सूरज की तरह चमकता रहेगा। उनसे पहले भी अनेक मुसलमानों ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लिया था। परन्तु क्रान्तिकारी इतिहास के काकोरी युग के वे एक अकेले और विशिष्ट मुसलमान शहीद हुए।

वह शाहजहाँपुर के रहनेवाले थे और उनका ख़ानदान वहाँ के

रईसों में गिना जाता था। तैराकी, घुड़सवारी, क्रिकेट, हाकी, बन्दूक से निशानबाज़ी में वह अच्छी महारत रखते थे। उनके जैसे सुडौल खूबसूरत नौजवान कम ही नजर आते हैं। शाहजहाँपुर में वह बचपन से ही पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' के दोस्त थे। जब मैनपुरी षड़यंत्र में फरारी जीवन से रामप्रसादजी प्रकट हुए तो अशफ़ाक़ ने उनके साथ क्रान्तिकारी कामों में भाग लेने की इच्छा प्रकट की। पहले तो रामप्रसादजी उन्हें यों ही टालते रहे परन्तु बाद में उनका दृढ़ आग्रह देखकर उन्होंने उन्हें क्रान्तिकारी दल में शामिल कर लिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अशफ़ाक़ एक अच्छे शायर भी थे। उनकी शायरी के कुछ नमूने तथा उनके सम्बन्ध में अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' के प्रेरक उद्गारों को भी हम परिशिष्ट में प्रकाशित कर रहे हैं। —सं.]

जब ९ अगस्त, १९२५ के दिन काकोरी रेलवे स्टेशन के निकट रेल में सरकारी ख़ज़ाने पर डाका डाला गया तो सारे देश में सनसनी फैल गयी। यह अपने तरीके की पहली डकैती थी। इसके बारे में कोई यह न सोच सका कि यह कोई मामूली डकैतों का काम है। इसके सम्बन्ध में जब गिरफ्तारियाँ हुईं तो यह साफ हो गया कि यह हिन्दुस्तान की इनक़लाबी जमात का काम है। गिरफ्तारियाँ होने के पहले अशफ़ाक़उल्ला अपने घर से गायब हो गये थे।

अशफ़ाक़उल्ला बख़ूबी अपना लिबास एक अच्छे हिन्दू का बना सकते थे। वे एक माथुर कायस्थ बने पुलिस की नज़रों से बचे रहे। समझा जाता है कि १९२६ की सितम्बर में दिल्ली में वह किसी की धोखेबाज़ी से गिरफ्तार हुए। उन पर लखनऊ में अलग से काकोरी पूरक केस चला, क्योंकि मुख्य केस रामप्रसाद 'बिस्मिल' आदि पर पहले ही चल रहा था और उसमें श्री चन्द्रभानु गुप्त के कारण मैं भी अभियुक्तों की पैरवी में भाग ले रहा था।

मुकदमा मजिस्ट्रेट खान बहादुर ऐनुद्दीन साहब की अदालत में चला। वह अशफ़ाक़ के बहनोई अब्दुल कादिर डिप्टी मजिस्ट्रेट को खूब जानते थे, इसलिए उन्होंने चाहा कि अशफ़ाक़ किसी मुसलमान वकील से पैरवी करायें। लेकिन अशफ़ाक ने कहा कि मैं सिवाय हजेला साहब के और किसी से पैरवी नहीं कराऊँगा। उनसे कहा गया कि "हजेला साहब तो आर्यसमाजी हैं, तुम्हें लटकवा देंगे।" उन्होंने कहा, "अच्छा है, उनके ही हाथ से यह काम हो।"

मुक़दमा अशफ़ाक़ और शचीन्द्रनाथ बख़्शी पर सेशन अदालत में चला तो उसमें शचीन्द्रनाथ बख़्शी के वकील श्री चन्द्रभानु गुप्त नियुक्त हुए। अशफ़ाक़ ने कहा कि "मैं तो अपना वकील सिर्फ हजेला साहब को ही करना चाहता हूँ।" क्योंकि अदालत दूसरे वकील का खर्च नहीं उठाना चाहती थी इसलिए अशफ़ाक़ की यह बात नहीं मानी गयी। तब अशफ़ाक़ ने कहा : "तो आप मुझे फाँसी पर चढ़ा दीजिये, मैं अपना वकील बनाऊँगा तो केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हजेला साहब को हो।" अदालत को अन्ततः उनका यह आग्रह मानना पड़ा और मैं उनका वकील नियुक्त हुआ। तब मेरा उनसे घनिष्ठ परिचय हुआ और मैं जान सका कि वह इनसानियत की कितनी ऊँची मयार पर है।

मुक़दमे के दौरान कई मुसलमान सरकारी अफसर खास तौर पर सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस तसद्दुक हुसैन साहब इस बात की कोशिश करते रहे कि अशफ़ाक़ सारी बातों का इक़बाल कर लें और अपनी जान बचा लें। बात मुझ तक आयी और एक वकील के नाते मैंने भी उनकी जान बचाना अपना फ़र्ज़ समझा क्योंकि पहला मुक़दमा चल ही रहा था और उसका फ़ैसला मुलज़िमों के ख़िलाफ़ जाना था।

मैंने यह बात डरते-डरते अशफ़ाक़ से जब कही तो उन्होंने दृढ़ता से मुझसे कहा : "हजेला साहब ! मैंने किस यकीन से आपको अपना वकील मुक़र्रर किया था। मुझे हैरत है, आप मुझे यह सलाह दे रहे हैं ! मुझे आप पर बहुत भरोसा था। दुनिया मुझे क्या कहेगी ? मैं अकेला मुसलमान हूँ जो इस काम में आया हूँ। हिन्दुओं में खुदीराम बोस आदि बहुत से शहीदाने वतन हो गये हैं।" मैं बहुत शर्मिन्दा हुआ और मैंने कहा, "भई ठीक है, मैं तुम्हारी दिली ख़्वाहिश का ख़्याल रखते हुए भी तुम्हें फाँसी से बचाने के लिए जो कुछ कर सकता हूँ, करूँगा।"

अशफ़ाक़ को सेशन जज बैनेट साहब के यहाँ से फाँसी की सज़ा हो गयी और फिर यह मामला अपील में अवध चीफ़ कोर्ट में पहुँचा। वहाँ भी मैं उनका वकील था। वहाँ भी उन्हें फाँसी की सज़ा हुई।

फ़ैसले के दिन सज़ा सुनने वह बसन्ती धोती पहनकर ऐसे वेष में आये थे गोया सजधजकर किसी सम्मेलन में जा रहे हों। जब उन्हें फाँसी की सज़ा सुनायी जाने पर मैंने उनसे कहा कि मुझे बड़ा अफ़सोस है, तो उन्होंने हँसते हुए कहा, "अफ़सोस ! किस बात का ? यह तो मेरी खुशकिस्मती है कि मुझे हुब्बे वतन का आलातरीन इनाम मिला है। हाँ, मुझे सिर्फ एक बात का ही अफ़सोस है।" मैंने पूंछा, "किस बात का ?" तो उन्होंने कहा, "जब से मैं इस जेल में आया हूँ, मैं इतना खुश था कि मेरा वज़न इतना बढ़ा जितना मैं समझता था कि कभी किसी और क़ैदी का नहीं बढ़ा था, मगर बाद में मुझे मालूम हुआ कि एक और भी कैदी था जिसका वज़न मुझसे भी ७ पौंड ज्यादा बढ़ गया था। अगर मैं १०–१२ दिन और फाँसी की कोठरी से बाहर रह सकता तो मैं जेल के इस रिकार्ड को भी बीट कर देता।" मुझे सुनकर बड़ी हैरत हुई कि यह शख्स किस रूहानी ताक़त का है जो फाँसी की सज़ा सुनकर भी नहीं अचकचाया और उसे ऐसे मज़ाक़ में ले रहा है।

प्रीवी कौन्सिल में भी उनकी अपील हुई और जब वहाँ से भी वह ख़ारिज हो गयी और उन्हें इसकी सूचना तार द्वारा दी गयी तो उन्होंने एक खत लिखकर मुझे इसकी सूचना दी। मैं शहीद अशफ़ाक़ के फ़ैज़ाबाद जेल से १३ दिसम्बर, १९२७ को लिखे इस पोस्ट कार्ड को अपने पास उस शहीदे वतन की पाक यादगार की शकल में अभी तक सुरक्षित रखे हुए हूँ। उसमें उन्होंने यही लिखा था कि "···खुदा को दुनिया में मेरा पार्ट यहीं तक मंजूर था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
आप आकर मुझसे मिल जाइये और मेरे भाई को भी इसकी इत्तिला दे दीजिये । ....
मुझे आपसे कुछ ज़रूरी बात करनी है ।" *

१८ दिसम्बर को मैं उनके बड़े भाई रियासतउल्ला ख़ाँ को लेकर उनसे मिलने फ़ैज़ाबाद जेल में पहुँचा । उस वक्त वह अपनी फाँसी की कोठरी के बाहर थे । उनका चेहरा बड़ी ही मजहबी पारसाई से दमक रहा था । उनके बाल बढ़े हुए थे । वह एक बड़े ही पाक नमाजी दिख रहे थे ।

कोठरी के सींखचों के भीतर से उन्होंने हमसे बातें की । उनके कुछ छोटे भतीजे भी हमारे साथ में थे । बच्चे रोने लगे तो अशफ़ाक़ ने कहा, "आप इन्हें क्यों साथ लाये हैं ? जरा सामने की बैरक की तरफ देखिये । उसमें तीन भाई कत्ल के जुर्म में बन्द हैं । डेढ़ सेर राब पर हुए एक झगड़े में वे तीनों फाँसी पा रहे हैं । ये भी अपनी माई के लाल हैं । वे डेढ़ सेर राब के पीछे जान दे सकते हैं । मैं तो अपनी क़ौम के लिए, एक पूरी सल्तनत के लिए, मादरे वतन की आज़ादी के लिए, जान दे रहा हूँ । क्या यह मकसद जान देने के लिए काफी नहीं है ? आप इन बच्चों को क्यों लाये हैं जो रो रहे हैं ? इन्हें, आप सबको, तो खुश होना चाहिए ।" उन्होंने फिर खुदीराम बोस आदि अनेक हिन्दू शहीदों के नाम गिनाये जो मादरे वतन की आज़ादी की ख़ातिर फाँसी चढ़े और कहा, "मुझे इसका फख्र है, मैं पहला मुसलमान हूँगा जो इस तरह आज़ादी के लिए फाँसी पा रहा हूँ ।"

हम जब मुलाक़ात करके वापस चलने लगे तो मैंने उनसे पूछा, "क्या तुम्हारी कोई ऐसी ख्वाहिश है जिसे हम पूरा कर सकें ?" तो उन्होंने कहा, "मुझे कल फाँसी पर चढ़ना है; मेरी ख्वाहिश है कि कल आप आकर देखें कि मैं कैसे फाँसी पर चढ़ता हूँ ।"

मैंने कहा, "इतनी हिम्मत तो मुझमें नहीं है कि मैं तुम्हें फाँसी पर चढ़ते देख सकूँ । मगर मैं तुम्हारे मजार पर आऊँगा--कई बार आऊँगा ।"

अशफ़ाक़ को १९ दिसम्बर को सवेरे फ़ैज़ाबाद जेल में फाँसी दे दी गयी । उनकी लाश को एक शहीद के सम्मान के साथ रेलगाड़ी से शाहजहाँपुर ले जाया गया । जब गाड़ी लखनऊ स्टेशन पर पहुँची तो उसके दर्शन के लिए वहाँ एक बड़ा मेला ही लग गया था । उसमें चन्द्रभानु गुप्त थे, गणेशशंकर विद्यार्थी थे और मैं भी था ।

अशफ़ाक़ की लाश क्या थी, ऐसा मालूम होता था कि मानो वह सुख-शान्ति से सो रहे हों । बड़े-बड़े साहसियों का चेहरा फाँसी के वक्त बिगड़ जाता है । मगर अशफ़ाक़ के चेहरे पर शिकन तक न थी । सिर्फ आँखों के नीचे एक नीला-सा धब्बा दिखता था जो फाँसी से खून रुकने से वहाँ पर हो जाया करता है । सब लोग फाँसी के वक्त की हिम्मत, शांति और पाक-ख़्याली से, जो उनकी लाश के चेहरे पर फाँसी लगने के इतने समय बाद भी साफ दिख रही थी, आश्चर्य से चकित थे और उनके प्रति श्रद्धा से हमारे हृदय भरे और सर झुके हुए थे ।

---

* शहीद अशफ़ाक़ के जेल से लिखे पोस्ट कार्ड की फ़ोटो-कापी परिशिष्ट में देखिये ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद रोशनसिंह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

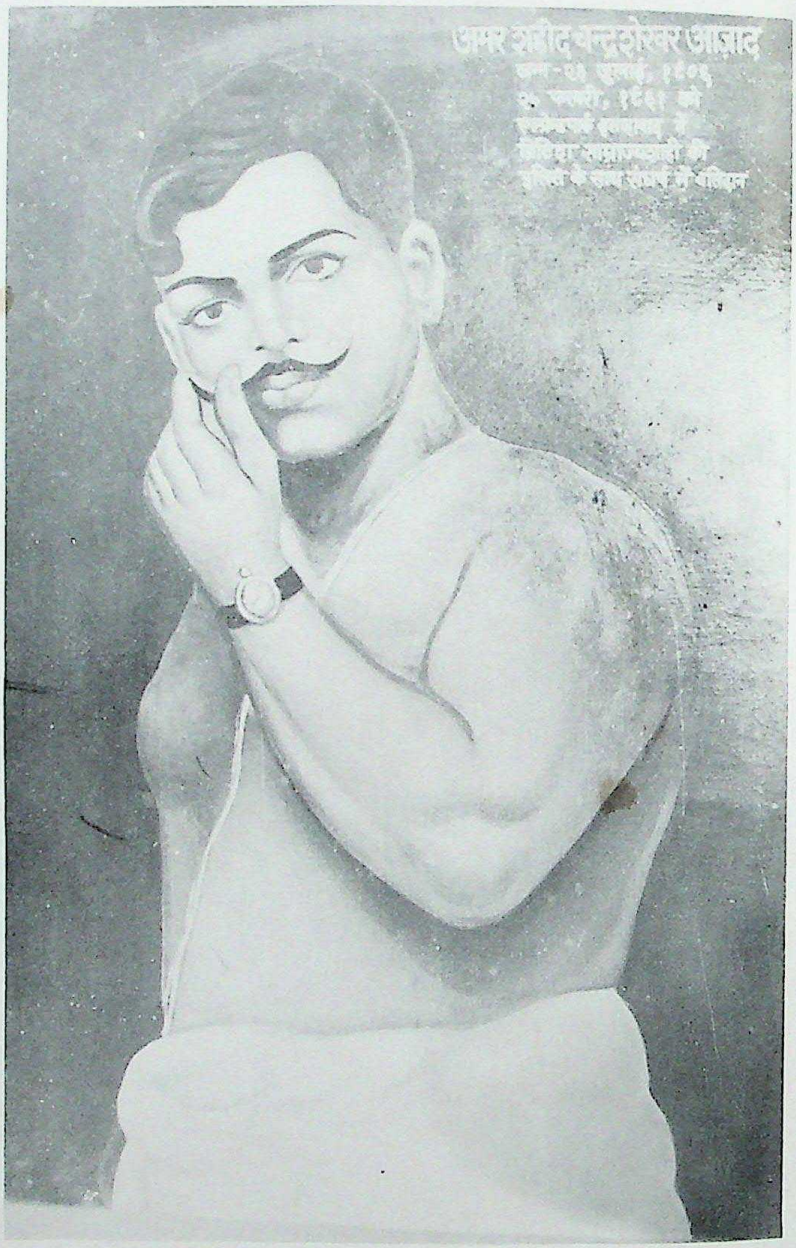

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

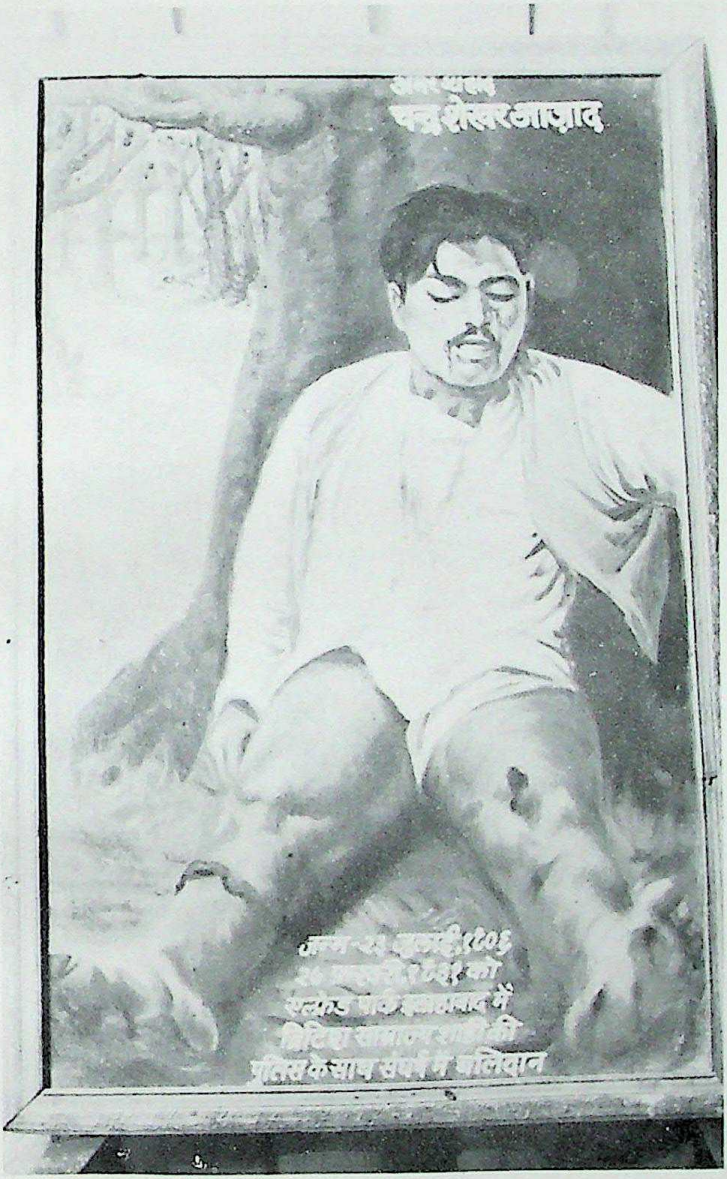

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद

(ब्रिटिश साम्राज्यशाही की पुलिस से संघर्ष में बलिदान)

CC-0.*Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

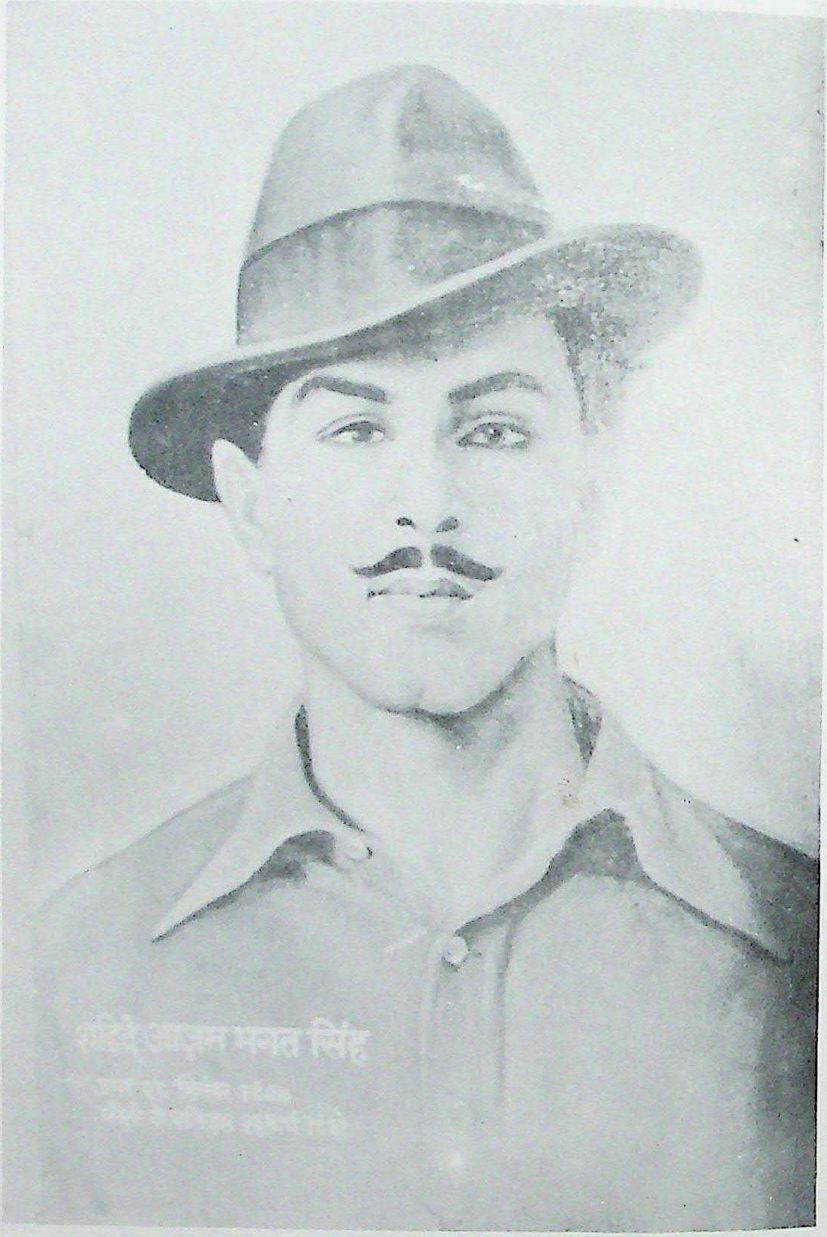

शहीदे आज़म सरदार भगतसिंह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद सुखदेव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

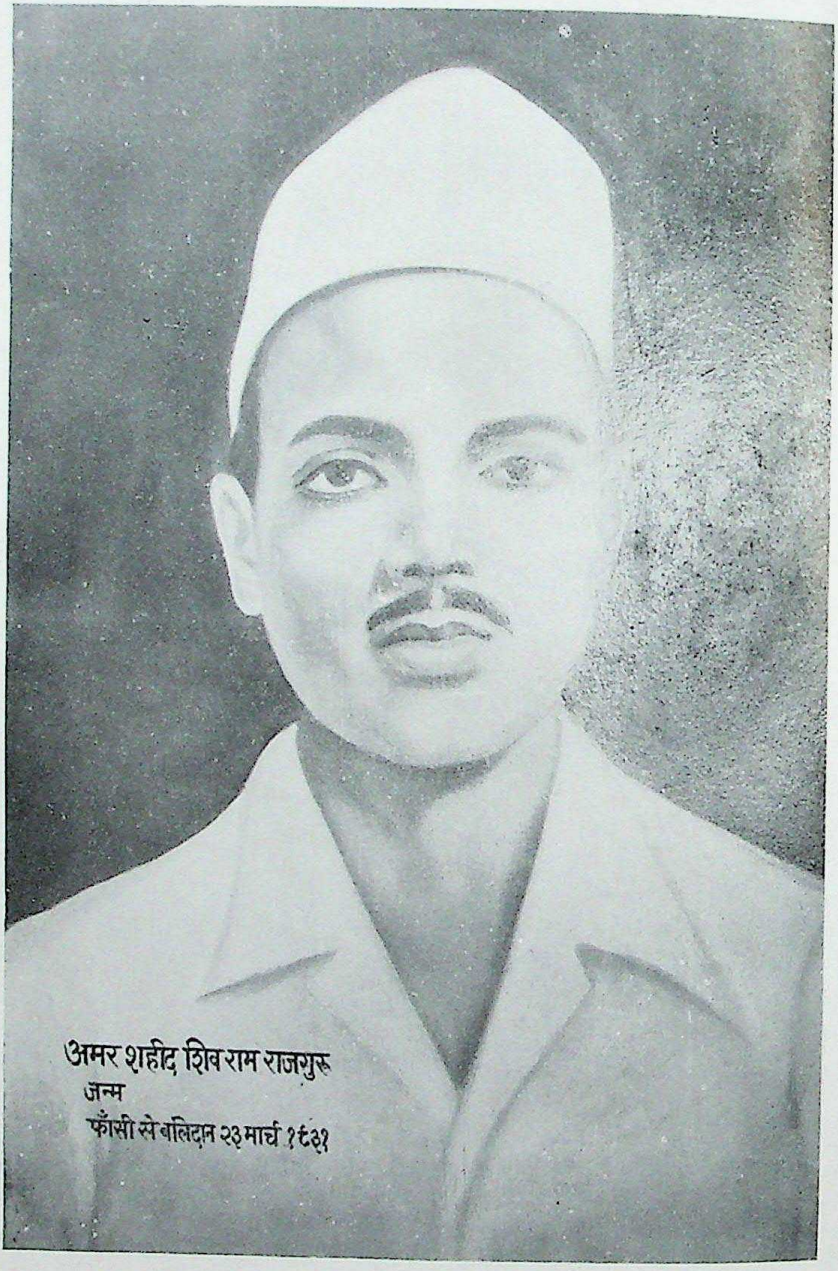

अमर शहीद शिवराम राजगुरु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

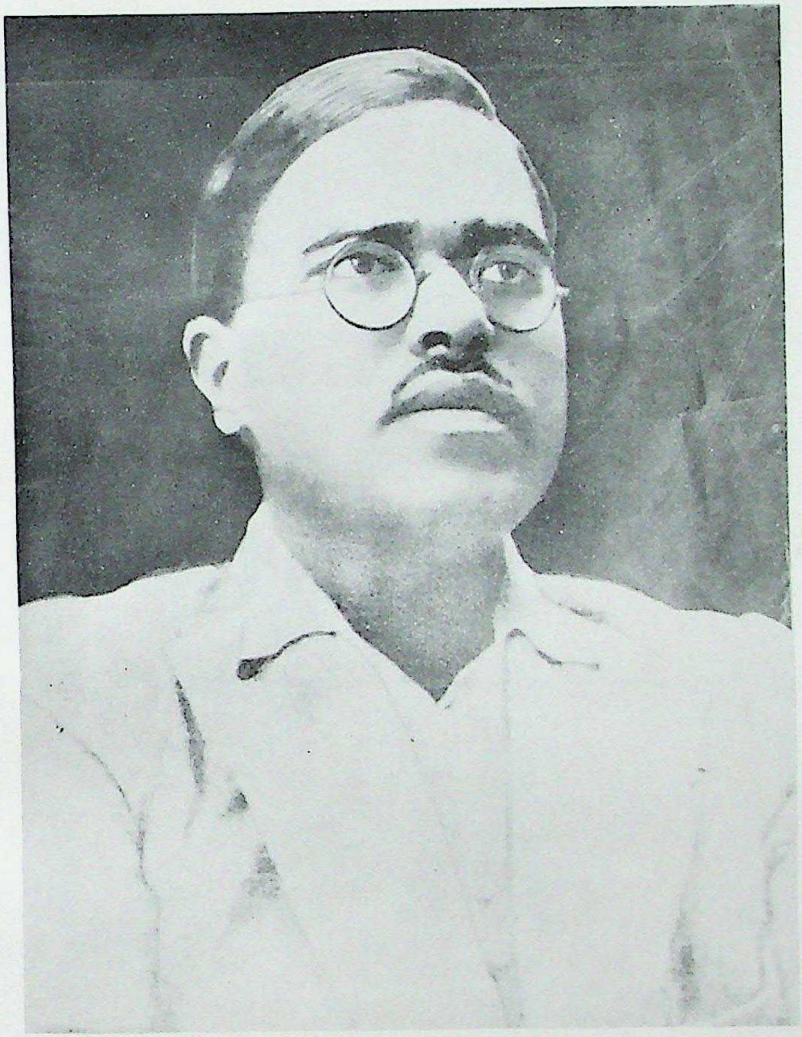

अमर शहीद भगवतीचरण वोरा

(रावी-तट पर बम-परीक्षण में शहीद)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कई बार मैं उनके मजार पर फूल चढ़ाने गया हूँ।

वह पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' को अपना नेता मानते थे। उनके दिल में हिन्दू-मुसलमान का कोई भेद था ही नहीं। वह पूरी तौर पर एक देशभक्त थे और अपने आपको कौम का एक डिसिप्लिन का पाबन्द इन्क़लाबी सिपाही मानते थे। उन्होंने अपनी पार्टी में ट्रेन में डकैती डालने की तजबीज की मुखालफत की थी। उनकी दलील थी कि ऐसा करने से सरकार को वक्त से पहले छेड़ने वाली बात हो जायेगी और इससे इन्क़लाबी जमात का बड़ा नुकसान होगा। सरकार को उन पर टूट पड़ने का मौका मिल जायेगा। मगर जब उनकी दलील नहीं मानी गयी और ट्रेन डकैती करने का तहैया उनकी इन्क़लाबी जमात ने कर लिया, तो उन्होंने सबसे आगे बढ़कर काम किया।

शहीद अशफ़ाक़ की ज़िन्दगी और शहादत देश के नौजवानों के लिए आदर्श है। वह उन्हें हिन्दू-मुसलिम एकता और देश में राजनीतिक आज़ादी कायम रखने और उसमें जनता की आर्थिक आज़ादी बढ़ाने के लिए हमेशा प्रभावित करती रहेगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद रोशनसिंह

☐ क्रान्तिवीर रामसेवक रावत

[लेखक एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी हैं, जिनका एक हाथ बम बनाने के प्रयास में उड़ गया था और जिन्हें इसके लिए लम्बे कारावास की सज़ा मिली थी। —सं.]

ठाकुर रोशनसिंह शाहजहाँपुर ज़िले के ग्राम नवादा के रहने वाले थे। उनमें ठाकुर-सुलभ वीरता, साहस और बल जन्म से ही थे और उनके बचपन में उनका स्वाभाविक रूप से विकास भी खूब हुआ था। राजनीति में आने के पूर्व आपने अनेक असामाजिक साहसिक कार्य किये थे। आपके दो पत्नियाँ थीं।

जब असहयोग आन्दोलन चला तो उससे उनके क्षत्रिय-सुलभ शौर्य और बल को देशभक्ति का क्षेत्र मिल गया। उसमें वह और भी अधिक चमके और देश और समाज के लिए हितकारी रूप में चमके। उन्होंने शाहजहाँपुर और बरेली ज़िलों में गाँव-गाँव घूमकर असहयोग के प्रचार का कार्य किया। इन दिनों इसी सिलसिले में बरेली में गोली चली और ठा. रोशनसिंहजी को दो वर्ष की कड़ी कैद का दण्ड मिला। काकोरी षड़यंत्र में पकड़े जाने वालों में आप ही शारीरिक दृष्टि से सबसे अधिक बलवान थे।

यद्यपि आपका अंग्रेज़ी का ज्ञान, कहना चाहिये कि, नहीं के बराबर ही था, परन्तु हिन्दी-उर्दू अच्छी तरह जानते थे। काकोरी षड़यंत्र केस में जो गवाहियाँ गुजरी थीं उनसे किसी को भी यह आशंका नहीं थी कि आपको फाँसी की सज़ा हो सकती है। जब उन्हें भी फाँसी की सज़ा सुनायी गयी तो सब आश्चर्य करते रह गये। सभी को बड़ा धक्का-सा लगा। यह सोचना स्वाभाविक था कि फाँसी की सज़ा सुनायी जाने से, जिसकी उन्हें या अन्य किसी को आशंका तक नहीं थी, तो उसके लिए तैयार रहने का प्रश्न ही नहीं था, कहीं वे कुछ विचलित न हो जायें। मुकदमे का फ़ैसला और सज़ाएँ सेशन जज अंग्रेज़ी में सुना रहा था। अपना नाम आने पर 'फाइव इयर्स, फाइव इयर्स' सुनकर उन्होंने यह तो समझ लिया कि उन्हें षड़यंत्र में शामिल होने के लिए पाँच साल की कड़ी कैद मिली है, मगर आगे जब धारा ३७६ में उन्हें सज़ाए-मौत अंग्रेज़ी में सुनायी गयी तो उसे वह तत्काल समझ न सके। उनकी सज़ा सुनकर पास में खड़े साथी दुबलिशजी ने प्रेम से उनकी कमर में हाथ डालकर उन्हें अपने आगोश में ले लिया। उन्होंने दुबलिशजी से पूछा: "फाइव इयर्स, फाइव इयर्स के आगे यह जज और क्या बक गया ?" दुबलिशजी ने जब उन्हें बताया कि जज ने आपको देशभक्ति का सर्वश्रेष्ठ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुरस्कार यानी मृत्यदण्ड दिया है, तो सुनते ही उनका चेहरा आत्माभिमान और हर्ष से चमक उठा। इससे अदालत में उपस्थित सभी लोगों को उससे भी अधिक प्रशंसापूर्ण आश्चर्य हुआ जो उनकी फाँसी की सज़ा पर दुःखपूर्ण आश्चर्य हुआ था।

ठा. रोशनसिंह को १९ दिसम्बर १९२७ को मलाका, इलाहाबाद जेल में फाँसी दी गयी। १३ दिसम्बर को उन्होंने अपने एक मित्र को पत्र भेजा था, उसमें लिखा था :

> इस सप्ताह के भीतर ही फाँसी होगी। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह आपको मुहब्बत का बदला दे। आप मेरे लिए हरगिज़ रंज न करें। मेरी मौत खुशी का बाइस होगी। दुनिया में पैदा होकर मरना ज़रूर है। दुनिया में बदफैल करके मनुष्य अपने को बदनाम न करें और मरते वक्त ईश्वर की याद रहे, यही दो बातें होनी चाहिये और ईश्वर की कृपा से मेरे साथ ये दोनों बातें हैं। इसलिए मेरी मौत किसी प्रकार अफ़सोस के लायक नहीं है। दो साल से मैं बालबच्चों से अलग हूँ। इस बीच ईश्वर भजन का खूब मौका मिला। इससे मेरा मोह छूट गया और कोई वासना बाकी न रही। मेरा पूरा विश्वास है कि दुनिया की कष्ट भरी यात्रा समाप्त करके मैं अब आराम की ज़िन्दगी के लिए जा रहा हूँ। हमारे शास्त्रों में लिखा है कि जो आदमी धर्मयुद्ध में प्राण देता है उसकी वही गति होती है जो जंगल में रहकर तपस्या करने वालों की।
>
> **ज़िन्दगी ज़िन्दादिली को जान ऐ रोशन**
> **वरना कितने मरे और पैदा होते जाते हैं।**
>
> आखरी नमस्ते !
>
> आपका
>
> रोशन

फाँसी के दिन बड़े सवेरे से आप स्नान-ध्यान आदि करके बहुत पहले से ही तैयार बैठे थे। ज्योंही ज़िला मजिस्ट्रेट, जेलर आदि इन्हें फाँसीघर में ले चलने को आये, आप मुस्कराते हुए, हाथ में गीता लिये उनके साथ चल पड़े। फाँसी के तख्ते पर पहुँचते ही उन्होंने उच्चस्वर में 'वन्देमातरम्' का नारा लगाया और 'ओम्' का स्मरण करते-करते लटक गये। गीता के अनुसार :

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥

अपने विश्वास से आपने परम गति पायी और हमारे लिए प्रेरणा के स्रोत अमर शहीद देशभक्तों में अपना स्थान पाया। इलाहाबाद का श्रद्धालु जनसमूह आपकी देह को बड़े सम्मान से एक जुलूस में ले जाना चाहता था परन्तु ज़िला मजिस्ट्रेट ने इसकी इजाज़त नहीं दी। श्मशान भूमि में आर्यसमाजी विधि से उनका दाह संस्कार कर दिया गया। ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद

☐ क्रान्तिवीर रमेशचन्द्र गुप्त

[लेखक एक सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी हैं जिन्हें अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के पुलिस द्वारा घेरकर मारे जाने के सम्बन्ध में उनसे विश्वासघात करने के अपराधी माने गये व्यक्ति को दल के निश्चय के अनुसार प्राणदण्ड देने का प्रयास करने के लिए लम्बे कारावास की सज़ा हुई थी । —सं.]

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के पिता पं. सीताराम तिवारी उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले के बदरका ग्राम से तत्कालीन देशी राज्य अलीराजपुर के एक ग्राम भावरा में आ बसे थे और वहीं बाँसों के टट्टरों की एक झोंपड़ी में हद दरजे की ग़रीबी में माता जगरानी देवी के गर्भ से उनका जन्म २३ जुलाई, १९०६ को हुआ था ।

बालक चन्द्रशेखर बचपन से ही महान साहसी थे और १९२०–२१ के जमाने में घर से भागकर, कुछ दिनों बम्बई में मज़दूर ज़िन्दगी बिताकर, बनारस पहुँचे थे और वहाँ अन्नक्षेत्र में भोजन पाकर संस्कृत पाठशाला के छात्र हो गये थे । असहयोग आन्दोलन में उन्होंने बड़े उत्साह से कार्य किया और अपनी असाधारण कार्यक्षमता से वह वहाँ के सभी बड़े कांग्रेसी नेताओं के बहुत प्रिय हो गये थे ।

जब असहयोग आन्दोलन में चन्द्रशेखर को १५ बेतों की सज़ा हुई और उन्हें जेल में ले जाकर टिकटी से बाँधकर बेत लगाये गये, तो प्रत्येक बेत के प्रहार पर वह "महात्मा गाँधी की जय !" नारा लगाते थे । बनारस के कांग्रेसियों में वह 'आज़ाद' के नाम से विख्यात हो गये क्योंकि अदालत में नाम पूछे जाने पर उन्होंने अपना नाम 'आज़ाद' ही बताया था । एक सार्वजनिक सभा में उनका विशेष सम्मान किया गया था ।

असहयोग आन्दोलन समाप्त हो जाने के बाद जब बनारस में क्रान्तिकारी दल पुनः संगठित और सक्रिय हुआ तो श्री मन्मथनाथ गुप्त के सम्पर्क से आज़ाद क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गये और दल के धन-संग्रह के अनेक साहसी कार्यों में उन्होंने बढ़-चढ़कर भाग लिया । काकोरी ट्रेन डकैती में भी वह सम्मिलित थे । दल में अपनी बाल-सुलभ चपलता के कारण वह 'क्विकसिल्वर' (पारा) कहलाते थे । उनके इस नाम का उल्लेख केस में दर्ज बयानों में भी हुआ ।

अन्य लोगों की धारणा थी कि यह 'क्विकसिल्वर' पुलिस की नज़रों से बचा न रह सकेगा । परन्तु हुआ यह कि काकोरी केस में फरार घोषित लोगों में अन्ततः चन्द्रशेखर आज़ाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ही कभी पुलिस के हाथों में नहीं पड़े और लगभग दो वर्ष तक संगठित क्रान्तिकारी दल 'हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना' के प्रधान सेनानी के रूप में, दल के बौद्धिक नेता अमर शहीद सरदार भगतसिंह के साथ, उसका नेतृत्व करते हुए २७ फरवरी, १९३१ को इलाहाबाद के एल्फ्रेड पार्क में पुलिस की शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित टुकड़ी से अपने एक छोटे-से पिस्तौल से सम्मुख युद्ध करते हुए ही उन्होंने वीरगति पायी थी।

दल के सैनिक नेता के रूप में वह प्रत्येक सैनिक कार्य में आगे रहते थे। लाहौर में जब लाला लाजपतराय पर, साइमन कमीशन के विरोध में निकाले गये जुलूस का नेतृत्व करते हुए, लाठियाँ बरसायी गयीं और उसके कुछ दिनों बाद उनकी मृत्यु हो गयी, तो इस प्रकार राष्ट्र का जो घोर अपमान हुआ उसका प्रतिशोध क्रान्तिकारी दल ने लेने का निश्चय किया। आज़ाद के नेतृत्व में भगतसिंह और राजगुरु ने दिनदहाड़े असिस्टेण्ट पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट साण्डर्स को माल रोड पर उसके दफ्तर के सामने ही गोली से मार गिराया।

दल में आपस में चलने वाले विनोद म भी जब कभी भगतसिंह उनसे कहते कि "पंडितजी, दल के नेता के रूप में पकड़े जाने पर आपको तो निश्चित रूप में फाँसी की ही सज़ा होगी और तब आपके लिए दो रस्सों की ज़रूरत पड़ेगी, एक आपके गले के लिए और दूसरा आपके इस कुछ भारी-भरकम पेट के लिए" तो उन्हें झिड़ककर आज़ाद कहा करते थे :

> "देख, पुलिस मुझे रस्सी से बाँधकर बँदरिया जैसा नाच नचाती फिरे और फिर मुझे फाँसी पर टाँग दे, यह मुझे कभी अच्छा नहीं लगता। वह तुझे मुबारक हो। जब तक यह 'बमतुल बुख़ारा' (आज़ाद ने अपने पिस्तौल का यही विचित्र नाम रखा था) मेरे हाथ में है, कोई माई का लाल मुझे जीवित नहीं पकड़ सकता।"

अपने इस इरादे को उन्होंने पद्य में भी यों प्रकट किया था :

दुश्मन की गोलियों का हम सामना करेंगे।
आज़ाद ही रहे हैं आज़ाद ही रहेंगे ॥

उनकी यह भविष्यवाणी सर्वथा सत्य हुई।

आज़ाद हर दरजे की ग़रीबी, अशिक्षा और कुसंस्कारों में जन्मे और पले थे, और फिर वह पुस्तकें पढ़कर नहीं, क्रान्तिकारी जीवन में अनुभव से सीखते हुए और आगे प्रगति करके, हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना के प्रधान सेनानी 'बलराज' हुए और पुलिस से सम्मुख युद्ध में शहीद हुए। इस प्रकार उनका जीवन भारतीय आम जनता के क्रान्ति पथ पर बढ़ते जाने का प्रतीक हो गया है और हमें विश्वास दिलाता है कि जिस जनता में चन्द्रशेखर आज़ाद जैसे कुशल क्रान्तिकारी नेता और सेनानी जन्म लेते हैं वह जनता निश्चित रूप से अपने क्रान्ति पथ पर निरन्तर आगे-आगे बढ़कर भारत में आर्थिक शोषण विहीन समाजवादी प्रजातन्त्र स्थापित करके ही रहेगी।

निश्चित रूप से, काकोरी काण्ड से सम्बन्धित क्रान्तिकारी दल की देश के स्वतंत्रता संग्राम को व्यक्ति के रूप में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण देन अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद को ही इतिहास मानेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद की एक प्रामाणिक विस्तृत जीवनी स्वर्गीय विश्वनाथ वैशम्पायन ने लिखी है जो क्रान्तिकारी प्रकाशन, शहीद उद्यान, मिरज़ापुर उत्तर प्रदेश से प्रकाशित हुई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल

☐ क्रान्तिवीर विजयकुमार सिनहा

[क्रान्तिवीर विजयकुमार सिनहा स्वयं अमर शहीद सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद के साथी रहे हैं। लाहौर षड़यन्त्र केस में इन्हें भी हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना के एक सक्रिय सदस्य और संगठन की केंद्रीय समिति के सदस्य होने के कारण आजीवन कालेपानी की सज़ा हुई थी। १९३८ में प्रान्तों में बने कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों के प्रयास से ही आप मुक्त हुए थे। परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान आप फिर नज़रबन्द कर दिये गये थे और युद्धान्त में ही छोड़े गये थे। आप अंग्रेज़ी के एक सुलेखक हैं। इन्हें सोवियत रूस आदि समाजवादी देशों की यात्रा करने का अवसर मिला है और इन्होंने वहाँ के जन-जीवन का बड़ा ही सजीव वर्णन अपनी पुस्तक *The Making of the New Man* में किया है जो पुरस्कृत हुई है। इसके पूर्व उनकी पुस्तक *In Andamans : The Indian Bastile* ने बड़ी ख्याति अर्जित की थी। --सं.]

स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल प्रथम विश्वयुद्ध के दिनों में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस के दाहिने हाथ थे, जब उत्तर भारत की समस्त छावनियों में एक साथ सशस्त्र राष्ट्रीय क्रान्ति करने की योजना बनायी गयी थी।

अपने क्रान्तिकारी दल में शचीन्द्रनाथ सान्याल के लिए हम केवल 'शचीन्द्र' शब्द का प्रयोग किया करते थे। उनके पास मोतीलाल राय की लिखी हुई शहीद कन्हाईलाल के सम्बन्ध में एक पुस्तक थी। उन्होंने उस पुस्तक के वे कुछ उद्धरण सुनाये जिनमें उस वीर शहीद के अन्तिम दिनों का विवरण था, उसमें बताया गया था कि किस प्रकार हँसते-हँसते वह फाँसी पर झूल गया था और तब उसका वज़न भी बढ़ गया था। वे स्थल पढ़ते हुए शचीन्द्र दा का चेहरा स्वाभिमान से चमक उठा था। गर्वीली आँखों से अश्रुधारा बह निकली थी। उस गम्भीर दृश्य का मुझ पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। शचीन दा के त्याग और बलिदान के विषय में मैंने बहुत कुछ सुन रखा था। तब मैंने अपनी आँखों देखा था और हृदय से अनुभव किया था कि वह किस प्रकार एक शहीद को एक भक्त की तरह अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१९१५ में बनारस षड़यंत्र केस में उनको आजीवन कारावास की सज़ा हुई थी और उनको कालेपानी (अण्डमान) भेज दिया गया था। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद आम माफी के सिलसिले में २० फरवरी, १९२० को उन्हें रिहा किया गया था। जेल से रिहा होते ही वह पुनः क्रान्तिकारी दल को संगठित करने के कार्य में जट गये।

उनके परिवार के सभी लोगों ने क्रांतिकारी प्रवृत्तियों को बलशाली और व्यापक बनाने में हाथ बटाया। वे चार भाई थे। उनके बड़े भाई रवि सान्याल को, जो बाद में प्रोफेसर हुए, बनारस षड़यंत्र केस के सम्बन्ध में नज़रबन्द किया गया था। उनके सबसे छोटे भाई भूपेन्द्र-नाथ सान्याल को १९२७ में काकोरी षड़यंत्र केस में उनके साथ ही दंडित किया गया था और जितेन्द्रनाथ सान्याल को १९२९ में लाहौर षड़यंत्र केस में अमर शहीद भगतसिंह आदि तथा हम लोगों के साथ अभियुक्त बनाया गया था। उनकी बूढ़ी माँ और पत्नी ने भी अपने आपको निरन्तर क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों के साथ सम्बद्ध रखा।

शचीन दा को काकोरी षड़यंत्र केस में पुनः आजन्म कालेपानी की सज़ा दी गयी। १९३७ में उत्तर प्रदेश में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल बनने पर ही उन्हें मुक्ति मिली। उन्हें पुनः १९४० में भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया और अन्य अनेक क्रान्तिकारी नज़रबन्दों के साथ देवली नज़रबन्द कैम्प में रखा गया। उनको यक्ष्मा से पीड़ित होने के कारण रोग की असाध्य स्थिति में चिकित्सा के आधार पर नज़रबन्दी से मुक्त किया गया परन्तु रोग बढ़ता ही गया और अन्त में इस अदम्य उत्साही क्रान्तिकारी की अजस्र प्रेरणास्रोत जीवनलीला भुवाली सेनाटोरियम के एक छोटे-से कमरे में समाप्त हो गयी।

उस समय मन्मथनाथ गुप्त, मेरे बड़े भाई राजकुमार सिनहा, भगवानदास माहौर आदि अनेक क्रान्तिकारी फतेहगढ़ सेंट्रल जेल में नज़रबंद थे और वहाँ हमने अपनी एक छोटी-सी श्रद्धांजलि सभा में उन्हें अपनी विनम्र श्रद्धांजलि भेंट की थी।

गोली या फाँसी के एक झटके से शहीद होने वाले तो हमारे पूज्य ही हैं, परन्तु क्रान्ति की आरी से तिल-तिल आजीवन चीरे जाने वाले शचीन दा जैसे मृत्युंजयी वीरों के लिए किस शब्द का प्रयोग किया जाये? उन्हें मात्र शहीद कहने से मुझे लगता है कि उनके प्रति मैं अपनी असीम श्रद्धा को अभिव्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ।

शचीन दा केवल एक उत्साही बलिदानी क्रान्तिकारी ही नहीं थे, वे एक महान बुद्धिशाली विचारक और लेखक भी थे। काकोरी षड़यंत्र केस के सम्बन्ध में बहुचर्चित पर्चा **'दि रेवोल्यूशनरी'*** उनकी ही कृति थी, जिसमें यह बहुत ही स्पष्ट शब्दों में बताया गया था कि हम क्रान्तिकारियों का लक्ष्य भारत में ऐसा स्वतंत्र जनतंत्री शासन स्थापित करना है जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण के लिए कोई अवकाश न होगा। उनकी पुस्तक **'बन्दी जीवन'** में न केवल उनके क्रान्तिकारी उत्साह और कर्मण्यता की ही झलक मिलती है, अपितु उनकी बुद्धि और क्रान्तिकारी चिन्तन का प्रखर तेज भी है। ★

---

* **'दि रेवोल्यूशनरी'** के उद्धरण परिशिष्ट में देखिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर जोगेशचन्द्र चटर्जी

☐ प्रो. राधेश्याम शर्मा

[लेखक सशस्त्र क्रान्तिकारी दल से भी सम्बद्ध रहे हैं और एक सत्याग्रही के रूप में भी उन्होंने कई बार जेलयात्रा की है। १९४२ की क्रान्ति में उत्तर प्रदेश और दिल्ली के क्षेत्र में संचालन करने में भी उनका प्रमुख हाथ रहा। अभी उत्तर प्रदेश शासन द्वारा स्थापित स्वतंत्रता संग्राम सेनानी कल्याण परिषद के आप निदेशक सचिव हैं। -- सं.]

स्वर्गीय क्रान्तिवीर जोगेशचन्द्र चटर्जी स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल की ही भाँति काकोरी षड़यंत्र केस के प्रमुख अभियुक्तों में थे। उन्हें भी इसमें आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई थी। बंगाल में 'युगान्तर' और 'अनुशीलन समिति' नाम के दो अलग-अलग क्रान्तिकारी दल थे। शचीन्द्रनाथ सान्याल उत्तर प्रदेश में युगान्तर दल की ओर से संगठन करते थे और जोगेश चटर्जी अनुशीलन समिति की ओर से। गंगा-यमुना के संगम के इस प्रदेश में ये दोनों धाराएँ भी मिल गयीं और सम्मिलित दल का नाम 'हिन्दुस्तानी प्रजातंत्र संघ' हुआ। इस दल के संगठन और संचालन में जोगेशजी का सर्वप्रमुख कार्य रहा। सेशन जज ने तो जोगेश बाबू को केवल १० साल की सज़ा दी थी परन्तु अवध चीफ़ कोर्ट ने उन्हें दल का प्रमुख नेता ठहराकर उनकी सज़ा बढ़ाकर आजन्म कालेपानी की कर दी थी।

जोगेश बाबू का जन्म ढाका ज़िले के गावदिया नामक ग्राम में एक भद्र परिवार में हुआ था। उनका लालन-पालन और शिक्षा कुमिल्ला में हुई थी और अपने विद्यार्थी जीवन में ही वह क्रान्तिकारी आन्दोलन के अग्निपथ पर चलने लगे थे। क्रान्तिकारी लोग गुप्त रूप से अपना काम करते थे और बड़ी ही ग़रीबी में अपना जीवन यापन करते थे। कभी लाई फाँककर तो कभी भूखे ही पड़े रहते थे, किसी अनजान मज़दूर की एक छोटी-सी कुटिया में आठ-आठ दस-दस की संख्या में। बीमार पड़े तो दवादारू का कोई प्रबन्ध नहीं। क्रान्ति के ऐसे असिधारा व्रत पर चलने वालों में जोगेश बाबू प्रमुख क्रान्तिकारी गिने जाने लगे।

एक दिन कलकत्ते के एक मकान में वह पुलिस के हाथों में पड़ गये। उन पर अनेक डकैतियों और खून में भाग लेने का सन्देह था। अपराध स्वीकार कराने और क्रान्तिकारी दल के कामों की जानकारी प्राप्त करने के लिए पुलिस ने उन पर अमानुषिक अत्याचार किये। बंगाल की पुलिस क्रान्तिकारियों पर ऐसा अमानुषिक अत्याचार करने के लिए बुरी तरह बदनाम थी। गुप्त अंगों में बिजली लगाना, जाड़े में बर्फ़ की सिल्लियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पर लिटाना, मुँह पर मिर्चों भरा कोड़ा बाँधना, दोनों हाथों की हथेलियों को खाट के पायों के नीचे दबाकर रखना, नाखूनों में सुइयाँ चुभोना आदि अनेक अमानुषिक यंत्रणाएँ पुलिस वाले क्रान्तिकारियों को दिया करते थे। जोगेश बाबू के साथ भी उन्होंने ऐसे ही अमानुषिक अत्याचार किये। एक बालटी में मलमूत्र मिलाकर उन्हें उससे नहला दिया गया, मल भरे कमोड में उनका मुँह डाला गया, उनके हाथ-पैर बाँधकर एक व्यक्ति के द्वारा कृत्रिम रीति से उनका वीर्यपात कराया गया। क्या-क्या यंत्रणाएं उन्हें नहीं दी गयीं। परन्तु पुलिस जोगेश बाबू के मुँह से दल की कोई बात तो क्या एक उफ़ भी न निकलवा सकी।

प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान उन्हें पकड़कर नज़रबन्द किया गया था। जेल में दुर्व्यवहार के विरुद्ध उन्हें कई बार भूख हड़ताल करनी पड़ी। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद आम माफी के सिलसिले में उन्हें भी बिना शर्त छोड़ दिया गया। वे पुनः क्रान्तिकारी संगठन और कार्य में जुट गये और जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, 'हिन्दुस्तानी प्रजातंत्र संघ' के एक बड़े नेता के रूप में समस्त देश में घूमकर संगठन कार्य करने लगे। एक कुशल और दृढ़ संगठन करने वाले के रूप में क्रान्तिकारी दल में उनकी विशेष प्रतिष्ठा थी।

कानपुर में वह सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय, रामदुलारे त्रिवेदी, भगतसिंह, बटुकेश्वर दत्त आदि के निकट और घनिष्ठ परिचय में आये थे और वहाँ क्रान्तिकारी दल की शाखा का सुदृढ़ संगठन किया था। काकोरी केस में सज़ा पाकर आपने अनेक जेलों में राजनीतिक बन्दियों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के विरुद्ध लम्बी-लम्बी भूख हड़तालें कीं और परिणामतः सरकार को उनकी अनेक माँगों को मानने को बाध्य होना पड़ा था।

काकोरी केस के बाद जब क्रान्तिकारी दल 'भारतीय प्रजातंत्र संघ', सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद आदि के नेतृत्व में, 'भारतीय समाजवादी प्रजातंत्र संघ' के रूप में विकसित हुआ तो उसने जोगेश दा को जेल से निकाल ले जाने के अनेक प्रयास किये, किन्तु सफलता न मिली।

१९३७ में उत्तर प्रदेश में कांग्रेसी मंत्रिमंडल बन जाने पर आपको रिहा किया गया। दिल्ली में प्रवेश की निषेधाज्ञा को भंग करने पर तुरन्त पुनः गिरफ्तार किये गये। आपने तब क्रान्तिकारी समाजवादी दल का संगठन किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में आपको पुनः गिरफ्तार करके नज़रबन्द कर दिया गया। देवली नज़रबन्दी कैम्प में आपने उसकी सुप्रसिद्ध भूख हड़ताल में भाग लिया। कैम्प के अधिकारी आपको किसी भी प्रकार जबरन दूध पिलाने में सफल न हुए और आपकी हालत दिनोंदिन बिगड़ती ही गयी और इतनी ख़राब हो गयी कि सरकार को फिर इन्हें छोड़ ही देना पड़ा था।

शरीर से दुबले-पतले, मितभाषी, सदैव क्रान्ति के चिन्तन और चिन्ता में लीन जोगेश दा सदैव एक अजेय क्रान्तिकारी रहे। स्वराज्य प्राप्त होने पर कांग्रेस के टिकट पर आप राज्य-सभा के सदस्य रहे। इस सुयोग का उपयोग करते हुए उन्होंने भारतीय स्वातंत्र्य संघर्ष के इतिहास में क्रान्तिकारी दल के योगदान को, जिसे भुलाया और नकारा जा रहा था, भारत की भावी पीढ़ियों को बताने और क्रान्तिकारियों के लक्ष्य समाजवादी प्रजातंत्र स्थापित करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की ओर नौजवानों का ध्यान दिलाने का सदैव हर सम्भव प्रयत्न अपने अन्त समय तक किया ।

इसके लिए उन्होंने १९५८ के दिसम्बर में दिल्ली में सभी जीवित बचे क्रान्तिकारियों का एक सम्मेलन बुलाया जिसकी अध्यक्षता सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी डा. भूपेन्द्रनाथ दत्त* (स्वामी विवेकानन्द के छोटे भाई) ने की और उद्घाटन वारीन्द्रकुमार घोष (योगी अरविन्द के छोटे भाई) ने किया। तत्कालीन गृह मंत्री गोविन्द वल्लभ पन्त ने भी इस सम्मेलन को सम्बोधित किया था और प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने सम्मेलन में पधारे सभी क्रान्तिकारियों को अपने निवास स्थान पर बुलाकर उनका सम्मान किया था।

खेद है कि जोगेश दा का स्वास्थ्य फिर ठीक न रहने के कारण, और परिणामतः उनका निधन हो जाने से, क्रान्तिकारी आन्दोलन का बृहत इतिहास क्रान्तिकारियों की एक समिति द्वारा लिखे जाने का काम आगे नहीं बढ़ सका। सन्तोष इतना ही है कि साथी मन्मथनाथ गुप्त का ग्रन्थ '**भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास**' इस अभाव की कुछ पूर्ति कर रहा है।

---

* डा. भूपेन्द्रनाथ दत्त का बहुत ही महत्त्व का और ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश डालने वाला भाषण परिशिष्ट में दिया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर मुकुन्दीलाल

☐ श्री रामसिंह बघेले

क्रान्तिवीर सेनानी मुकुन्दीलाल जीवन भर आज़ाद भारत में जिस दशा में रहे उसको सुनकर हर देशभक्त का सिर उनके प्रति श्रद्धा से झुक जायेगा। मुकुन्दीलाल एक सम्पन्न परिवार में जन्मे थे, लेकिन उन्होंने देश को आज़ाद कराने के लिए चल रहे सशस्त्र क्रान्ति प्रयासों में भाग लिया और किसी भी तरह की लालच से आजीवन पीछे नहीं मुड़े। आज़ादी के २५ साल बाद भी उन्होंने किसी से कुछ नहीं चाहा और ऐसे ही इस संसार से चले गये। अक्तूबर १९७२ में कानपुर के एक अस्पताल में उनका देहान्त हो गया। आज़ाद भारत में २५ साल तक उन्होंने ऐसा बहुत ही दर्दनाक जीवन बिताया जो स्वतंत्र भारत के लिए लज्जा की बात ही मानी जायेगी।

मुकुन्दीलालजी का जन्म इटावा ज़िले की ओरैया तहसील में एक सम्पन्न वैश्य परिवार में १८९१ में हुआ था। इस तहसील में उनके परिवार की गिनती प्रतिष्ठित लोगों में होती थी। कई गाँवों में उनकी ज़मींदारी थी तथा खेती और व्यापार का भी विशाल काम था। तहसील के उच्च अधिकारी उनके घर पर आते तथा उन्हें सम्मान देते थे। बचपन में ही उनके पिता का स्वर्गवास हो गया था। घर में किसी प्रकार की कमी नहीं थी अतः उन्होंने अपनी पढ़ाई पर विशेष ध्यान नहीं दिया। खूब खाना, मुगदर फिराना और कुश्ती लड़ना, इन्हीं सब कामों में दिन बीत रहे थे। वे ऐसे दिन थे जब पुलिस लोगों को अकारण परेशान किया करती थी। यह अन्याय मुकुन्दीलालजी से सहन नहीं होता था। फलस्वरूप उनकी मुठभेड़ पुलिस वालों से होने लगी। पुलिस हमेशा उन्हें किसी न किसी मामले में फँसाने का प्रयास करती रही।

एक बार आपको एक बारात में जाने का मौका मिला। प्रभुदयाल पाण्डे नामक एक सज्जन इनके साथ थे। १९१५ का जमाना था। प्रथम विश्वयुद्ध का दौर था। जर्मनी की विजय के समाचारों का प्रभाव भारत में दिखायी देता था। उन्हें सुनकर युवकों का उत्साह बढ़ता था। रास्ते में इनके मुँह से अंग्रेज़ों के प्रति रोषभरे शब्द निकले। पाण्डेजी ने इनका उत्साह देखा और ओरैया में एक अंग्रेज़ विरोधी संगठन बनाने की सलाह दी। पाण्डेजी ने पं. गेंदालाल दीक्षित से सम्पर्क करने की भी सलाह दी। गेंदालालजी उन दिनों ओरैया में ही एक स्कूल में अध्यापक थे। मकुन्दीलालजी बारात से लौटकर तुरन्त दीक्षितजी से मिले और उनके दल में शरीक हो गये। संगठन को सुदृढ़ बनाने हेतु धन की समस्या थी। उसे हल करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
के लिए उन्होंने दीक्षितजी के साथ मिलकर कई डकैतियों में भाग लिया। अब इनका घर क्रान्तिकारियों का अड्डा बन गया। बाहर से जो भी लोग आते थे, वे इनके यहाँ ही ठहरते थे।

इसी समय एक डकैती की योजना बनी। उन दिनों अंग्रेज़ कम्पनियाँ औरेया से रूई, गल्ला, घी आदि खरीदती थीं। इसके लिए रोज ही हज़ारों रुपये रेल से आते थे। अतः क्रान्तिकारियों ने रेलगाड़ी लूटने का फैसला किया। लेकिन यह कार्य सफल नहीं हुआ। हुआ यह कि उस दिन रुपया आया ही नहीं। तब औरेया के एक सर्राफ के यहाँ डाका डालने का निश्चय किया गया। धन की समस्या को इस तरह हल करने के साथ-साथ इनका दल समय-समय पर परचे आदि भी बाँटता था। इन परचों में अंग्रेज़ों के विरुद्ध संघर्ष में कूद पड़ने के लिए नौजवानों का आह्वान किया जाता था।

पं. गेंदालाल दीक्षित ने एक योजना बनायी कि उत्तर प्रदेश के बारह ज़िलों के कलेक्टर तथा सुपरिण्टेण्डेण्ट आदि अधिकारियों को एक ही दिन मार डाला जाये। उनका कहना था कि इससे देश-विदेश में तहलका मच जायेगा। यह योजना पूरी होने के पहले ही दल का एक सदस्य दलपतिसिंह सरकारी गवाह बन गया और उसके बयानों के आधार पर कई साथी गिरफ्तार कर लिये गये। गेंदालालजी ग्वालियर में पकड़े गये। उन्हें ग्वालियर से मैनपुरी ले जाया गया। वहाँ उन पर मैनपुरी षड़यंत्र केस चलाया गया। दीक्षितजी रामनारायण नामक एक मुखबिर को जेल से अपने साथ भगाकर ले गये। इस तरह केस बिलकुल कमज़ोर हो गया। काफी समय तक तकलीफों के बाद गेंदालालजी का देहान्त दिल्ली के एक अस्पताल में २१ दिसम्बर, १९२० को हो गया।

दीक्षितजी की गिरफ्तारी के साथ ही दम्मीलाल, गोपीनाथ, चन्द्रधर जौहरी, फतहसिंह, राजाराम, शिवचरनलाल शर्मा तथा मुकुन्दीलाल भी गिरफ्तार कर लिये गये। रामप्रसाद 'बिस्मिल' के नाम भी वारंट जारी कर दिया गया। वे फरार हो गये। इस केस में मुकुन्दीलाल को पूरे सात साल की सज़ा मिली। जेल के भीतर उन्होंने असंख्य यातनाएँ झेलीं। वे इस सम्बन्ध में लिखते हैं : "जेल से कुछ साथी भाग निकले। इसके बाद हम लोगों को बेड़ियों और हथकड़ियों के साथ बाँध दिया गया। रात के बारह बजे गिनती होती थी। उसी समय भंगी आता था जो कनस्तरों में पेशाब आदि करा ले जाता था। इसके अतिरिक्त यदि रात को पेशाब लगे तो तसलों में ही करना पड़ता था। सुबह को उन्हीं तसलों में खाना दिया जाता था।"

१३ अप्रैल, १९२२ को दिल्ली में गोली चली। उस समय मुकुन्दीलालजी नैनी जेल में थे। गोलीकाण्ड के खिलाफ़ आपने जेल में अनशन करवाया, इसके लिए उनकी खूब पिटाई की गयी। एकान्त कोठरी में बंद कर दिया गया तथा चक्की डबल कर दी गयी। रिहा होने के बाद आप अपने गाँव आये। देखा, उनकी दुनियाँ वीरान हो चुकी थी। दिन तो काटने ही थे। उन्होंने आढ़त की एक कच्ची दुकान कर ली। लेकिन दिल कहीं और था। भारत को आज़ाद देखने की तमन्ना थी। वह शान्त कैसे बैठ सकते थे, जब तक कि उनका कार्य पूरा न हो जाये। अतः आप आढ़त की दुकान दूसरे को सौंपकर बुन्देलखण्ड चले गये। वहाँ आप शचीन्द्रनाथ बख्शी से मिले और पुनः पिस्तौल तथा कारतूसों से खेलने लगे। फिर बुन्देलखण्ड को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
छोड़कर बनारस गये। वहाँ से बख्शीजी की सलाह पर कलकत्ता चले गये। कुछ दिन बाद ही बनारस लौट आये। इसी समय एक ज़मींदार के यहाँ डाका डाला गया।

९ अगस्त, १९२५ को काकोरी नामक स्थान पर ट्रेन को रोककर काफी धन लूटा गया। इस डकैती के बाद फिर वारंट निकला। आज़ाद झाँसी चले गये और आप बनारस में ही रह गये। काकोरी की डकैती अंग्रेज़ों के मुँह पर करारा तमाचा था। डकैती के कई महीने बाद पूरे देश में पकड़-धकड़ शुरू हो गयी। काकोरी षडयंत्र केस में आप पर भी मुकदमा चला।

मुकुन्दीलालजी किसी प्रकार बचते हुए कभी अजमेर, कभी कानपुर में रहते थे। परन्तु अंत में बनारस में एक पुस्तकालय में आपको पकड़ लिया गया था। काकोरी षड़यंत्र केस के सम्बन्ध में आपको आजन्म कालेपानी की सजा मिली। बरेली सेंट्रल जेल में आपने बहुत कष्ट सहे। समय-समय पर संघर्षों में भी भाग लेकर क्रान्ति की आवाज बुलन्द करते रहे। लम्बी सजा काटने के बाद १९४२ में आप रिहा हो गये। लेकिन ब्रिटिश शासन ने इन्हें फिर पकड़ लिया और सात साल नौ महीने की सज़ा देकर फिर जेल भेज दिया। इसके बाद देश आज़ाद होने पर ही आप जेल से मुक्त हुए। आज़ादी के बाद आप औरैया में ही आकर रहने लगे।

समय-समय पर मुझे मुकुन्दीलालजी ने अनेक पत्र लिखे। मेरे पास उनके लिखे हुए पत्र करीब पच्चीस हैं। उन्होंने अपना कष्टमय जीवन किस तरह बिताया, यह इन पत्रों से स्पष्ट होता है। अतः उनके कुछ अंश उद्धृत कर रहा हूँ :

ओरैया
२७–७–६५

(१)

आदरणीय प्रिय बन्धुवर,

आपका पत्र मिला। समाचार जाने। आपने जो मिलने के लिए लिखा है उसको पढ़कर रोम-रोम खिल उठा। जब आप यहाँ आयेंगे तभी सब जीवन की घटनाएँ बताऊँगा। फोटो जो आपने मँगाया है सो खर्च की कमी के कारण फोटो नहीं खिचवाया। सरकार से जो पेंशन मिलती है उससे गुजर-बसर होना महान कठिन है। सरकार देशद्रोहियों की तो दामाद की तरह ख़ातिर करती है और उन देश-भक्तों को जिन्होंने हँसते-हँसते फाँसी को गले का हार समझा है, उनको हमारी सरकार २० या २५ रुपया पेंशन देकर देशभक्तों का अपमान करती है।

आपका शुभाकांक्षी
मुकुन्दीलाल

ओरैया
१४–८–६५

(२)

आदरणीय प्रिय बन्धु,

आपका कृपा पत्र मिला। पढ़कर हाल जाना। मुझे पेंशन सरकार से ६०) मासिक मिलती है। उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब आप यहाँ आयेंगे।

आपका अपना ही
मुकुन्दीलाल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(३) ओरैया

३०–९–६६

आदरणीय भाई साहब,

आपने लेख लिखने का जो कहा है, कोशिश करूँगा। शिक्षा की कमी के कारण लिखने में कठिनाई महसूस करता हूँ। मैंने १९ सालों में जो कष्ट उठाये हैं वह या तो भगवान जानता है या मेरा मन। स्वास्थ्य खराब रहता है। बुढ़ापा स्वयं एक बीमारी है।

आपका वृद्ध भाई
मुकुन्दीलाल

(४) ओरैया

२८–१२–६६

श्रद्धेय साथी,

सर्दी पड़ रही है पर सर्दी के कपड़ों का अभाव है। इतना रुपया नहीं है कि सर्दी के कपड़े बनवा सकूँ। तेज़ी इतनी है कि खाने-पीने का काम मुश्किल से चलता है।

आपका वृद्ध भाई
मुकुन्दीलाल

(५) ओरैया

११–७–६७

आदरणीय भाई,

सन् १९३७ में जेल से छूटने के बाद मैं एक ज़मींदार के घर पर काम करने लग गया। काम था भैंसों की सानी करना तथा पानी आदि भरना। कुछ दिन सिनेमा में काम किया। २० साल सज़ा काटी। ६०) रु. मिलते हैं। १५) रु. मकान किराया, १५) रु. कपड़ा और फुटकर तथा ४०) रु. में होटल में खाना खाता हूँ।

आपका भाई
मुकुन्दीलाल

बीमार मुकुन्दीलालजी के पत्रों से दिये गये इन उद्धरणों से अच्छी तरह दिखता है कि हमारी आज़ादी की लड़ाई का यह वीर सेनानी आज़ादी के इतने साल बाद तक किस तरह कष्टमय जीवन बिताता हुआ इस संसार से उठ गया। ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर गोविन्दचरण कर

☐ क्रान्तिवीर रामचन्द्र नरहरि बापट

[लेखक एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी हैं। आपको क्रान्तिकारी आन्दोलन में अजमेर के चीफ़ कमिश्नर पर गोली चलाने के अपराध में १० वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला था। जेल से छूटने के बाद एक पत्रकार के रूप में अपनी जीविका चलाते रहे। दैनिक 'आज' (वाराणसी) के सम्पादकीय विभाग में काम करते हुए आपने प्रचुर यश प्राप्त किया। अब अवकाश प्राप्त जीवन बिता रहे हैं। —सं.]

साहसी स्वभाव के निर्भीक और जुटकर जूझने वाले सिपाही स्वर्गीय क्रान्तिवीर गोविन्दचरण कर स्कूल जीवन को छोड़ क्रान्तिकारी दल में आ जुटे थे। काम करते-करते कुछ दिनों बाद ये पुलिस की नज़रों में चढ़ गये। १९१६ का जमाना था। बंगाल में चारों ओर गिरफ्तारी और नज़रबन्दी का हंगामा मचा था। एक दिन ये अपने साथी के साथ एक गिरे हुए मकान में ठहरे थे, उसे पुलिस ने घेर लिया। हथियार रहते आत्म-समर्पण कर देना इन्हें न भाया। हथेली पर जान ले पीछे के रास्ते से निकल जाने की कोशिश की। भरे रिवाल्वर के चढ़े हुए घोड़े पर उँगली धरकर वे बाहर को बढ़े। पीछे की ओर भी संगीनें चढ़ाये सशस्त्र पुलिस तैयार थी। पर यह बात उसके समझ के बाहर थी कि कोई अकेला आदमी उनके बीच से इस प्रकार निकल जाने का साहस करेगा। वह चकित होकर कुछ देर तक देखती रह गयी और कर बाबू कुछ दूर निकल गये। पुलिस को होश आया, तो उसने दौड़कर पीछा किया। कुछ गज की दूरी पर ये भागे चले जा रहे थे। पुलिस ने गोली चलायी। महाशय ने भी अपने रिवाल्वर से उनको जवाब दिया। वे भाग रहे थे, गोली चला रहे थे, और खाली रिवाल्वर को भरते भी जा रहे थे। बहुत देर तक यही क्रम जारी रहा। पुलिस बराबर पीछा कर रही थी। अब तक कर महाशय के बदन में पुलिस की गोलियाँ लग चुकी थीं, घावों से खून लगातार बह रहा था। इस कई मील की दौड़ ने इन्हें थका दिया। सामने दूर तक खुला मैदान था। परेशान हो आप एक घने धान के खेत में घुसकर जा छिपे और अपनी बची-खुची शक्ति तथा कार-तूसों से सामना करने का निश्चय किया। पुलिस ने इस खेत को चारों तरफ से घेर लिया। फिर गोलीवर्षा दोनों ओर से शुरू हो गयी, कई पुलिस वाले घायल हो गये, पर इसी बीच कर महाशय की तमाम गोलियाँ खत्म हो गयीं। उन्होंने थोड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

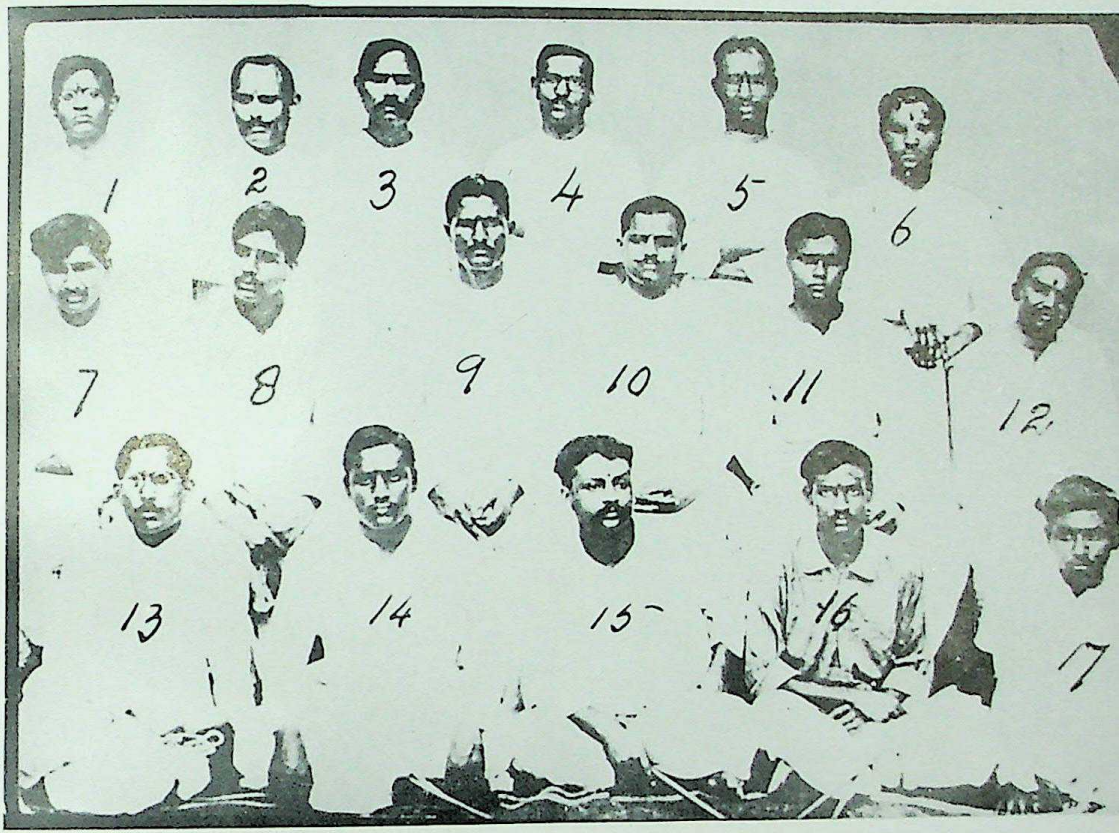

काकोरी केस चलने के दौरान अभियुक्तों का लिया गया सामूहिक चित्र।
१. जोगेशचन्द्र चटर्जी, २. प्रेमकृष्ण खन्ना, ३. मुकुन्दीलाल, ४. विष्णुशरण दुबलिश, ५. सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य, ६. रामकृष्ण खत्री, ७. मन्मथनाथ गुप्त, ८. राजकुमार सिनहा, ९. ठाकुर रोशनसिंह, १०. रामप्रसाद 'बिस्मल', ११. राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, १२. गोविन्दचरण कर, १३. रामदुलारे त्रिवेदी, १४. रामनाथ पाण्डे, १५. शचीन्द्रनाथ सान्याल, १६. भूपेन्द्रनाथ सान्याल, १७. प्रणवेश कुमार चटर्जी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

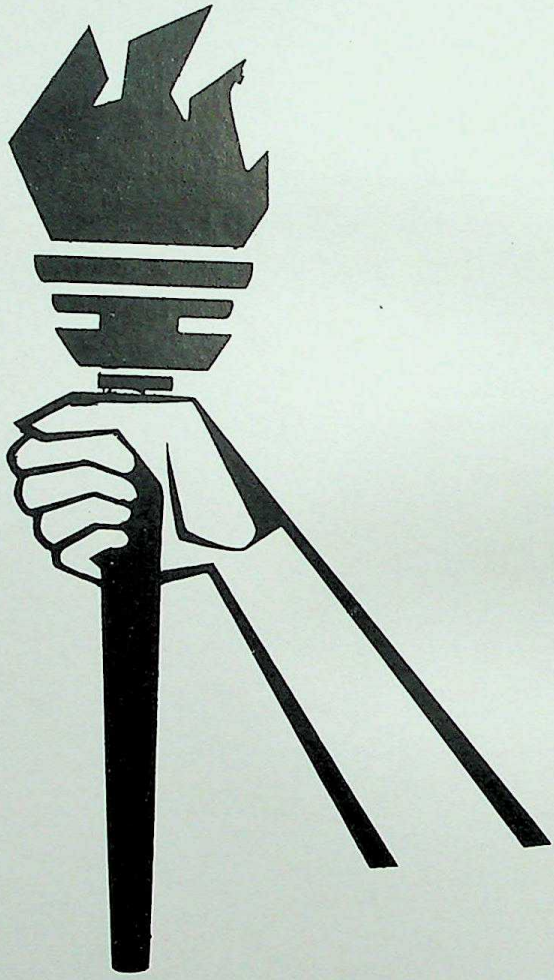

दूर जाकर रिवाल्वर को पेड़ की जड़ में गाड़ दिया और अपनी जगह पर आकर पड़ रहे। देह से बहुत-सा खून बह जाने और चक्कर से बेहोश होकर गिर पड़े।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बड़ी देर तक सामने से गोली चलाने की कोई आवाज़ न पाकर सशंकित चित्त, दबे पैरों, धीरे-धीरे पुलिस आगे बढ़ी। खेत में घुसकर देखा कि किसी आदमी का निर्जीव-सा शरीर पड़ा था। पुलिस ने जाकर इन्हें गिरफ्तार कर लिया। पानी की छींटें देकर उन्हें होश में लाया गया। तलाशी लेने पर कर महाशय के पास कोई हथियार न मिला। पुलिस ने पूछा, "रिवाल्वर कहाँ है?" आश्चर्य-चकित-से बनकर महाशय ने कहा : "कैसा रिवाल्वर? आपकी गोलियों ने मुझे छेदकर चलनी कर दिया और अब उल्टे आप मुझसे ही पूछते हैं, रिवाल्वर कहाँ है? मैं क्या जानूँ रिवाल्वर कैसा होता है और कहाँ है?" पुलिस वालों का मुँह बन्द था, वे क्या उत्तर दें!

गिरफ्तारी के पश्चात् बहुत दिनों तक अस्पताल की खाट पर लेटे रहने के बाद अच्छे हो जाने पर, आप पर शूटिंग केस चला। इन पर पुलिस को गोली से मारने का अभियोग लगाया गया, पर साथ में किसी हथियार के बरामद न हो पाने के कारण मुकदमा कुछ ठीक से गठ न सका। फिर भी इन्हें दस वर्ष की कालेपानी की सज़ा मिली। कालेपानी में जाकर इन्हें संग्रहणी की भीषण बीमारी हो गयी और उसी बीमारी से मरणासन्न अवस्था में आप लगभग चार साल बाद १९२० में बिना किसी शर्त के रिहा कर दिये गये।

स्वस्थ होते ही आपने असहयोग आन्दोलन में प्रचण्ड वेग से काम शुरू कर दिया। दिन-रात पुलिस पीछा कर रही थी, पर कर महोदय अपनी धुन में जुटे थे। १९२५ में सर्वश्री जोगेशचन्द्र चटर्जी और शचीन्द्रनाथ सान्याल की गिरफ्तारी के बाद ये संयुक्त प्रान्त के संगठन का संचालन करने के लिए आये। इन्होंने दौरा करके संघ को संचालित करने का प्रयत्न भी किया। ये महाशय इस समय अमीनाबाद पार्क के रामेश्वर होटल में डी. एन. चौधरी बीमा एजेण्ट के नाम से रहा करते थे। इनके यहाँ रहने का पता केवल एक देशभक्त, मैनपुरी षड़यन्त्र के भूतपूर्व बन्दी शिवचरनलाल को था, जो आजकल शायद मथुरा में देशोद्धार कर रहे हैं। आश्चर्य की बात है कि फिर भी पहली ही गिरफ्तारी में कर महाशय पकड़ लिये गये और व्यर्थ ही एक दूसरे सज्जन की चद्दर इनकी बताकर काकोरी में इनको आजीवन कालेपानी की सज़ा दे दी गयी।

कर महाशय आजीवन बड़े ही विनोदप्रिय व्यक्ति रहे। जेल जीवन में साथियों को अपने चुटकुलों से घण्टों हँसाते रहते थे। उनके बदन में गोलियों के व्रणचिह्न थे, जिन्हें वह विनोद के लहजे में ही, अभिमान के नहीं, अपनी बहादुरी के तमग़े कहा करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य

☐ क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा

[लेखक १९३०–३४ के काल में क्रान्तिकारी दल की कानपुर शाखा के एक सक्रिय सदस्य रहे हैं। अपनी क्रान्तिकारी गतिविधि के लिए आपने दीर्घ काल का कारावास भोगा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान आप देवली नज़रबन्द कैम्प और फतेहगढ़ सेण्ट्रल जेल में बन्द रहे और जेल में राजनीतिक बन्दियों की अनेक भूख हड़तालों और अन्य आन्दोलनों में सदा आगे होकर भाग लेते रहे। युद्धान्त में ही आप रिहा किये गये। देश स्वतन्त्र घोषित हो जाने के बाद आपने अपनी कालिजी शिक्षा पूर्ण की और एम. ए. की उपाधि ली। आजीविका के लिए आपने पत्रकार की वृत्ति अपनायी और आज एक प्रतिष्ठाप्राप्त पत्रकार हैं। ––सं.]

अनुभवी पत्रकार, गम्भीर विचारक, सरस प्रकृति, कला-रसिक, संगीत-मर्मज्ञ तथा उत्कट देशभक्त सुरेशचन्द्र भट्टाचार्यजी का जन्म १ अगस्त, १८९७ में पं. ईश्वरचन्द्रजी शिरोरत्न के घर बनारस में हुआ।

प्रथम महायुद्ध के समय आप सेण्ट्रल हिन्दू कालेज में पढ़ रहे थे और क्रान्तिवीर शचीन्द्र-नाथ सान्याल के अन्यतम साथी तथा कार्य के सहयोगी थे। बनारस षड़यंत्र के संबंध में आप गिरफ्तार किये गये। पुलिस सबूत के अभाव में मुकदमा न चला सकी। ले जाकर आपको उरई (ज़िला जालौन) में नज़रबन्द कर दिया। आप चार साल तक नज़रबन्द रहे। छूटने पर वहीं से निकलने वाले एक हिन्दी साप्ताहिक **'उत्साह'** का दो वर्ष तक सम्पादन किया। इसके बाद कानपुर चले आये। वहाँ आपने **'वर्तमान'** और **'प्रताप'** के सम्पादकीय विभाग में काम किया। **'प्रताप'** के सम्पादक आप वहाँ से अवकाश प्राप्त करने तक रहे।

क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल ने जब उत्तरी भारत में फिर से क्रान्तिकारी दल का संगठन शुरू किया तो सुरेशचन्द्रजी ने उसमें पूर्ण सहयोग दिया। सर्वश्री बी. के. दत्त, विजयकुमार सिनहा, रामदुलारे त्रिवेदी, सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय आदि को भट्टाचार्यजी के साथ ने ही क्रान्तिकारी मार्ग पर प्रेरित किया। कानपुर में आपने व्यायामशाला आदि का संगठन करके नवयुवकों में तीव्र जागृति उत्पन्न कर दी थी। क्रान्तिकारी दल की प्रान्तीय कमेटी के आप एक प्रमुख सदस्य थे।

काकोरी षड़यंत्र केस में भट्टाचार्यजी भी नेताओं में माने गये और आपको १० साल की कड़ी कैद की सज़ा हुई थी।

कुछ समय हुआ आप दिवंगत हो चुके हैं। ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामदुलारे त्रिवेदी

☐ क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा

स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामदुलारे त्रिवेदी ने अपनी रामकहानी अपनी पुस्तक **'काकोरी के दिलजले'** में लिखी है। उसमें उन्होंने लिखा है :

"उन्नाव ज़िले के एक छोटे-से गाँव करनाईपुर में मेरा जन्म हुआ। पिताजी बम्बई में मिठाई की दुकान करते थे। मेरा बाल्यकाल भी वहीं बीता और शिक्षा-दीक्षा भी वहीं हुई। मेरी ११ वर्ष की अवस्था थी कि पिताजी का देहान्त हो गया। छोटा भाई, माताजी और मैं, परिवार के तीन प्राणी निस्सहाय हो गये। अपनों ने भार जान घर से अलग कर दिया। बड़ी मुसीबत से कटे हैं वे दिन। भला-बुरा, ऊँच-नीच सब कुछ देखना पड़ा है उन दिनों अपने जीवन में। पान की दुकान, ट्राम की नौकरी, फौज में भरती, मील में काम, बिस्कुट का खोनचा, अखबारों की हाकरी आदि बहुत कुछ करना पड़ा है, अपने सबके जीवन-निर्वाह के लिए हमें उन दिनों।

"असहयोग आन्दोलन ने मुझे आकर्षित किया। कांग्रेस में स्वयंसेवक बन विदेशी कपड़े की दुकानों पर धरना दिया। काम से पीलीभीत गया था। वहाँ आन्दोलन के सम्बन्ध में गिरफ्तार करके दफा १०८ में ६ महीने की सज़ा दे दी गयी।

"बरेली जेल पहुँचते ही देखा, ठाकुर रोशनसिंहजी चक्की से मोर्चा ले रहे हैं। सुना, वहाँ के सुपरिण्टेण्डेण्ट लेफ्टिनेंट कर्नल मि. हेयर असहयोगियों से बड़ी नफ़रत करते हैं। सोचा था, शान्ति से क़ैद का समय काट देंगे, पर अधिकारियों की कृपा ने ऐसा न होने दिया, संघर्ष और घमासान का संघर्ष छिड़ गया।

"उन दिनों जेलों में सब काम क़ैदी को घंटी पर करने पड़ते। खाना-पीना, कपड़े धोना, नहाना, पाखाने जाना, आबदस्त लेना, उठना-बैठना, सब कुछ घंटी के साथ होना चाहिये। क़ैदी, आदमी की जगह बिलकुल बन्दर बना दिया जाता। पग-पग पर उसे अपमानित और लांछित किया जाता। मनुष्य के स्वाभिमान को नष्ट करने की यह सारी चेष्टा थी। इन्हीं मामलों पर अधिकारियों से ठन गयी और हथकड़ी, बेड़ी, मतभंगा, कालकोठरी और अन्त में २० बेतों पर जाकर उसकी

इतिश्री हुई । पागल कहकर पागलखाने भेजने की कोशिश भी हुई, पर न जाने क्यों अधिकारियों ने स्वयं ही उसे त्याग दिया । वहीं श्री विष्णुशरण से भेंट हुई ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अहिंसात्मक असहयोग के वापस ले लिये जाने से निराश अन्य देशभक्तों की भाँति क्रान्तिकारी दल की खोज में आप भी लगे और अन्ततः कानपुर में श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य के सम्पर्क से हिंदुस्तानी प्रजातंत्र संघ के पूर्ण सक्रिय सदस्य बन गये । परिणामतः उन्हें पाँच साल की सज़ा हुई ।

पाँच साल की सज़ा काटकर वह छूटे तो पुलिस उनके पीछे पड़ी रही । उन्हें पुनः कानपुर - देहरादून षड़यंत्र केस में पकड़ा गया, परन्तु षड़यंत्र केस पूर्ण प्रमाण के अभाव में चल न सका । जिन लोगों के पास कुछ हथियार वगैरह मिले थे, उन्हें आर्म्स एक्ट में सज़ा कर दी गयी । रामदुलारेजी को पाँच-पाँच हज़ार रुपये की दो जमानतों पर छोड़ दिया गया । एक लड़का, जिसके बारे में यह समझा जाता था कि वह पुलिस की ओर से क्रान्तिकारियों में जासूसी करता है, किसी कारण ज़हर खाकर मर गया, तो उसके खून के इल्जाम में भी इनको पकड़ा गया । परन्तु प्रमाण न जुटाये जा सकने के कारण छोड़ दिया गया, मामला अदालत तक न पहुँचा । पुनः दफा ११० में पकड़े जाकर इन्हें दो-दो हज़ार रुपये की नेकचलनी की जमानत पर छोड़ा गया ।

रामदुलारेजी एक सुयोग्य लेखक और बड़े ही उच्च स्वर के बोलने वाले सुवक्ता भी थे । उनकी **'काकोरी के दिलजले'** पुस्तक बहुत ही प्रभावपूर्ण सिद्ध हुई । वह अन्त तक कांग्रेस के सैनिक के रूप में काम करते रहे और काकोरी केस से सम्बन्धित सभी क्रान्तिकारियों की भाँति वह भी कांग्रेस को जनतंत्री समाजवाद की ओर बढ़ाने में आजीवन प्रयत्नशील रहे ।

कुछ वर्ष पूर्व ही उनका देहान्त हुआ है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर भूपेन्द्रनाथ सान्याल

☐ क्रान्तिवीर राजाराम शर्मा

खेलकूद में पटु, विवाद करने में दक्ष, फुर्तीले और स्वस्थ शरीर के कुशाग्र बुद्धि, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के तब के छात्र और स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल के छोटे भाई स्वर्गीय क्रान्तिवीर भूपेन्द्रनाथ सान्याल भी काकोरी षड़यन्त्र में एक संगठनकर्ता के रूप में पकड़कर खड़े किये गये । जेल में आने का इनका यह पहला अवसर था । जिस दिन पकड़कर पहले-पहल मलाका जेल इलाहाबाद पहुँचाये गये, तो ये मुस्करा रहे थे ।

मुस्कराहट तो सदैव ही इनके चेहरे पर खेला करती थी । जेलर ने इनसे पूछा, "कैसे आये जी ?" आपने अपनी उसी स्वाभाविक मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, "यही बम बनाने के मामले में ।" जेल के लाट ने घुड़ककर कहा, "हँसते क्या हो? ठीक से बात करो !" आपने बगैर शिकन लाये ही जवाब दिया, "मैं जिस तरह बात कर रहा हूँ यही ठीक ढंग है । इसमें फर्क लाना मेरे बूते की बात नहीं है ।" जेलर चुप हो रहा । मुकदमे में पाँच वर्ष की सजा हुई और आप अपनी पूरी सज़ा काटकर छूटे ।

भूपेन्द्रनाथजी प्रान्त के एक प्रमुख राजनीतिक कार्यकर्ता रहे हैं । द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में आप भी नज़रबन्द रहे । फतेहगढ़ सेण्ट्रल जेल में अपनी विनोदप्रियता से सभी साथी क़ैदियों का आप मनोरंजन करते रहे ।

देश स्वतंत्र होने के बाद आपने पत्रकारिता से अपनी आजीविका चलायी । आप एक कुशल वक्ता और शक्तिशाली लेखक भी थे ।

कुछेक वर्ष पूर्व आपका भी देहान्त हो चुका है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर राजकुमार सिनहा

☐ क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा

[लेखक ने १९३०–३४ के काल में कानपुर की गुप्त क्रान्तिकारी गतिविधि में बड़ी सक्रियता से प्रमुख भाग लिया और पकड़े जाकर कारावास भोगा। एक जानेमाने क्रान्तिकारी होने के कारण आपको भी द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान नज़रबन्द रखा गया था। देवली नज़रबन्द कैम्प और फतेहगढ़ सेण्ट्रल जेल में राजनीतिक नज़रबन्दों की भूख-हड़तालों और अन्य आन्दोलनों में आपने प्रमुख भाग लिया। युद्धान्त में ही आप नज़रबन्दी से मुक्त किये गये। —सं.]

कानपुर नगर उत्तर प्रदेश में औद्योगीकरण में आगे होने के कारण यहाँ का राजनीतिक जीवन सदा अग्रगामी रहता रहा है। १९२२ में यहाँ प्रथम कम्युनिस्ट केस चला। स्वर्गीय क्रान्तिवीर राजकुमार सिनहा को अपने विद्यार्थी जीवन से ही राजनीति से प्रेम था। वे इस मुकदमे को दिलचस्पी के साथ देखते थे। क्रान्तिकारी विचारधारा से आपका प्रथम परिचय यहीं से आरम्भ हुआ।

स्वर्गीय क्रान्तिवीर सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य कानपुर में बंगाली समाज में काफी हिलते-मिलते व्यक्ति थे। राजकुमारजी के मकान के सामने डी. ए. वी. विद्यालय था। वहाँ भी उनका आना-जाना था। सेवा भाव से अनुप्राणित राजकुमारजी रामकृष्ण मिशन में एक उत्साही कार्यकर्ता थे। सुरेश बाबू से उनका काफी सत्संग रहने लगा।

कानपुर से आप हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में जाकर दाखिल हुए। साहित्य से आपको विशेष अभिरुचि थी। स्वर्गीय क्रान्तिवीर राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी भी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र थे। उन्होंने वहाँ एक 'बँगला छात्र परिषद' संगठित कर रखी थी। उसके द्वारा राजकुमारजी और राजेन्द्रनाथजी को मिलने-जुलने का अवसर मिला, बातचीत चली और विश्वविद्यालय के टेरिटोरियल कोर्स के दक्ष सदस्य राजकुमारजी क्रान्तिकारी दल में शामिल हो गये।

परिषद की बैठक हो रही थी, सरस गायक भाई राजकुमारजी ने गाया :

जतो बार आलो जालाते चाई,
निबे जाय बारे-बारे।

(जितने ही बार ज्योति को प्रकाशित करना चाहता हूँ,
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
बारबार बुझ जाती है।)

समस्त उपस्थित मानव समाज मंत्रमुग्ध की तरह डोलने लगा। आपने एक निबन्ध राष्ट्रीय आन्दोलन और भारतीय छात्रों पर पढ़ा जिसकी बड़ी प्रशंसा हुई। मुकदमे में इस निबन्ध को राजद्रोहात्मक सिद्ध करने की चेष्टा की गयी थी।

२८ जनवरी, १९२५ को विश्वविद्यालय में हलचल-सी मच गयी। भारतीय प्रजातन्त्र संघ की ओर से प्रकाशित अंग्रेज़ी पर्चा **'दि रेवोल्युशनरी'** बड़े जोरों से यहाँ भी बँटा था, पर बाँटने वाले का कोई पता न था। बड़ी जाँच-पड़ताल हुई, पर कोई सूत्र हाथ न लगा। राजकुमार सिनहा ने भी विद्यालय के अधिकारियों को एक पर्चा अपने कमरे में पाये जाने की सूचना दी थी।

पुलिस ने जो चिट्ठी-पत्री पकड़ ली थी, उससे वह किसी विद्यार्थी की तलाश में थी। एक पत्र से उसका सन्देह राजकुमारजी पर गया। राजकुमारजी अपने सैनिक कैम्प में घायल हो कानपुर चले आये थे। पुलिस ने ३० अक्टूबर को बनारस में उनके कमरे की तलाशी ली। दो रायफलें तथा पुलिस की वर्दी वहाँ पुलिस के हाथ लगी और दूसरे ही दिन कानपुर में राजकुमारजी गिरफ्तार कर लिये गये। मुकदमे के दौरान उनके पिता का स्वर्गवास हो गया, पर राजकुमारजी ने बड़े ही धैर्य के साथ इस धक्के को सहन किया। आपको दस वर्ष की सज़ा हुई और आप अपनी पूरी सज़ा काटकर रिहा हुए।

द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में आप लगभग पाँच साल जेल में नज़रबन्द रहे। आपने जेल में रहते हुए जर्मन, रूसी आदि कई भाषाओं का अध्ययन किया और उनमें ऊँचा पाण्डित्य प्राप्त किया। आप रूसी भाषा के शिक्षक भी रहे।

संगीत से आपको विशेष प्रेम था और आप शास्त्रीय संगीत के अच्छे ज्ञाता और गायक भी थे। भारतीय साम्यवादी दल के सदस्य न होते हुए भी आपके विचार पक्के साम्यवादी थे। प्रसिद्ध क्रान्तिवीर विजयकुमार सिनहा के आप बड़े भाई थे।

कुछ वर्ष पूर्व आपका देहान्त हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामनाथ पाण्डे

☐ क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा

स्वर्गीय क्रान्तिवीर रामनाथ पाण्डेय को काकोरी केस के जज ने धारा १२१-ए और १२०-बी के अन्तर्गत पाँच साल की सज़ा दी थी, परन्तु अपील में अवध चीफ़ कोर्ट ने उनको दफ़ा १२०-बी के जुर्म से बरी कर दिया था और १२१-ए में उनकी सज़ा घटाकर तीन वर्ष कर दी थी।

सबसे कम उम्र के अभियुक्त हमारे दल में रामनाथ पाण्डेय थे। पर सबसे स्वस्थ शरीर पाया था आपने। स्वर्गीय क्रान्तिवीर राजेन्द्र लाहिड़ी से आप विशेष सम्बन्धित थे। एकमात्र माता रह गयी थी पीछे। ग़रीबी का घर था, सामने लम्बी सज़ा झूम रही थी, फिर भी आप विचलित न हुए। पुलिस ने चेष्टा की पर सफलता न मिली। अचल चट्टान की तरह खड़े रहकर रामनाथजी ने सज़ा को सुना और निर्द्वन्द्वता से सज़ा का काल बिताया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्गीय क्रान्तिवीर कुन्दनलाल गुप्ता

☐ क्रान्तिवीर मणिलाल शर्मा

काकोरी षड़यंत्र केस से सम्बन्धित क्रान्तिकारी दल हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के एक बहुत ही सक्रिय सदस्य स्वर्गीय क्रान्तिवीर कुन्दनलाल गुप्ता भी थे। परन्तु उन्हें उक्त केस में पकड़ा नहीं जा सका। अतः उनका नाम भी उक्त केस में नहीं आया। काकोरी षड़यंत्र केस में दल के लोगों की जो धरपकड़ हुई थी उससे दल के सम्बन्ध सूत्रों को जोड़कर दल को पुनः संगठित करने में कुन्दनलालजी ने अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद से मिलकर प्रमुखता से काम किया। उस काण्ड में दल में कुन्दनलालजी नं. १ के नाम से जाने जाते थे और चन्द्रशेखर आज़ाद नं. २ के नाम से। दल में उनकी महत्त्वपूर्ण स्थिति का इसी से अनुमान किया जा सकता है। उस समय वह दल में चन्द्रशेखर आज़ाद और सरदार भगतसिंह की कोटि के नेता थे और दल की केन्द्रीय समिति के सदस्य थे। काकोरी काण्ड के बाद पुनर्गठित दल का नाम हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना हो गया था।

कुन्दनलालजी भी लाहौर षड़यंत्र केस में पकड़े गये थे, जिसमें सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फाँसी की सज़ा हुई थी। कुन्दनलालजी को सात वर्ष कारावास का ही दण्ड मिला था। जेल जीवन में अध्ययन के परिणामतः और तत्कालीन राजनीति के विकास के प्रभाव से कुन्दनलालजी भी अपने अन्य साथियों के साथ मार्क्सवादी समाजवाद के सिद्धान्तों से प्रभावित हुए। जेल जीवन के बाद स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात वह नागपुर में पत्रकारिता से जीवनयापन करते रहे। बड़ी ही आर्थिक विपन्नता में उन्होंने अपना जीवन बिताया। जेल जीवन का उनके स्वास्थ्य पर बड़ा ही दुष्परिणाम हुआ और वह आजीवन प्रायः रुग्ण ही रहे, परन्तु वह अविचल सिद्धान्तवादी त्यागपूर्ण जीवन ही बिताते रहे।

गत १६ जनवरी, १९७८ को नागपुर में उनका देहान्त एक लम्बी बीमारी के बाद हो गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर विष्णुशरण दुबलिश

☐ क्रान्तिवीर गजानन सदाशिव पोतदार

[पोतदारजी हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना की ग्वालियर शाखा के एक सक्रिय सैनिक थे। अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद और सरदार भगतसिंह आदि से आपका संपर्क रहा। भगतसिंह आदि पर लाहौर में चलनेवाले मुकदमे के बाद जो दिल्ली में क्रान्तिकारी षड़यंत्र केस चला उसमें आप प्रमुख अभियुक्तों में थे। जेल में लम्बे अनशन के कारण आप मरणासन्न हो गये तो सरकार ने आपको जेल से रिहा कर दिया था। बाद में प्रमाणों के अभाव में सरकार ने वह केस वापस ही ले लिया था। आजकल आप बम्बई में चित्रपट क्षेत्र में लेखन कार्य से अपनी आजीविका चला रहे हैं। —सं.]

१९२०–२१ में रण-निमंत्रण पाकर क्रान्तिवीर दुबलिशजी कालेज सीमा को लाँघ राजनीतिक समरक्षेत्र में आ धमके थे। मेरठ ज़िला उन दिनों आन्दोलन में बहुत आगे था और उसमें भी माना कस्बा, दुबलिशजी का जन्म स्थान, अपनी गति में अद्वितीय था। उस दिन एक बड़ा भारी जुलूस कस्बे में निकलने वाला था। दुबलिशजी उसके प्रमुख नेता थे। जनता उनके इशारे पर मर मिटने को तैयार थी। हज़ारों मनुष्यों का जन-सागर लहरा रहा था। पदाधिकारियों ने निश्चय किया कि जुलूस न निकलने दिया जाये। उन्होंने इस हुक्म का एलान किया। फिर भी कांग्रेस स्वयंसेवकों ने निश्चय किया, जुलूस अवश्य ही निकलेगा।

जुलूस निकला, हज़ारों नर-नारियों के कंठ से गूँज रहा था: "झंडा ऊँचा रहे हमारा!" एकाएक लाल साफे की कतार निहत्थी जनता पर लाठी बरसाते हुए टूट पड़ी। उस समय के कलेक्टर साहब ने अपने हाथ में जूता उठाया और भरे बाज़ार में हज़ारों जनता के सामने जुलूस के नेता दुबलिशजी पर बरसाने लगे। जनता की आँखों में गुस्से से खून उतर रहा था, पर हमारे विष्णु खड़े मुस्करा रहे थे। वे जानते थे, उनके एक इशारे पर अभी खून की फाग खेल दी जायेगी। पर वे तो अहिंसा के सैनिक थे, वे ऐसा होना कैसे गवारा कर सकते थे।

गिरफ्तार करके मेरठ लाये गये और डेढ़ वर्ष की सज़ा मिली। इन्हें विशेष व्यवहार दिया गया। साथ के और लोग मामूली चोर-डाकू की तरह रखे जायें और ये विशेष व्यवहार भोग करें, इसे इन्होंने स्वीकार न किया और उस व्यवहार पर लात मार ये अपने अन्य भाइयों के साथ साधारण व्यवहार में सज़ा काटने लगे।

जेल से छूटने के बाद इन्होंने देखा, देश का राजनीतिक आकाश घने कोहरे से घिर रहा है । चारों ओर निराशा का राज्य है । पर चुप कैसे बैठा जाय ? ग़ुलामी का शूल जिसके दिल में हर वक्त चुभता हो वह निष्क्रिय कैसे बैठ सकता है । दौरे में स्वर्गीय क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल ने जाकर इनसे भेंट की । विचार-विनिमय हुआ और ये दल में आ गये । इस समय ये अपने ज़िले में कांग्रेस के एक प्रभावशाली और प्रतिष्ठित कार्यकर्ता थे, युवकों पर प्रभाव था, मेरठ वैश्य अनाथालय के मैनेजर थे । पार्टी की प्रान्तीय कमेटी के यह भी एक सदस्य थे । २६ सितम्बर १९२५ को आप भी गिरफ्तार किये गये । शिवचरणलालजी ने इन्हीं के अनाथालय में होने वाली बैठक में भाग लिया था । गिरफ्तारी न होना ही आश्चर्य की बात होती । केस में आपको पहले सात वर्ष और अपील में बढ़ाकर दस वर्ष की सज़ा दी गयी थी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जेल में भी आपका प्रभाव कैदियों पर विशेष रूप से रहता था । इससे घबड़ाकर जेल अधिकारियों ने नैनी सेण्ट्रल जेल में जो दंगा हुआ था उसमें इन्हें प्रमुख अभियुक्त बनाया । सेशन कोर्ट से उन्हें आजीवन कालेपानी की सज़ा दी गयी थी, पर इलाहाबाद हाई कोर्टने अपील में उसे घटाकर पाँच वर्ष कर दिया ।

हँसमुख और विनोदप्रिय दुबलिशजी रिहा होते ही कांग्रेस कार्यक्षेत्र में आ खड़े हुए और उसी साल संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी के सदस्य तथा ज़िला कांग्रेस कमेटी, मेरठ के सभापति चुन लिये गये ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान आप पुनः नज़रबन्द कर लिये गये और युद्धान्त में ही छोड़े गये ।

स्वराज्य होने पर आप संसद सदस्य भी रहे । आप सदैव कांग्रेस को समाजवादी जनतंत्री पथ पर चलाने में प्रयत्नशील रहे । आजकल आप अस्वस्थता की हालत में अपने घर मेरठ में रह रहे हैं, परन्तु अपने क्रान्तिकारी आत्मतेज से जगमगाते हुए ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ बख्शी

☐ क्रान्तिवीर शंकरराव मलकापुरकर

[लेखक क्रान्तिकारी आन्दोलन के चन्द्रशेखर आज़ाद काल में झाँसी में उनके निकट सहयोगी रहे, साथ ही कांग्रेसी कार्यकर्ता भी । भुसावल बम केस के लब्धख्याति क्रान्तिवीर सदाशिवराव मलकापुरकर के आप बड़े भाई हैं । उक्त केस के अभियुक्तों को जेल में कौशल से एक भरा पिस्तौल आपने ही पहुँचाया था, जिससे खुली अदालत में अभियुक्त भगवानदास ने लाहौर केस के बदनाम इकबाली गवाह फणीन्द्र घोष और जयगोपाल पर गोलियाँ चलायी थीं । क्रान्तिकारी और कांग्रेसी दोनों आन्दोलनों में आप अनेक बार गिरफ्तार किये गये और आपको कारावास का दण्ड मिला । — सं.]

विघ्न-बाधाओं के पहाड़ों को तोड़ते हुए अपना रास्ता बनाकर लक्ष्य की ओर तेज़ी से सतत बढ़ने का प्रयत्न करना, विशेषता है क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ बख्शी के जीवन की । ग़ज़ब के संगठनकर्ता हैं वे । किसी व्यक्ति या व्यक्तित्व का प्रभाव उन्हें प्रभावित नहीं करता । हर काम अपनी राय के अनुसार करना ही उनका स्वभाव है । नीति की टेढ़ी-मेढ़ी चालें परखना और चलना, उनके लिए बहुत ही सरल काम होता है ।

२५ दिसम्बर, १९०० को बख्शीजी का जन्म बनारस शहर में हुआ और १९२१ में आपने ऐंग्लो-बंगाली हाई स्कूल से मैट्रिक परीक्षा पास की । असहयोग आन्दोलन का रण-डंका बजा, पर बख्शीजी इस ढंग से कार्य करने के क़ायल न हो सके । देश एक बहिया में बह रहा था । कोई इनकी सुनने को तैयार न था । फिर भी ये अपनी विचारधारा पर डटे थे । इनके विचारों की गन्ध पुलिस को लग गयी । कालेज से निकलना-पैठना, दोस्तों से मिलना-जुलना, पुलिस की निगरानी ने मुश्किल कर दिया । परेशान होकर आपने कालेज के साथ ही पढ़ाई को भी सलाम कर दिया ।

मैदान में आपने अपनी विचारधारा का समर्थन प्राप्त करने के लिए व्यायामशालाओं का संगठन प्रारम्भ किया । बनारस में सफलता से चलने वाली कई व्यायाम संस्थाएँ बख्शी-जी के हाथों निर्मित हुई हैं । संयुक्त प्रांत में लम्बी तैराकी की प्रतियोगिता का श्रीगणेश करने में भी आपका प्रमुख हाथ था ।

दिल्ली में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन के अवसर पर स्वर्गीय क्रान्तिवीर जोगेशचन्द्र चटर्जी और शचीन्द्रनाथ बख्शी की भेंट हुई । विचारों की एकता ने दोनों को घनिष्ठ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बना दिया और बख्शीजी पूरी तौर से क्रान्तिकारी दल के संगठन में जुट पड़े। कुछ दिनों बनारस में काम करने के बाद इन्हें दल का संगठन करने के लिए झाँसी भेजा गया। निर्वाह के लिए वहाँ जाकर आपने म्युनिसिपैलिटी में क्लर्की स्वीकार कर ली और दिन-रात युवकों से मिलकर आप संगठन में जुट पड़े। भुसावल बम केस के प्रसिद्ध राजबन्दी श्री भगवानदास तथा श्री सदाशिराव उसी जमाने के आपके सहयोगी हैं। भूखे-प्यासे मीलों साइकिल पर दौड़कर आप दल के सदस्यों से जाकर मिला करते थे। एक बार ज़रूरत पड़ जाने पर तो आप बीच में कहीं रुके बिना साइकिल से झाँसी से कानपुर गये थे।

काकोरी काण्ड के बाद पुलिस इनके पीछे पड़ गयी और यह भी काफी सतर्क रहने लगे। २९ सितम्बर, १९२५ को गिरफ्तारी के दिन पुलिस ने इनका मकान भी जा घेरा, पर ये तो बँगला नाटक देखने गये थे। लौटते समय सुना कि लाल साफे ने घर घेर रखा है तो चुपके से पास वाली गली के एक मकान में आ बैठे और तलाशी का तमाशा देखते रहे। जब सब लोग तलाशी लेकर चले गये तो आप कुछ आवश्यक सामान मँगाकर फरार हो गये।

क़ैद या फाँसी से बचना उद्देश्य न था बख्शीजी के उड़नछू होने का। वे घूम-घूमकर देश भर में इस छिन्न-भिन्न होते हुए संगठन को मज़बूत बनाना चाहते थे। कानपुर कांग्रेस का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। प्रान्त की पुलिस जानती थी कि काकोरी काण्ड कराने वाले दल के दिलजले सदस्य इस अवसर से लाभ उठाकर अपने संगठन को सुदृढ़ बनाने के लिए यहाँ आने की ज़रूर कोशिश करेंगे। इसलिए उनको गिरफ्तार करने के लिए उन्हें पहचानने वाले खास खुफिया के सिपाहियों के झुण्ड के झुण्ड वहाँ इकट्ठ किये। मुकदमे के मुखबिरों को बिना पट्टे के खुला छोड़ दिया गया कि शिकार को देखकर गुर्रायें और आवाज़ पाकर शिकारी अपना निशाना लगायें। गिद्ध की तरह सबकी निगाहें खोज रही थीं, पर वहाँ तो मुर्दा न था, थे सजीव कार्यकर्ता बख्शीजी, जो प्रतिनिधियों के हर कैम्प में घूम कर अपना काम करते रहे। अनेक परिचितों ने उनको इस प्रकार वहाँ घूमकर काम करते देख दाँतों उँगली दबायी। यदि कहीं वे वहाँ गिरफ्तार हो गये होते तो हमारे बहुत-से बुद्धिमान बुजुर्ग उनके इस काम को मूर्खतापूर्ण बताकर खिल्ली उड़ाते, पर क्रान्तिकारी कार्यकर्ता फूँक-फूँककर कदम रखना नहीं जानते, आग से खेलना ही उनका जीवन होता है, खतरे में घुसकर काम करना ही उनकी आदत होती है।

आपने प्रान्त भर का दौरा किया। एक रात को प्रतापगढ़ में एक मित्र के घर सो रहे थे। पेशाब की हाजत हुई, बाहर निकलकर सड़क पर पेशाब करने लग गये। पुलिस का एक सिपाही जा रहा था, उसने आकर इन्हें पकड़ लिया। हथियार घर के अन्दर रह गया था। थाने जाते हैं तो सम्भव है कलई खुल जाये। बड़ी मुश्किल सामने थी। आपने गिड़गिड़ाकर देहाती बनकर अपनी अनजानकारी के लिए माफी माँगते हुए चमचमता हुआ चाँदी का एक सिक्का सिपाहीराम के हाथ पर रख दिया। स्तुति और दक्षिणा के बाद सिपाही देवता इन्हें छोड़कर चलते हुए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संयुक्त प्रान्त में अधिक दिन इस जगह रहना सम्भव न था। काम करना, पुलिस से बचना, रोज़ी और सफर के लिए पैसे पैदा करना, सब कुछ करके भी निरापद रहना, कोई आसान खेल न था। बख्शीजी बम्बई चले गये। खिलौनों की फेरी लगाकर ख़र्च के लिए पैसा इकट्ठा करते और साथ ही उपयुक्त पात्र की तलाश में घूमते। पर यहाँ आपको सफलता नज़र न आयी तो आप कराची चल दिये। वहाँ जाकर मज़दूरों की दशा समझने के लिए, आने वाले जहाज़ों पर कोयला लादने वाले कुली का काम स्वीकार किया। उन्हीं के साथ रहने लगे।

ऐसे अवसर पर यह बड़ा सरल था कि बख्शीजी कुली के रूप में किसी जहाज़ पर काम करते हुए विदेश निकल जायें, पर आपने ऐसा न किया। अपने दल को यहाँ पनपते न देख, बिहार चले गये, और वहाँ अपने ही पैरों पर निर्भर रहकर काम करते रहे। अन्त में एक दिन भागलपुर में गिरफ्तार कर लिये गये। अशफ़ाक़उल्ला खाँ के साथ उनका अलग मुकदमा चला और आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई।

जेल जीवन भी आपका संघर्षमय ही रहा। अधिक दिनों तक जेल में ये कभी न रह सके। अन्त में १९३७ में आपने समस्त राजबन्दियों की रिहाई के लिए आमरण अनशन किया। देश में हलचल मच गयी। लम्बे अरसे तक अनशन चलने के बाद प्रान्त में देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने उस आन्दोलन को जनता के हाथों से लेने तथा अन्य तमाम बातों को शीघ्र ही सरकार द्वारा मंजूर करवा देने का वादा करके समाप्त करवाया। कांग्रेस मंत्रि-मण्डल ने कार्यभार सँभालते ही काकोरी के राजबन्दियों को रिहा कर दिया।

बख्शीजी ने कांग्रेस में दृढ़ता से काम किया। वह बहुत समय तक उत्तर प्रदेशीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय मंत्री रहे। आपने स्वराज्य प्राप्त हो जाने पर बड़ी ग़रीबी के दिन बिताये हैं। कांग्रेस में चलने वाली आपाधापी और आदर्श-भ्रष्टता से ऊबकर आप कांग्रेस से अलग हो गये और बनारस से जनसंघ के टिकट पर विधानसभा के सदस्य चुने गये।

सौभाग्य से पुराने क्रान्तिकारियों में आप अभी हमारे बीच में हैं और ७७ वर्ष की आयु में भी नौजवानों जैसा उत्साह रखते हैं, यद्यपि शरीर अब रोग-जर्जर हो रहा है।

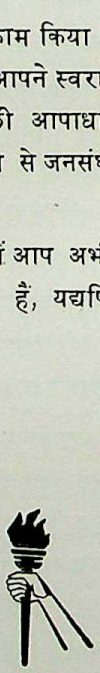

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री

☐ क्रान्तिवीर शिव वर्मा

[लेखक अमर शहीद सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद के अत्यन्त निकट सहयोगियों में रहे हैं । लाहौर षड़यंत्र केस में अदालत ने आपको दल के प्रमुख नेताओं में माना था और आजन्म कालेपानी की सज़ा दी थी । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आपने लेखक और पत्रकार की आजीविका अपनायी और अमर शहीद सरदार भगतसिंह के समाजवादी लक्ष्य की पूर्ति के लिए निरन्तर संघर्ष करते रहे हैं । आपने समाजवाद पर आम जनता की समझ में आनेवाली सरल भाषा में अनेक पुस्तकें प्रकाशित की हैं । अमर शहीद भगतसिंह, आज़ाद, सुखदेव, राजगुरु के आपके संस्मरण जो **'संस्मृतियाँ'** नाम से प्रकाशित हुए हैं, बहुत ही जनप्रिय हुए हैं—उन शहीदों के मानवीय गुणों के मर्मस्पर्शी चित्रण, वर्णन के साहित्यिक सौन्दर्य और उनके समाजवादी दर्शन की प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति, सभी दृष्टियों से । आप मार्क्सवादी साम्यवादी दल के आज भी एक महत्त्वपूर्ण सक्रिय सदस्य हैं । —सं.]

क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री का जन्म ३ मार्च, १९०२ को हुआ था । आप चिखली ग्राम, ज़िला बुलढाना (बरार) के निवासी हैं । बाल्यकाल से ही आपका ध्यान राजनीति की ओर विशेष रूप से था । स्कूल में पढ़ते हुए सुना, लोकमान्य तिलक का व्याख्यान पास के एक गाँव में होने वाला है । चलकर पहुँचे, व्याख्यान सुना, पर कुछ समझ में न आया । लोकमान्य ने कहा —— किसी को कोई सन्देह हो तो प्रश्न कर सकता है । आपने उठकर पूछा —— हम बच्चे अपने देश के लिए क्या करें ? उत्तर मिला —— घर में रहकर विद्याध्ययन, गुरु और माता-पिता की सेवा । उत्तर इन्हें कुछ रुचा नहीं । उस समय इनका विचार था, किसी दुष्ट ने बच्चों को परेशान करने के लिए ये लिखने-पढ़ने का झंझट उन पर लाद दिया है ।

प्रेमी और निष्कपट हृदय पाया है खत्रीजी ने । सींक-से दुबले शरीर में ग़ज़ब की निर्भीकता और सच्चाई का संचय है । एक बार जो संसर्ग में आया, खत्रीजी का अपना बन गया । सर्वस्व समर्पण करके भी मित्र की सहायता हो सके तो खत्रीजी पैर पीछे रखने वाले नहीं । अपनी इसी सम्पत्ति के कारण वे उस बाल्यकाल में ही किसी के बहुत निकट हो गये, पर समाज की रूढ़ियाँ इस निकटता को रहने देने में बाधक सिद्ध हुईं । घरवालों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ने विरोध करके सरस जीवन को नीरस बना दिया। विरागी हो रामकृष्णजी उदासीन साधु हो गये। सोचा था, संसार की मंगल कामना करेंगे, ईश्वर का भजन करेंगे, संसार के झंझटों से अलग रहकर हृदय कुछ शान्ति पा सकेगा। पर थोड़े दिनों में इस नये उदासीन साधु गोविन्द प्रकाश ने देखा, उसका सोचना केवल भ्रम था।

साधु-समाज के अन्दर जाकर उन्होंने देखा, इस समाज के इनेगिने व्यक्ति छोड़ सारा समाज महापतित, भ्रष्ट, दुराचारी, ऐयाश, लोभी, निकम्मा, निठल्ला, ईर्षालु, अपढ़, अज्ञानी, नशेबाज़ और घोर तामसिक प्रवृत्ति का है। उन्हें अपने जीवन की वह निरर्थकता शूल-सी चुभने लगी। सुधार के लिए उन्होंने उदासीन महामण्डल का संगठन किया।

इससे पहले वे बनारस में एक स्थान पर पढ़ने-पढ़ाने एक महाशय के यहाँ जाया करते थे। महाशयजी इनकी बड़ी आवभगत किया करते थे। दुर्गा पूजा के अवसर पर एक दिन जब ये उन्हीं महाशय के घर पहुँचे तो इनकी बड़ी खातिर की गयी। खूब आदर के साथ स्नान कराया, साफ कपड़े पहिनने को दिये, अच्छा भोजन कराया। पर इस सारे समय में उन्होंने देखा, जिस छोटे बालक को वे पढ़ाते थे वह रो-सा रहा है। एकान्त पाते ही उस बालक ने आकर कहा——मास्टर साहब, यहाँ वे भाग जाइये। पिताजी आपका बलिदान चढ़ाना चाहते हैं। खत्री साहब के काटो तो खून नहीं। चुपके से वहाँ से खिसक गये और इस प्रकार उनके प्राण बचे।

बनारस में एक दिन आज़ाद से उनकी भेंट हुई। बातचीत चली, मिलना-जुलना शुरू हुआ और बातचीत के सिलसिले में आज़ाद ने देश के लिए काम करने के हित इन्हें क्रान्तिकारी दल में शामिल होने का आमंत्रण दिया। एक अच्छे काम में जीवन उत्सर्ग करने की सम्भावना सामने देख इन्होंने उसे स्वीकार कर लिया।

हिन्दी, मराठी, गुरुमुखी, अंग्रेज़ी भाषाओं के ज्ञाता रामकृष्ण दल में बहुत ही उत्साही कार्यकर्ता सिद्ध हुए। अनेक सैनिक कार्यों में भी बड़ी शान से अपना फ़र्ज़ अदा किया। इन्हें पुलिस ने पूना में गिरफ्तार किया था। कुछ दिनों लालच और बन्दर-घुड़की दिखाने पर भी जब पुलिस इन्हें विश्वासघातक न बना पायी, तो झल्लाकर पीछा छोड़ दिया। मुकदमे के दौरान यह सिद्ध हुआ कि आपने मध्य प्रान्त और महाराष्ट्र में भी दल संगठन करने का काफ़ी उद्योग किया था। मुकदमे में आपको दस वर्ष की सज़ा हुई।

पूरी सज़ा काटकर छूटने के बाद भी आपने आराम नहीं किया। पहले राजकुमारजी के घर का प्रबन्ध करने में जुटे। बाद में जोगेश चटर्जी के अनशन के सिलसिले में प्रचार करते रहे और इसके बाद समस्त राजनीतिक बन्दियों को छुड़ाने के लिए धुआँधार आन्दोलन आरम्भ कर दिया।

तब से आप निरन्तर स्वतंत्रता के सैनिकों की सहायता करने, उनके इतिहास को प्रकट करने तथा उनके प्रति जनता की श्रद्धा जागरूक रखने के कार्य में निरन्तर आगे रहते हैं ताकि उससे प्रेरित होकर भारतीय जनता समाजवादी जनतंत्र स्थापित करने में सफल हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्ता

☐ क्रान्तिवीर शिव वर्मा

अद्वितीय मेधावी सुलेखक, कई भाषाओं के पण्डित, राजनीतिक गुत्थियों और विचारधाराओं के सुदक्ष ज.नकार, बहुमुखी प्रतिभावान क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्त का बनारस के एक प्रतिष्ठित वैद्य वंश में १९०७ में जन्म हुआ। बाल्यकाल से ही आप बड़े होनहार सिद्ध हो रहे थे। पाँच वर्ष की अवस्था में ही इनकी अवस्था के अनुरूप कठिन से कठिन गणित के प्रश्न ये सुलझा लेते थे। इनके पिता वीरेश्वरजी ने इनकी शिक्षा का प्रबन्ध प्रारम्भ में अपने ही जिम्मे रखा। वे वीरटनगर (नेपाल) में एक स्कूल में हेडमास्टर थे। दो वर्ष तक मन्मथनाथजी ने उसी स्कूल में पढ़ा। वहाँ से बनारस आने पर इनके पिता ने इन्हें काशी के राष्ट्रीय विद्यालय में भरती करा दिया। इनके पिता बड़े निर्भीक राष्ट्रवादी व्यक्ति थे। वे अपने बालक को प्रखर देशभक्त बनानाच ाहते थे।

१९२१ में ब्रिटेन के युवराज (प्रिंस आफ़ वेल्स) के बहिष्कार की धूम थी। शहर के नेताओं के साथ बहिष्कार का नोटिस बाँटते हुए मन्मथनाथजी भी गिरफ्तार कर लिये गये और इन्हें तीन महीने की सज़ा दे दी गयी। जेल से छूटकर ये फिर पढ़ने में लग गये और १९२३ में इन्होंने महात्मा गाँधी द्वारा स्थापित सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय शिक्षा संस्था काशी विद्यापीठ से विशारद परीक्षा पास की।

उन्हीं दिनों आपका परिचय बंगाल के एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता से हुआ और उससे विचार-विनिमय करके आप दल में सम्मिलित हो गये। बनारस पुलिस की नज़रों में आप बुरी तरह खटकते थे। सच पूछिये तो उस समय के बनारस के सुदृढ़ संगटन की सारी शक्ति बख्शी-लाहिड़ी-मन्मथ की इस त्रिमूर्ति में केन्द्रित थी। तीनों व्यक्तियों ने एकमत होकर अपना व्यक्तित्व कर दिया था 'भारतीय प्रजातंत्र संघ' का व्यक्तित्व।

उन दिनों इन्होंने कुछ पत्र 'एक क्रान्तिकारी' के नाम से क्रान्तिकारी आन्दोलन के बारे में महात्मा गाँधी को लिखे थे, जिनका उत्तर अपने साप्ताहिक **'यंग इण्डिया'** में महात्माजी ने दिया था। इन पत्रों ने उस समय राजनीतिक जगत में उथल-पुथल-सी मचा दी थी। मुकदमे में पुलिस इन्हें फाँसी पर लटकवा देना चाहती थी। कारण, दल ने जितने सैनिक काम किये थे उनमें से बहुतों में गुप्तजी ने बड़े ही सशक्त रूप में भाग लिया था। पर उसकी आशा पूरी न हुई। आपको १४ वर्ष की सजा हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जेल में आपने कई बार उपवास किया और एक अनशन को आपने तभी समाप्त किया जब काकोरी के कैदी 'बी' क्लास के घोषित कर दिये गये। इस अनशन में श्री राजकुमार सिनहा और श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी भी साथ थे।

आपने **'भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास'** लिखकर एक महान अभाव की पूर्ति की है। आपने रूस, ब्रिटेन आदि देशों की यात्रा भी की है और एक भारतीय क्रान्तिकारी बुद्धिजीवी और लेखक के रूप में अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है। आपने कई सांस्कृतिक साहित्यिक उपन्यास और कहानियाँ भी लिखी हैं। अंग्रेज़ी में भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन पर लिखी आपकी पुस्तक *They Lived Dangerously* बहुत प्रसिद्ध हुई है।

आपने **'क्रान्ति युग के अनुभव'**, **'श्री चन्द्रशेखर आज़ाद'**, **'विजय यात्रा'**, **'अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास'** नामक पुस्तकें भी लिखी हैं। पत्र-पत्रिकाओं में तो क्रान्तिकारी आन्दोलन, राजनीति तथा अन्य विषयों पर हिन्दी, बँगला में आपके लेख बराबर प्रकाशित हुआ करते हैं। आप पक्के मार्क्सवादी क्रान्तिकारी हैं।

भारतीय क्रान्तिकारियों के लक्ष्य——भारत में ऐसा समाजवादी जनतंत्र स्थापित करना, जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण सम्भव न हो—— को सामने रखकर आज भी आपकी लेखनी अविराम गति से चल रही है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर प्रेमकृष्ण खन्ना

☐ क्रान्तिवीर शिव वर्मा

क्रान्तिवीर प्रेमकृष्ण खन्ना को काकोरी केस में अधिक सबूत के अभाव में केवल पाँच साल की ही सज़ा हुई थी, परन्तु वह दल के एक प्रमुख और सक्रिय सदस्य थे।

गवर्नमेण्ट रेलवे के चीफ़ इंजीनियर श्री रामकृष्ण खन्ना के सुपुत्र श्री प्रेमकृष्ण खन्ना १९२१ से ही कांग्रेस आन्दोलन में आ गये थे। आन्दोलन में आपने देहली में लाला शंकरलाल और स्वर्गीय डा. अन्सारी के साथ खूब जोरों का काम किया था। वहाँ से आप शाहजहाँपुर चले गये। यहाँ पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' से आपकी मुलाकात हो गयी और दोनों में गाढ़ी मित्रता हो गयी। प्रेमकृष्णजी रेलवे कंट्राक्टरी का काम करते थे और एक माउज़र पिस्तौल का लाइसेन्स रखते थे। पुलिस ने यह साबित करने की चेष्टा की थी कि रामप्रसादजी इसी पिस्तौल से निशाना सीखते थे और इन्हीं के नाम से लाये गये कारतूस रेल डकैती में इस्तेमाल हुए थे। पुलिस ने इन्हें पथभ्रष्ट करने की बड़ी चेष्टा की, पर सब व्यर्थ।

बाप के क्रोध की रंचमात्र परवाह किये बिना ये अपने मार्ग पर डटे रहे। जेल से रिहाई के बाद आपने कांग्रेस आन्दोलन में पूरे तौर से योग दिया। आप किसान सभा के समर्थक और पक्के समाजवादी हैं। पुस्तकें एकत्र करने का आपको बड़ा शौक है।

आप कांग्रेस के टिकट पर संसद सदस्य रहे हैं और कांग्रेस को क्रान्तिकारियों के लक्ष्य समाजवादी जनतंत्री पथ पर चलाने में आप भी सतत प्रयत्नशील रहे हैं। सौभाग्य से आज भी आप हमारे बीच में हैं और हमारे प्रगति संघर्ष में महत्त्वपूर्ण योगदान करते रहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

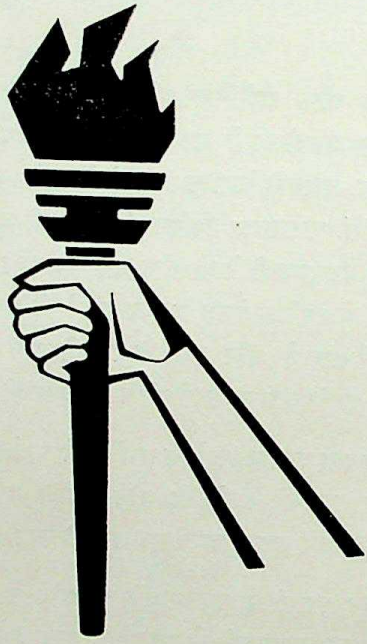

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

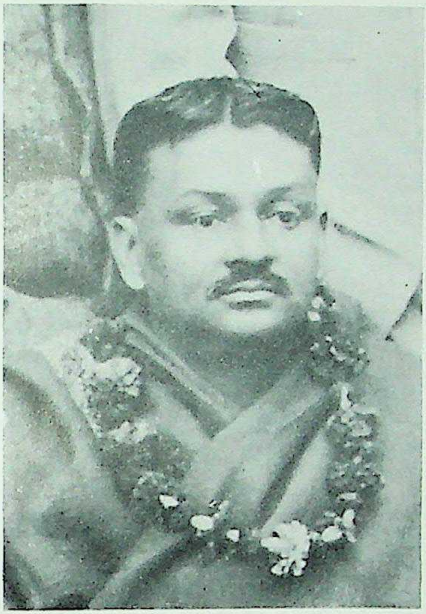

स्वर्गीय क्रान्तिवीर
शचीन्द्रनाथ सान्याल

स्वर्गीय क्रान्तिवीर
जोगेशचन्द्र चटर्जी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

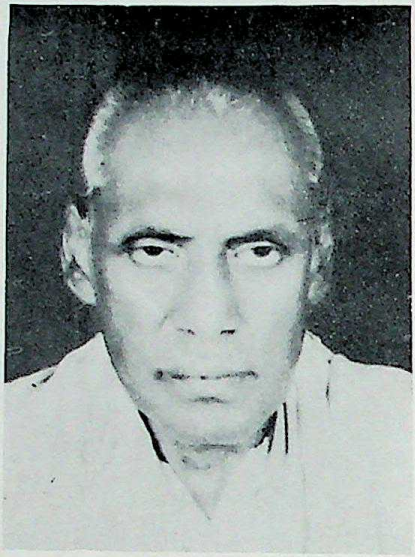

स्वर्गीय क्रान्तिवीर
रामनाथ पाण्डे

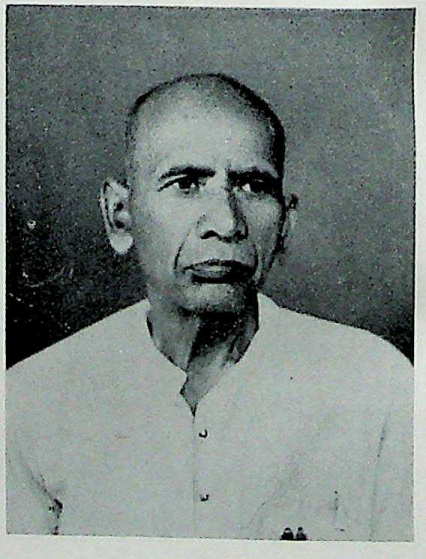

स्वर्गीय क्रान्तिवीर
कुन्दनलाल गुप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर
शचीन्द्रनाथ बख्शी

क्रान्तिवीर
विष्णुशरण दुबलिश

CC-0. Panini Kanyakubja Gurukulam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिवीर
मन्मथनाथ गुप्त

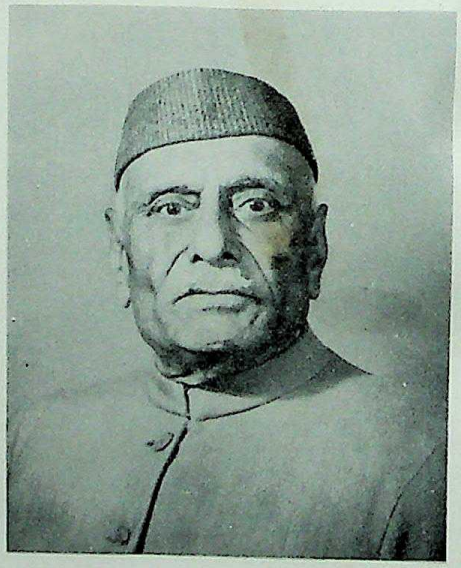

क्रान्तिवीर
प्रेमकृष्ण खन्ना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय स्वातंत्र्य संघर्ष की प्रगति : एक सिंहावलोकन

☐ डा. भगवानदास माहौर

[लेखक झाँसी में अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के विश्वासपात्र साथी रहे हैं। लाहौर षड़यंत्र केस (१९२९) में आप फरार घोषित किये गये और सितम्बर १९२९ में भुसावल बम केस में गिरफ्तार किये गये। जलगाँव की अदालत में केस चलते समय आपने सरदार भगतसिंह के केस के अप्रूवरों पर गोली चलायी, आजीवन कालेपानी की सज़ा पायी। स्वतंत्रता के बाद अध्यापक का जीवन अपनाया। १९६५ में आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. उपाधि पायी। गत वर्ष बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय ने आपको डी. लिट. की उपाधि से सम्मानित किया।]

काकोरी के शहीदों के बलिदान के महत्त्व को समस्त भारतीय स्वातंत्र्य संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में ही भलीभाँति हृदयंगम किया जा सकता है। एतदर्थ उसका एक संक्षिप्त सिंहावलोकन आवश्यक है।

१. साम्राज्यवादी नीति : जनता का मनोबल भंग करो

विदेशी साम्राज्यवादी उत्पीड़न की नीति का यह पहला ही सूत्र था कि शासित देश की जनता का मनोबल नष्ट किया जाये। ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासकों ने इसी नीति के अनुसार हमारे राष्ट्रीय मनोबल को नष्ट करने के लिए हमारे समस्त इतिहास को ऐसे ही रूप में प्रस्तुत करके हमें पढ़ाया, जिससे हमारी राष्ट्रीयता की भावना दृढ़ न हो और हम यह सोच भी न सकें कि हम कभी अंग्रेज़ों के आधिपत्य से मुक्ति पा सकते हैं। उनके द्वारा हमें यही पढ़ाया जाता रहा कि भारत सदा से ही विदेशी आक्रान्ताओं से पराजित होने वाला देश रहा है। परन्तु वास्तविकता यह है कि भारतीय जनता सदैव परतंत्रता का प्रतिरोध करने वाली विश्व की जनताओं में अग्रणी रही है। विदेशी आतताइयों के आधिपत्य से विश्व की अनेक जनताओं का नामोनिशान तक मिट गया, वे अधिक समय तक आततायी आक्रान्ताओं का प्रतिरोध न कर सकीं और उनकी सभ्यता और संस्कृति ही विलुप्त हो गयी। परन्तु भारत की जनता वैदिक काल से लेकर आज तक अपनी स्वतंत्रता, अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
संस्कृति और सभ्यता की सरक्षा में सघर्षरत रही है तथा परिस्थितियों के अनुरूप उसका विकास करती रही है। महाकवि **इक़बाल** के शब्दों में :

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन, दौरे ज़माँ हमारा।

हमारे इतिहास को राष्ट्रीय मनोबल को नष्ट करने वाले रूप में प्रस्तुत करने के अंग्रेज़ी साम्राज्यवादी प्रयास के सम्बन्ध में महाकवि **अकबर** ने अपनी अद्वितीय चुटीली शैली में कहा था :

तोप खिसकी तो प्रोफ़ेसर पहुँचे,
जब बसूला हट गया तो रन्दा है।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लिए यह स्वाभाविक ही था कि उसने अपने विरुद्ध चले हमारे राष्ट्रीय स्वातंत्र्य संघर्ष के इतिहास को बहुत ही विकृत और भ्रष्ट तथा मिथ्या रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया।

२. भारतीय जनता का प्रतिरोध

१७५७ में पलासी के युद्ध में मीर जाफ़र के सामन्ती विश्वासघात के कारण अंग्रेज़ों की विजय होने और उनके राज के पैर भारत में जमने के बाद से ही उनकी सेना में भारतीय सिपाहियों के छोटे-बड़े विद्रोह होते रहे। इनमें १८०६ का वेल्लोर का विद्रोह बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। इन विद्रोहों की शृंखला से यह भलीभाँति प्रकट हुआ कि तब से अंग्रेज़ों के विरुद्ध राष्ट्रीय स्वातंत्र्य की वास्तविक शक्ति का सक्रिय स्रोत ग़रीब किसान और कारीगर जनता से आये सिपाही ही थे। उनमें यह विश्वास पनपना स्वाभाविक हुआ कि अंग्रेज़ों की शक्ति का आधार वे ही हैं और वे ही विद्रोह करके अंग्रेज़ों को परास्त करके देश को स्वतंत्र कर सकते हैं। वे ज़मींदारों और सामन्तों को भी देश की आज़ादी के लिए अंग्रेज़ों से लड़ने में अपने साथ संयुक्त मोर्चा बनाने को प्रोत्साहित करते थे। सौ साल के अपने इन विद्रोहों से प्राप्त अनुभवों से वे अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपनी उस सामरिक और राजनीतिक नीति को विकसित करते रहे थे जिसे उन्होंने अपने १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम में अपनाया।

उनकी इस नीति की आधारगत बातें थीं: (१) हिन्दू-मुस्लिम एकता, समस्त भारत-वासियों के एक क़ौम और एक राष्ट्र होने की मान्यता और समस्त भारतभूमि के प्रति पूज्य भाव, (२) एक ऐसी राष्ट्रीय केन्द्रीय सार्वभौम सत्ता की स्थापना जो जनता के प्रतिनिधियों के परामर्श से काम करे, और (३) सामन्ती तत्त्वों पर नियन्त्रण और स्वतंत्रता संग्राम में उन्हें अपने साथ या तटस्थ रखने का प्रयास। १८५७ के सिपाहियों के स्वातंत्र्य संग्राम के लक्ष्य और नीति को बड़ी स्पष्टता से घोषित करन वाले उनके **"हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा"** शीर्षक गीत को व्याख्या सहित परिशिष्ट में दिया जा रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हमारे १८५७ के सिपाहियों के स्वातंत्र्य संग्राम के सम्बन्ध में विदेशी साम्राज्यवादी सरकार और उसके ज़रख़रीद अनुचर, तथा सरकारी कोप से बचकर लिखने वाले निरन्तर यही प्रचार करते रहे कि १८५७ में चर्बी लगे कारतूसों की बात पर धर्मान्ध भारतीय सिपाहियों की कुछ पलटनें बिगड़ उठी थीं और इस गंभीर स्थिति का लाभ उठाकर कुछ अधिकारभ्रष्ट और अक्षम भारतीय सामन्तों ने अपना भ्रष्ट शासन भारतीय जनता पर पुनः लादने का प्रयास किया था, परन्तु अंग्रेज़ी राज की सक्षमता और उसकी प्रगतिशीलता के प्रेमी भारतीयों की ही सहायता से उनका वह 'ग़दर' दबा दिया गया। दूसरी ओर सशस्त्र क्रान्तिपंथी भारतीय स्वातंत्र्य योद्धा उसे विदेशी आधिपत्य के विरुद्ध भारतीयों का स्वाधीनता संग्राम प्रतिपादित करते रहे और उससे प्रेरणा लेते रहे।

३. १८५७ के क्रान्तियुद्ध का अपलाप : अंग्रेज़ कवि अर्नेस्ट जोन्स द्वारा समर्थन

भारत के सशस्त्र क्रान्ति पथ के पथिक ही नहीं, अपितु ठीक हमारे सत्तावनी संग्राम के समय के संसार भर के स्वातंत्र्यचेता मनीषी और प्रगतिशील विचारक उसे अंग्रेज़ों के उत्पीड़क आधिपत्य के विरुद्ध हुआ भारतीयों का स्वातंत्र्य संग्राम ही प्रतिपादित करते रहे।

इंगलैण्ड में ही हमारे १८५७ के संग्राम को भारत का राष्ट्रीय स्वातंत्र्य संग्राम प्रतिपादित करने वालों में प्रमुख थे तत्कालीन चार्टिस्ट आन्दोलन के नेता कवि अर्नेस्ट जोन्स। उन्होंने न केवल इसे भारत का स्वातंत्र्य संग्राम प्रतिपादित किया था, अपितु इसे समस्त परतंत्र मानव जातियों के स्वातंत्र्य संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में भी देखा था और उसकी राजनीतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि को भी व्यापक रूप से परखा था। चार्टिस्ट आन्दोलन में आप १८४८ में गिरफ़्तार किये गये थे और दो वर्ष जेल में घोर कष्ट में रहते हुए ही आपने वहाँ एक बहुत ही सुन्दर और महती प्रेरणाप्रद काव्य **'न्यू वर्ल्ड'** की रचना की थी।

इस काव्य में इस क्रान्तिदर्शी कविश्रेष्ठ ने भारत के राष्ट्रीय स्वातंत्र्य संग्राम की ऐसी कल्पना की कि भारत में राष्ट्रीय जागृति हुई, जिससे प्रेरित होकर भारतीय सैनिकों ने अंग्रेज़ों को वहाँ से खदेड़ भगाया। अंग्रेज़ी फ़ौज भागी। उसका सेनापति बड़े दुःख के साथ इतना ही चीख पाया: **"हाय! भारत हाथ से गया!"**

काव्य की पंक्तियाँ हैं:

Victorious deluge from a hundred heights
Rolls the fierce torrent of a people's rights
And sepoy soldiers walking band by band,
At last remember they've a fatherland.
Then flies the huxtering judge, the pandering peer,
The English pauper grown a nabob here,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Conquering hosts! Victory! Victory! Victory!
While blasts of freedom sweep the country wide.

(*The Revolt of Hindostan or The New World :*
Ernest Jones, Calcutta, Eastern Trading Co.,
1957, page 9)

[विजयी जलप्लावन ! सैकड़ों उच्च शिखरों से
भयंकर वेग से बढ़ता आता है जनता के स्वत्वों का महौघ
और सिपाही सैनिक जाग्रत होकर दल के दल,
अन्ततः स्मरण कर उठते हैं कि उनकी भी एक पितृभूमि है ।
फिर तो भागते नज़र आते हैं लालची जज, लुटेरे सरदार
और वे अंग्रेज़ कंगाल जो यहाँ नवाब बन गये थे,
महाजनी अत्याचार और व्यापारी घमण्ड (सब भागते हैं)
और छा जाते हैं समस्त देश में स्वतंत्रता के विस्फोटमय घोष ।]

जब इस अंग्रेज़ कविश्रेष्ठ को १८५७ के भारतीय सैनिक विद्रोह का समाचार मिला तो उसने अपने इस काव्य को *The Revolt of Hindostan* शीर्षक से प्रकाशित कराया और उसकी भूमिका में उन्होंने लिखा :

"आश्चर्य इस बात का नहीं है कि १७ करोड़ जनता अब विद्रोह करने उठ खड़ी हुई है, आश्चर्य की बात तो यह है कि उन्होंने अधीनता स्वीकार ही कैसे कर ली थी ! उन्होंने कभी अधीनता स्वीकार न की होती यदि उनके ही राजाओं ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता । इन राजाओं ने एक दूसरे को एक दग़ाबाज़ विदेशी आक्रान्ता के हाथ बेच दिया ताकि उसकी नीच सहायता से वे एक दूसरे का गला काट सकें । इस प्रकार राजे-महाराजे और सामन्त लोग सर्वत्र ही उसी देश के लिए शत्रु और अभिशाप सिद्ध हुए हैं जो उन्हें प्रश्रय दिये रहा है ।"

कैसी-कैसी दग़ाबाज़ी और अत्याचार करके अंग्रेज़ों ने भारत पर अपना अधिकार जमाया, इसका बहुत ही मार्मिक और उद्वेगपूर्ण वर्णन करके कवि ने अपने देशवासियों से पूछा कि "जो कुछ अंग्रेज़ों ने भारतवासियों के साथ किया वही यदि कोई आपके साथ करे तो आप क्या करेंगे ?" और स्वयं उत्तर दिया :

"आप उठेंगे, विद्रोह के पवित्र अधिकार का उपयोग करते हुए आप उठेंगे, और समस्त योरोप और संसार से, स्वर्ग से, पृथ्वी से, ज़ोर से चिल्लाकर कहेंगे कि वे तुम्हारे उद्देश्य के न्यायपूर्ण होने के साक्षी हों । साथी देशवासियो ! हिन्दुओं (भारतवासियों) के साथ इंग्लैण्ड ने ऐसा ही व्यवहार किया है और उनके विद्रोह का यही कारण है । संसार भर में प्रत्येक ईमानदार आदमी इन तथ्यों पर एक ही निर्णय दे सकता है और उनके उद्देश्य के प्रति एक ही कामना कर सकता है ।"

CC-0. Agamhigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमें यहाँ बड़ी कृतज्ञता से यह नोट कर लेना चाहिये कि १८५७ के संघर्ष के सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य सबसे पहले कवि अर्नेस्ट जोन्स ने ही प्रस्तुत किये थे :

१. भारत में अंग्रेज़ी राज का होना प्रगतिशील बात नहीं थी । उसमें भारत की प्रगति रुकी और जनता का अभूतपूर्व शोषण हुआ ।

२. १८५७ के संघर्ष की प्रधान शक्ति ग़रीब शोषित किसान और कारीगर जनता से सेना में भरती किये गये सिपाही ही थे, अधिकारच्युत सामन्त नहीं ।

३. स्वतंत्रता के लिए प्राणोत्सर्ग करने वालों में श्रद्धा से अग्रगण्य झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, नाना धुंधूपन्त पेशवा, कुँवरसिंह आदि कुछ अपवादों को छोड़कर समग्रता की दृष्टि से एक वर्ग के रूप में इस स्वातंत्र्य संघर्ष में सामन्तों की भूमिका देशद्रोहात्मक ही थी ।

कवि अर्नेस्ट जोन्स ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की इस गर्वोक्ति में कि ''ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेशों में सूर्य कभी अस्त नहीं होता'' अपना यह विख्यात मार्मिक संशोधन प्रस्तुत किया : "परन्तु वहाँ खून भी कभी नहीं सूखता ।"

४. १८५७ के बाद गुप्त क्रान्ति प्रयास

१८५७ के स्वाधीनता संग्राम की सामरिक असफलता के बाद देश में सर्वत्र अंग्रेज़ी राज्य के दमन और आतंक का बोलबाला हो गया, परन्तु भारतीय क्रान्तिकारी फिर गुप्त रूप से सशस्त्र क्रान्ति के प्रयत्न में लग गये । इन क्रान्तिकारियों का लक्ष्य सदैव यही रहा कि अनुकूल परिस्थिति में सेना के भारतीय सिपाहियों द्वारा फिर विद्रोह हो और अंग्रेज़ी शासन को भारत से उखाड़ फेंका जाये और ऐसी सशस्त्र क्रान्ति के लिए विस्तृत जनाधार और राष्ट्रव्यापी संगठन किया जाये । १८५७ के बाद सरकार के गुप्तचरों ने जो रिपोर्टें इस सम्बन्ध में दी थीं उनका उल्लेख राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक श्री ए. ओ. ह्यूम ने अपने एक बयान में किया है जिसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है :

> "मुझे सात बड़े-बड़े ग्रंथ दिखाये गये । इनमें वे रिपोर्टें थीं, जो तीस हज़ार से भी अधिक रिपोर्टरों से प्राप्त हुई थीं । इन सबसे यही दिखता था कि ग़रीब लोगों में अपनी दुर्दशा पर एक निराशा की भावना भरी हुई थी, और उन्हें इस बात का विश्वास हो गया था कि वे भूखों मर जायेंगे, अतएव वे कुछ करने पर उतारू हो रहे थे । इसके लिए वे एक दूसरे से कंधा मिलाकर खड़े होंगे । इस कुछ करने का अर्थ था हिंसा करना ।····· यह समझा जाता था कि सर्वत्र ही छोटे-छोटे दल मिलकर बडे दल बन जायेंगे···सुशिक्षित वर्ग के लोग यत्र-तत्र उन विद्रोही दलों का नेतृत्व करेंगे और उनको सुसंगठित करेंगे ।

'राष्ट्रीय आन्दोलन के सौ वर्ष' शीर्षक अपने एक लेख में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साथी श्री शिव वर्मा ने लिखा है :

"शहरों, ज़िलों और तहसीलों तक में गुप्त संगठन बन गया था, और अन्दर ही अन्दर 'ग़दर' की तैयारी हो रही थी। व्यक्तियों की हत्या, सरकारी बैंकों और ख़ज़ानों की लूट आदि सब बातों की चर्चा उन काग़ज़ों में मौजूद थी।"

इसी सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी लेखक श्री मन्मथनाथ गुप्त ने अपने ग्रन्थ **'भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास'** में लिखा है :

"ठाकुर ख़ानदान के लोग भी गुप्त समिति बनाकर बैठ गये। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी आत्मकथा में एक इसी प्रकार की समिति का उल्लेख किया है, जिसके सभापति राजनारायण वसु थे और ज्योतीन्द्रनाथ मंत्री थे। इसी सिलसिले में यह भी पता चलता है कि शिवनाथ शास्त्री के नेतृत्व में भी एक गुप्त समिति बनी थी। जिस समय यह समिति बनी थी उस समय शास्त्रीजी सरकारी नौकर थे। उन्हीं के घर में समिति का अधिवेशन हुआ करता था। श्री विपिनचन्द्र पाल इस समिति के सदस्य थे। यह समिति १८७६ में स्थापित हुई थी।"

५. कांग्रेस का खुला राष्ट्रीय सुधारवादी प्रचार और उससे क्रान्तिकारियों का सम्बन्ध

यद्यपि १८८५ में कांग्रेस की स्थापना श्री ए. ओ. ह्यूम द्वारा अंग्रेज़ सरकार के अनुमोदन से इसी उद्देश्य से की गयी थी कि इस मध्यमवर्गीय असन्तोष और क्रान्ति की प्रवृत्ति को रोका जाये, परन्तु भारत के स्वातंत्र्यकामी मनीषियों ने कांग्रेस के खुले संगठन का उपयोग देश में व्यापक राष्ट्रीय भावना के प्रचार और प्रसार के लिए किया। आगे चलकर कांग्रेस में जो 'नरम' और 'गरम' दल हो गये उनका मतभेद तत्कालीन परिस्थितियों में खुले कांग्रेसी आन्दोलन को सफलतापूर्वक चलाये जाने के लिए 'नरम' या 'गरम' नीति की उपयोगिता के विषय में ही था। तात्विक रूप में सभी सच्चे स्वातंत्र्यकामी मनीषियों की मान्यता यही थी कि स्वराज्य तो अन्ततः व्यापक जनविद्रोह और सेना के सिपाहियों के विद्रोह के भारतव्यापी सहयोग से ही प्राप्त होगा। १८५७ की सैनिक क्रान्ति के प्रयास की असफलता से उन्होंने यही निष्कर्ष निकाला था।

उस युग के कांग्रेस के ये 'नरम' और 'गरम' दोनों दलों के नेता क्रान्तिकारियों से भी गुप्त रूप से अपना सम्बन्ध बनाये रखते थे और उनकी सहायता करते रहते थे, इसका यही कारण था। प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों ने कांग्रेस के बड़े नेताओं से अपने सम्पर्क और उनसे मिलने वाली सहायता तथा कांग्रेसी आन्दोलन के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन की भी आवश्यकता और उपयोगिता के सम्बन्ध में इन नेताओं के दृढ़

CC-0. Prof. Gangaprasad Vinayak Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विश्वास की बातें अपने संस्मरणों में लिखी हैं। हाँ, ऐसे तथाकथित लीडरों की भी कमी नहीं थी जिनके लिए महाकवि अकबर ने अपनी चुटीली रीति से कहा था :

कौम के ग़म में डिनर खाते हैं हुक्काम के साथ ।
रंज लीडर को बहुत है मगर आराम के साथ ।।

कांग्रेस की स्थापना और उसके तत्त्वावधान में ब्रिटिश राज्य की छत्रछाया में प्रगति और सुधार की याचना करने के खुले आन्दोलन के साथ यह आवश्यकता ऐतिहासिक रूप से उद्भूत हो गयी थी कि एक गुप्त क्रान्तिकारी दल भी कार्यरत हो, जो अनुकूल परिस्थिति में सैनिक विद्रोह और जनविद्रोह के सहयोग से क्रान्ति करने के आदर्श को देश के सामने जीता-जागता रखे । क्रान्तिकारी दल के सदस्य विशिष्ट आततायी राज्याधिकारियों को मारने आदि के जो ऐसे काम करते थे, जिन्हें सरकारी पक्ष से 'आतंकवादी' कहा गया, उनका उद्देश्य इस क्रान्तिकारी आदर्श और उसकी योजना की ओर जनता का ध्यान बनाये रखना था, क्योंकि कांग्रेस के खुले वैध आन्दोलन को तो परिस्थितिवश ब्रिटिश राज्य की ख़ैरख्वाही और उससे सहयोग करने की बात करनी ही पड़ती थी । क्रान्तिकारियों के इन कार्यों का उद्देश्य एक ऐसे ही गुप्त संगठन का सक्रिय अस्तित्व जनता को और विशेषतः सेना के सिपाहियों को जताते रहना था । ये क्रान्तिकारी इन कार्यों के द्वारा समय-समय पर फाँसी पाकर, गोली से मारे जाकर, शहीद इसलिए ही होते रहते थे कि ऐसे क्रान्तिकारी संगठन के प्रति जनता और सेना में समुचित श्रद्धा और विश्वास उत्पन्न करें ताकि उपयुक्त समय पर उनके नेतृत्व में सेना के सिपाही जन-सहयोग से सशस्त्र क्रान्ति करके देश को विदेशी दासता से मुक्त करा सकें।

जब-जब क्रान्तिकारियों पर निरे आतंकवादी होने का आरोप लगाया गया, तब-तब बड़ी दृढ़ता से उन्होंने इसका प्रतिवाद किया और अपने क्रान्तिकारी रूप और अपने क्रान्तिकारी लक्ष्य को प्रकट किया । ऐसा वे अपने ऊपर चलने वाले मुकदमों में अपने बयानों में ही कर सकते थे । इसमें भी मुकदमों में फँसे हुए अपने कुछ साथियों को बचाने के उद्देश्य से प्रायः ही ऐसे बयानों में भी अपने लक्ष्य और क्रान्ति के योजना-सूत्र की बात करना कठिन हो जाता था । फिर भी इन क्रान्तिकारी मुकदमों में ऐसे अभियुक्त, जिनको फाँसी की सज़ा मिलना निश्चित-सा होता था, अपने बयानों में सशस्त्र क्रान्ति के लक्ष्य और उस योजना-सूत्र की बात करते ही थे । उदाहरण के लिए १९०८ के अलीपुर बम केस के प्रधान अभियुक्त के रूप में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्वर्गीय वारीन्द्र घोष ने अपने एक बयान में कहा था :

> "हम लोग सदा यही सोचते थे कि आगे जाकर एक क्रान्ति होगी ···· हम कभी भी यह नहीं समझते थे कि राजनीतिक हत्याओं से आज़ादी मिल जायेगी । हम हत्याएँ केवल इसलिए करते हैं कि हम समझते हैं कि जनता को इसकी आवश्यकता है ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
क्रान्तिकारी समाचारपत्र भी क्रान्तिकारियों के लक्ष्य और उनके योजना-सूत्र के सम्बन्ध में लिखने की कुछ न कुछ तरकीब निकाल ही लेते थे। गुप्त रूप से छापे और बाँटे गये पर्चों के द्वारा भी यह कार्य किया जाता था। रौलेट कमेटी की रिपोर्ट में क्रान्तिकारी पत्र **'युगान्तर'** के उद्धरण दिये गये हैं। एक उद्धरण का हिन्दी अनुवाद है :

> "अस्त्र की शक्ति प्राप्त करने का एक और बहुत ही अच्छा उपाय है। रूस की क्रान्ति में देखा गया है कि ज़ार की सेना में क्रान्तिकारियों से मिले हुए बहुत-से आदमी हैं, जो समय पड़ने पर अस्त्र-शस्त्र समेत क्रान्तिकारियों से मिल जायेंगे। फ्रांस की राज्यक्रान्ति में भी यह पद्धति खूब सफल रही। जहाँ पर शासक विदेशी है, वहाँ तो क्रान्तिकारियों के लिए और भी सुविधा है, क्योंकि विदेशी सरकार को अपनी अधिकांश सेना पराधीन जाति से ही भरती करनी पड़ती है। यदि क्रान्तिकारी बुद्धिमानी से इन लोगों में स्वतंत्रता का प्रचार करें तो बहुत काम हो सकता है। जब असली संघर्ष का मौका आयेगा तो क्रान्तिकारियों को न सिर्फ प्रशिक्षित आदमी मिलेंगे, बल्कि सरकारी पक्ष के अच्छे हथियार भी मिलेंगे।"

क्रान्तिकारियों का लक्ष्य और उनकी योजना इसमें संक्षेप में भली प्रकार व्यक्त हुई है।

६. १९१४ के क्रान्ति प्रयास की विफलता

१९१४ में ब्रिटिश सरकार के प्रथम विश्वयुद्ध में पड़ जाने पर ऐसी क्रान्ति हो सकने का मौका आया था और तब क्रान्तिकारी दल ने इसके लिए प्रयत्न किया था। अमरीका से 'ग़दर पार्टी' के तत्त्वावधान में भारतीय लोग भारत में ऐसी क्रान्ति करने के लिए दौड़े आये थे। विदेश स्थित भारतीय क्रान्तिकारियों ने भारतीय क्रान्ति के लिए अन्य सरकारों से सहायता प्राप्त करने का भी प्रयास किया था। भारतीय सेना के भारतीय सैनिकों ने योजना के अनुसार सशस्त्र विद्रोह करने का आश्वासन दिया था, परन्तु मुखबिरी के कारण यह क्रान्ति योजना असफल हो गयी। फिर भी सुदूर सिंगापुर में नियत समय पर भारतीय स्थिति का तुरन्त ही पता न चल सकने से, वहाँ सैनिकों ने विद्रोह कर ही दिया और सिंगापुर पर अधिकार कर लिया। परन्तु भारत में क्रान्ति योजना विफल हो जाने के कारण सिंगापुर का विद्रोह दबा दिया गया। इस विफलता के परिणामतः प्रथम लाहौर षड्यंत्र केस में अनेक क्रान्तिकारियों को फाँसियाँ हुईं और सैकड़ों को कालेपानी की सज़ा हुई।

इस क्षिप्र सिंहावलोकन में इस क्रान्ति योजना और उसकी विफलता का इतिवृत्त देने का अवकाश नहीं है; उन क्रान्तिकारी नेताओं और अमर शहीदों के पुण्य नामों का उल्लेख मात्र भी यहाँ नहीं हो पा रहा है। इस प्रेरणाप्रद इतिहास को श्री मन्मथनाथ गुप्त के ग्रंथ **'क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास'** और स्वर्गीय क्रान्तिकारी नेता शचीन्द्रनाथ सान्याल के ग्रंथ **'बन्दी जीवन'** में पढ़ा जा सकता है। उस समय **'बन्दी**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जीवन' के प्रकाशन का उद्देश्य क्रान्तिकारी कार्य, नीति तथा कार्य के योजना-सूत्र (broad strategy) की बात प्रकाशित करना और इस बात का प्रतिवाद करना था कि क्रान्तिकारी केवल जोशीले नौजवान हैं, जो देशभक्ति की भावना से निःसन्देह ही प्रेरित हैं, परन्तु वे केवल प्रतिहिंसा की भावना से अभिभूत होकर आतंकवादी कार्यों में अपनी शक्ति और जीवन का अपव्यय करते हैं। इसका भी प्रतिवाद उसमें किया गया है कि क्रान्तिकारियों के पास न तो क्रान्ति का कोई दर्शन ही है और न कोई कार्यक्षम योजनासूत्र।

७. गाँधीजी का अहिंसात्मक संघर्ष और क्रान्तिकारी

कांग्रेस का खुला आन्दोलन पहले विदेशी शासन से सहयोग, फिर जवाबी सहयोग (लोकमान्य तिलक के Responsive Co-operation) की सीढ़ियाँ पार करके राष्ट्र-पिता महात्मा गाँधी के नेतृत्व में असहयोग और अहिंसात्मक सत्याग्रह की सीढ़ी पर चढ़ा। इस असहयोगी स्वातंत्र्य संघर्ष में भारतीय सेना की भूमिका क्या होगी, इसके विषय में गाँधीजी के १० मार्च, १९२० के असहयोग के घोषणापत्र की इस बात को यहाँ उद्धृत कर देना उचित होगा। इसमें गाँधीजी ने कहा था कि **"सैनिकों से सेना में काम करने से इनकार कराने का समय अभी नहीं आया है; यह उपाय अंतिम है, पहला नहीं।"** इसका अर्थ यही हुआ कि स्वराज्य के संघर्ष में अंतिम बात तो यही है कि सेना के भारतीय सिपाही विदेशी शासकों के लिए अपने ही देश को गुलाम बनाये रखने से इनकार करेंगे, यानी भारतीय सेना विद्रोह करेगी।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नेतृत्व में इस असहयोग और अहिंसात्मक सत्याग्रह आन्दोलन से देश के कोने-कोने में, जन-जन में, व्यापक राजनीतिक चेतना फैली और जन-जन उसमें भाग ले सका। क्रान्तिकारियों ने महात्मा गाँधी और उनके इस अहिंसात्मक आन्दोलन के प्रभाव की भूरि-भूरि सराहना की है कि इससे राजनीतिक चेतना और स्वराज्य के लिए त्याग और बलिदान की भावना का जनता में व्यापक प्रसार हुआ जिसके आधार पर ही जन-क्रान्ति हो सकती है। यह बात श्री शचीन्द्रनाथ के **'बन्दी जीवन'** में देखी जा सकती है। परन्तु क्रान्तिकारियों का सदैव यही विश्वास रहा कि अन्ततोगत्वा सेना और जनता के सहयोग से सशस्त्र क्रान्ति से ही स्वराज्य प्राप्त होगा, और उनके दृष्टिकोण से इस क्रान्तिकारी लक्ष्य, आदर्श और नीति की और अधिक ज़ोर से घोषणा करना इस व्यापक अहिंसात्मक सत्याग्रह आन्दोलन के समय और भी अधिक आवश्यक हो गया।

क्रान्तिकारी आन्दोलन के काकोरी काण्ड और लाहौर षड़यंत्र केस से सम्बन्धित घटनाओं में यही किया गया था। साथ ही काकोरी काण्ड के काल में क्रान्तिकारियों ने यह स्पष्ट कर दिया था कि **उनका लक्ष्य भारत में एक ऐसा पूर्ण स्वतंत्र जनतंत्र स्थापित करना है जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण संभव न हो,** और लाहौर षड़यंत्र केस के काल में इसे और अधिक स्पष्ट कर दिया गया कि **क्रान्तिकारियों का लक्ष्य भारत में जनतंत्री समाजवाद स्थापित करना है।**

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

८. साम्राज्यवाद विरोधी कंचों के दो फल

१९३९ में जब ब्रिटिश सरकार द्वितीय–हिटलरी–विश्वयुद्ध में फँस गयी तब भारत में सशस्त्र क्रान्ति हो सकने का पुनः सुअवसर आया, परन्तु उस समय ऐसे सक्षम गुप्त क्रान्तिकारी संगठन का अभाव दिखा जिसके आदेश और नेतृत्व में हिटलरी युद्ध में झोंक दी जानेवाली भारतीय सेनाएँ सशस्त्र क्रान्ति करके देश को अंग्रेज़ों के आधिपत्य से मुक्त करतीं। एतदर्थ सेना के सिपाही कांग्रेसी नेताओं से नेतृत्व प्राप्त करने के लिए चक्कर काटते रहे।

प्रथम विश्वयुद्ध के समय क्रान्तिकारी जिस प्रकार सेनाओं के पास पहुँचकर सशस्त्र क्रान्ति के लिए प्रयत्नरत हुए थे, दुर्भाग्य से इस समय ऐसा न हो सका। जो नहीं हो सका उसके कारणों का ऊहापोह करने और किसी दल विशेष या दलों की ग़लतियों का विश्लेषण करने का यहाँ प्रयोजन नहीं है। क्षिप्र सिंहावलोकन में यहाँ इतना ही देख लेना पर्याप्त होगा कि १९४२ के आन्दोलन में महात्मा गाँधी के **'करो या मरो'** के आह्वान से, अमर शहीद नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की आज़ाद हिन्द फ़ौज के निर्माण और कर्तृत्व से, सैनिकों में और जनता में क्रान्तिकारी उभार आया ही, जो १९४६ के नौसेना विद्रोह में, और थलसेना द्वारा विद्रोही नौसैनिकों के विरुद्ध लड़ने से इनकार कर देने आदि की घटनाओं में भलीभाँति प्रकट हुआ।

ब्रिटिश सरकार ने इस क्रान्तिकारी उभार को परखा और वह भारत की स्वतंत्रता स्वीकार करने को मजबूर हो गयी। तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मंत्री श्री क्लीमेण्ट एटली ने ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में यह साफ़-साफ़ शब्दों में स्वीकार किया कि ब्रिटेन को भारत की स्वतंत्रता इसलिए स्वीकार करनी पड़ रही है कि (१) भारतीय सेना में अब ब्रिटेन के प्रति वफ़ादारी नहीं है, और (२) ब्रिटेन के पास ऐसे साधन नहीं हैं कि भारत को अपने अधिकार में रखने के लिए वह वहाँ पर एक विशाल अंग्रेज़ी सेना रख सके।

इस प्रकार क्रान्तिकारियों की यह योजना ही––कि सशस्त्र सैनिक विद्रोह और जन-विद्रोह के सहयोग से स्वतंत्रता मिलेगी––तात्विक रूप में पूर्ण हुई। यह भी कहा जा सकता है कि तात्विक रूप में महात्मा गाँधी की १९२० की ऊपर दी गयी घोषणा (सत्याग्रह का अंतिम उपाय सैनिकों द्वारा सत्याग्रह होगा) पूर्ण हुई। इतना निश्चित है कि यदि ब्रिटिश सरकार ने परिस्थिति की अनिवार्यता को परखकर सत्ता भारतीयों को हस्तान्तरित न कर दी होती, तो सशस्त्र सैनिक विद्रोह से ही सत्ता हस्तान्तरित होती। अस्तु, १५ अगस्त, १९४७ को भारत की स्वतंत्रता की घोषणा हो गयी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कांग्रेस के नेतृत्व में चला हुआ अहिंसात्मक आन्दोलन और गुप्त सशस्त्र क्रान्तिकारी दल की गतिविधि एक कैंची के दो फलों की भाँति रहे हैं, जो बाह्य दृष्टि से एक दूसरे की प्रतिकूल दिशा में गति कर रहे थे, परन्तु देश की दासता के बन्धन को दोनों मिलकर काट रहे थे।

Copyright Bhagat Singh Archives (Regd.) Jagaran Foundation, Chandigarh

९. वर्तमान समाजवादी संघर्ष के लिए काकोरी के शहीदों की प्रेरणा

काकोरी के शहीदों की शहादत का अर्धशताब्दी समारोह श्रद्धा से मनाते हुए हमें यह विशेष रूप से देखना है कि इन शहीदों ने फाँसी के तख्ते से घोषणा की थी कि उन्हें पूर्ण विश्वास है कि भारत में ऐसी पूर्ण जनतंत्रीय स्वतंत्रता स्थापित होगी ही, जिसमें **मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण संभव नहीं होगा।** देश पूर्णतः स्वाधीन तो हो चुका है परन्तु उसमें अभी ऐसी शोषणविहीन व्यवस्था स्थापित होना बाकी है। ऐसी व्यवस्था स्थापित करना ही क्रान्ति को पूरा करना है। किसी भी कारण से इसकी विपरीत दिशा में चलना प्रतिगामी और प्रगतिविरोधी बात होगी और इससे शहीदों के विश्वास का घात होगा। भारतीय जनता ऐसा कभी नहीं होने देगी। हमारे स्वातंत्र्य संघर्ष के शहीदों की लम्बी परम्परा जनता को इसके लिए सदैव प्रेरित करती रहेगी कि उनके विश्वास का जनतंत्रीय समाजवाद भारत में स्थापित हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी षड्यंत्र की एक झलक

☐ क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्त

[काकोरी के क्रान्तिवीर मन्मथनाथ गुप्त एक सशक्त प्रभावशील लेखक हैं। आपका परिचय काकोरी के क्रान्तिवीरों के परिचय में पहले आ चुका है। —सं.]

हमारे स्वातंत्र्य संग्राम का प्रारम्भ १८५७ से माना जाता है। यों तो वह उसके बहुत पहले शुरू हुआ था, जिसकी कुछ झलक मेरी पुस्तक **'राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास'** और **'क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास'** में आ गयी है, पर १८५७ से १९१९ तक यानी ६२ साल तक संग्राम के नाम पर केवल क्रान्तिकारी ही जूझते रहे। हाँ, प्रस्ताव (संग्राम नहीं) करने वाले और लोग भी थे, पर इससे यह ग़लतफ़हमी न हो कि प्रस्ताव स्वतंत्रता के होते होंगे। नहीं, प्रस्ताव होते थे कि आई. सी. एस. में भारतीय अधिक लिये जायें, उसकी परीक्षा भारत में हो। कांग्रेस में ऐसे ही प्रस्ताव होते थे और बहुत साल तक उसका अधिवेशन 'गाड सेव दि किंग' (ब्रिटेन के राष्ट्रगीत) के गायन से शुरू होता था।

१९२१ का असहयोग आन्दोलन और उसका स्थगन

महात्मा गाँधी ने १९२१ में जन-आन्दोलन चलाया था। अखिल भारतीय पैमाने पर यह पहला जन-आन्दोलन था। यों तो बंगाल का १९०७ का स्वदेशी आन्दोलन पहला जन-आन्दोलन था। १९२१ का यह आन्दोलन केवल सभा करके प्रस्ताव करने से कुछ अधिक था। हज़ारों की संख्या में लोग इस आन्दोलन में जेल चले गये, जिनमें मैं भी एक था। पर गाँधीजी ने इस आन्दोलन को चौरीचौरा काण्ड के कारण बन्द कर दिया। अब तो लोग शायद इसके विषय में भूल भी गये होंगे, इसलिए संक्षेप में यह बता दिया जाये कि चौरीचौरा गोरखपुर का एक छोटा-सा कस्बा है, इसमें तीन निहत्थे ग्रामवासी गोलियों से मार डाले जाने पर जोश में आयी हुई जनता ने पुलिसवालों को थाने में बन्द कर दिया और उसमें आग लगा दी, जिसके फलस्वरूप वे मर गये।

यह घटना अवांछनीय कही जा सकती है, पर पुलिस ने हत्याकाण्ड शुरू किया था। जनता ने उसका बदला लिया, ठीक ही किया। वह वांछनीय भी था, उचित भी। वह क्रान्ति की एक चिनगारी थी और गाँधीजी क्रान्ति नहीं चाहते थे। इस पर आन्दोलन बन्द कर देना ज्यादातर लोगों को अच्छा नहीं लगा। उस ज़माने के किसी नेता ने इसे पसन्द नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया, यह कहा जाये तो अत्युक्ति नहीं होगी। हाँ, कुछ लोग लिहाज के मारे चुप रहे, यह बात और है। पर देशबन्धु चित्तरंजन दास और मोतीलाल नेहरू ने इस स्थगन का विरोध किया था।

क्रान्तिकारी पुनः सक्रिय

नौजवानों ने भी इसे पसन्द नहीं किया और इसके फलस्वरूप देश में फिर से क्रान्तिकारी आन्दोलन चल निकला। उत्तर भारत में संगठन होने लगा, और शचीन्द्रनाथ सान्याल, पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल', दामोदरस्वरूप सेठ, सुरेश भट्टाचार्य आदि पुराने क्रान्तिकारी फिर से कार्यक्षेत्र में कूद पड़े। सारे उत्तर भारत में एक छोर से दूसरे छोर तक संगठन का जाल फैल गया। युवकों को दल में भर्ती किया जाने लगा। क्रान्तिकारी साहित्य का प्रचार किया जाने लगा। समय-समय पर क्रान्तिकारी परचे निकलने लगे। और जब इन कामों के लिए रुपयों की कमी पड़ी, तब क्रान्तिकारियों ने डकैती का कार्यक्रम शुरू किया। पहले गाँवों में डकैती होती रही, पर वह विशेष सफल नहीं रही।

यह हिदायत थी कि सिर्फ सरकारी सम्पत्ति या बैंक की सम्पत्ति पर ही डाका डाला जा सकता है। बात यह है कि हमारी पार्टी, जैसी कि यह बनी हुई थी, डकैतियों के अतिरिक्त किसी और तरीके से अपनी योजनाओं के लिए धन जुटाने की बात सोच नहीं सकती थी। चन्दों से काफी रुपये मिल जाते थे, फिर भी इस प्रकार प्राप्त रुपये पार्टी की ज़रूरत को देखते हुए अपर्याप्त थे। हमने इस सम्बन्ध में रुपये प्राप्त करने की एक और योजना बनायी थी। यह योजना चन्द्रशेखर आज़ाद के जीवन के साथ सम्बद्ध होने के अतिरिक्त घटना के रूप में भी बहुत दिलचस्प है, इसलिए मैं संक्षेप में इसका वर्णन करता हूँ।

धन के लिए महन्त के शिष्य

चन्द्रशेखर आज़ाद, गोविन्दप्रकाश उर्फ रामकृष्ण खत्री को पार्टी में ले आये। गोविन्दप्रकाश उदासीन साधुओं के महामण्डल के प्रान्तीय मंत्री थे। बहुत-से महन्तों से उनकी जान-पहचान थी, तथा महन्त जगत में उनकी गति अबाध थी। वे स्वयं एक महन्त के प्रधान शिष्य थे, और यदि क्रान्तिकारी कामों में न फँसते, तो वे उस महन्त की गद्दी के मालिक होते। गोविन्दप्रकाश ने एक दिन यों ही बात-बात में मुझसे कहा कि एक महन्त एक लड़के को गोद लेना चाहता है, यदि पार्टी का कोई सदस्य इस महन्त का चेला बन जाये, तो साल दो साल में यह सारी जायदाद पार्टी के हाथ लगेगी। हम लोग पैसे-पैसे को तरस तो रहे ही थे, हमने फौरन इस योजना को कार्यान्वित करने की बात सोची। मैंने इसके लिए कई नौजवानों के नाम प्रस्ताव के रूप में रखे। अन्त में चन्द्रशेखर आज़ाद इस प्रकार महन्त का चेला बनने के लिए चुने गये और वे इसके लिए राज़ी भी हो गये। इस पर पार्टी की मंजूरी भी मिल गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह महन्ती ग़ाज़ीपुर ज़िले में एक मठ की थी। तदनुसार गोविन्द्रप्रकाश चन्द्रशेखर आज़ाद को लेकर उस महन्त के पास गये और महन्तजी चन्द्रशेखर को अपना चेला बनाने के लिए तैयार हो गये। तब चन्द्रशेखर वहीं रह गये और महन्ती के सब काम सीखने लगे। महन्त वाकई बहुत बूढ़ा था और यह उम्मीद की जा सकती थी कि वह अधिक दिन नहीं जियेगा। मैं बीच-बीच में एक मामूली भक्त बनकर महन्तजी के यहाँ दर्शनार्थ जाया करता था। चन्द्रशेखर जब कुछ दिन वहाँ रह लिये तो ऐसा ज्ञात होने लगा कि वह बहुत असन्तुष्ट हैं और महन्त की मृत्यु का इन्तज़ार करने के लिए तैयार नहीं हैं। महन्तजी न तो कभी अखबार पढ़ते थे और न मँगाते थे। इससे चन्द्रशेखर आज़ाद बहुत ही दुःखी थे, क्योंकि स्वातंत्र्य योद्धा के लिए अखबार आक्सीजन की तरह ज़रूरी था। महन्तों में भी आधुनिक और प्राचीन तरीके के लोग होते हैं। पर ग़ाज़ीपुर के ये महन्त बहुत पुरानी क़िस्म के थे और वे राजनीति से किसी प्रकार सम्बन्ध नहीं रखते थे। यों तो महन्तजी अखबार पसन्द करते या न करते, चन्द्रशेखर अखबार मँगाकर पढ़ सकते थे, किन्तु हमारे तो दिल में चोर था, इसलिए हम बिल्कुल यह दिखाना नहीं चाहते थे कि हमें राजनीति से कोई सम्बन्ध है।

महन्तों में गुरुग्रन्थ साहब आदि पढ़ने का रिवाज है, तदनुसार चन्द्रशेखर को भी गुरुमुखी सीखकर इन पुस्तकों को पढ़ना पड़ा। साथ ही महन्तजी यह भी चाहते थे कि जैसे वह अपनी ज़मींदारी के सब काम, यहाँ तक कि दूध दुहने से लेकर कुट्टी काटने तक का सब काम कर लेते हैं, चन्द्रशेखर भी वैसा ही करें। तदनुसार दूध दुहना, कुट्टी काटना आदि सीखना पड़ा। एक बार जब मैं वहाँ गया, तो उन्होंने साफ-साफ मुझसे कहा कि यह महन्त तो सेरों दूध पीता है, डंड पेलता है, यह अभी जल्दी नहीं मरेगा; भाड़ में जाये महन्ती, मैं अब अधिक दिन यहाँ नहीं रह सकता। हमने जहाँ तक हो सका, उनको समझाया। वे हमारी बात मानकर वहाँ रह भी गये। किन्तु इसके बाद दो महीने भी नहीं हुए थे कि एक दिन वह बनारस आ पहुँचे और बोले कि हमसे यह सब नहीं होने का। फिर हाथ दिखाकर उन्होंने बताया कि किस प्रकार कुट्टी काटते-काटते उनके हाथों में छाले पड़ गये हैं। वहाँ कोई सोसायटी भी नहीं थी, इसलिए चले आये।

सरकारी धन पर धावा

इस प्रकार पार्टी ने चन्द्रशखर आज़ाद के महन्ती प्राप्त करने की आशा त्याग दी। पार्टी के लिए धन जुटाने के लिए प्रधान अवलम्बन बराबर डकैती ही रही। जब गाँव की डकैती मना हो गयी, तो प्रश्न यह था कि या तो किसी बैंक को लूटा जाये, या रेल के ख़ज़ाने को, या किसी अन्य सरकारी खज़ाने को। काफी बहस-मुबाहसे के बाद तय हुआ कि रेल का ख़ज़ाना लूटा जाये और यह भी तय हुआ कि इसे राजनीतिक तरीके से किया जाये, जिससे पार्टी का राजनीतिक चरित्र स्पष्ट हो जाये। सच बात तो यह थी कि यह सरकार को एक प्रकार की चुनौती थी। पार्टी के वे सब सदस्य, जो रवीन्द्रमोहन कर को एक आवारा के रूप में दफ़ा १०९ में सज़ा कर दिये जाने के बाद से प्रतिशोध के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लिए ज़ोर दे रहे थे। इस बात से पार्टी के सदस्यों को अच्छी चुनौती दी जायेगी। वे गाँव की डकैतियों से तथा बहादुर और निर्दोष गाँव वालों पर गोली चलाने से ऊब चुके थे।

अशफ़ाक़ ने पार्टी के इस नये कदम का डटकर विरोध किया। उन्होंने कहा कि जहाँ तक चुनौती का सम्बन्ध है, इस काम से हम सरकार को चुनौती तो ज़रूर दे देंगे, किन्तु यहीं से पार्टी के अन्त का प्रारम्भ भी हो जायेगा। उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि अभी पार्टी बहुत कमज़ोर है, और इस काबिल नहीं है कि सरकार के साथ सीधा युद्ध मोल ले सके, इसलिए इसे चाहिये कि बजाय इसके कि चुनौती के झंझट में पड़े, चुपचाप हो जाये, सिर नीचा किये पड़ी रहे, और शान्तिपूर्वक अपना निर्माण करती जाये। उन्होंने यह भी कहा कि जिस प्रकार इस प्रस्तावित काम को करने का इरादा किया जा रहा है, उससे फौरन सरकार को सन्देह हो जायेगा और जल्दी ही सरकार हम पर टूट पड़ेगी। चूँकि पंडित रामप्रसाद 'बिस्मिल' ने नये मत का प्रतिपादन करना शुरू किया था, इसलिए अशफ़ाक़ की चेतावनी अरण्यरोदन साबित हुई। मुझे विश्वास है कि पंडितजी गाँव की डकैतियों के अतिरिक्त अन्य प्रकार की डकैतियों के विरुद्ध थे, पर चूँकि प्रान्तीय कौंसिल ने गाँव की डकैतियों के विरुद्ध फैसला किया था, और इसके अतिरिक्त इनमें तुलनात्मक रूप से कम सफलता प्राप्त हुई थी, इसलिए उन्हें नया मत अपनाना ही पड़ा।

ट्रेन डकैती की योजना

कई योजनाएँ बनायी गयीं कि किस प्रकार ट्रेन डकैती की जाये। पहले यह योजना बनायी गयी कि जिस समय ट्रेन किसी छोटे-से स्टेशन पर खड़ी हो, उस समय उसके ख़ज़ाने को लूट लिया जाये। इस योजना में स्वाभाविक रूप से ये भी बातें थीं कि इंजन-ड्राइवर तथा गार्ड के साथ-साथ एकाएक स्टेशन मास्टर को भी पकड़ लिया जाये। कुछ साथियों ने तो यहाँ तक कहा कि यदि गार्ड और इंजन-ड्राइवर गोरे हों, तो प्रतिशोध के रूप में उन्हें भी इस अवसर पर गोली मार दी जाये। पंडितजी इस प्रकार दो बातों के मिलाये जाने के पूर्णतया विरुद्ध थे। उन्होंने यह कह दिया कि वे तब तक इस योजना को कार्यरूप में परिणत करने के अवसर पर नेतृत्व नहीं करेंगे, जब तक कि वे लोग जिन्होंने इस प्रकार बदला लेने की बात उठायी है, निश्चित रूप से यह न कहेंगे कि जानबूझकर गोरे या भारतीय किसी की भी हत्या करने की हम कोशिश न करेंगे। इसलिए यह बात भी जाती रही और पंडितजी की बात मानी गयी।

अन्त में कार्यक्रम बिल्कुल स्पष्ट हो गया, किन्तु अभी इसमें कई बातों का तय होना बाकी था। कार्यक्रम यह था कि किसी स्टेशन पर हम लोग ट्रेन पर चढ़ें, फिर किसी पहले से निश्चित स्थान पर दो स्टेशनों के बीच में ज़ंजीर खींचकर गाड़ी खड़ी कर दी जाये। फिर ख़ज़ाने का लोहे का सन्दूक निकाल लिया जाये और उसमें जो कुछ हो उस पर क़ब्ज़ा कर लिया जाये। प्रतिदिन आठ नम्बर की डाउन ट्रेन सारे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
स्टेशनों की जो कुछ आमदनी होती थी उसे लेकर लखनऊ के हेड आफिस में पहुँचती थी। हमारी योजना यह थी कि हम किसी दिन इसी गाड़ी पर किसी स्टेशन पर सवार हो जायें। पहले गाड़ी को किसी स्टेशन पर रोककर ख़जाना लूटने की योजना बनी थी, और तैयारी का काम शुरू भी हो गया था, किन्तु एक आकस्मिक घटना के कारण इसे त्याग कर, हमें दूसरी योजना बनानी पड़ी। पहली योजना क्यों छोड़ी गयी, इसकी कहानी इस प्रकार है :

इस काम को करने के लिए लखनऊ में दस सदस्य विभिन्न केंद्रों से आकर एकत्र हुए थे। इनमें से अधिकांश लोग लखनऊ की छेदीलाल धर्मशाला में ठहरे थे, किन्तु वे लोग वहाँ पर एक टोली के रूप में नहीं, बल्कि एक दूसरे से अपरिचित व्यक्तियों के रूप में अलग-अलग कमरों में ठहरे हुए थे। बाकी लोग जिनके ठहरने के लिए अन्य विश्वास योग्य स्थान थे, उन स्थानों में ठहरे थे। निश्चित दिवस को हम सभी अपने-अपने अर्धगुप्त स्थानों से प्रकट हुए और पश्चिम की ओर के अगले स्टेशन की ओर रवाना हुए। हमारी योजना यह थी कि हम स्टेशन पर जाकर, जब गाड़ी खड़ी हो तो स्टेशन मास्टर आदि को पकड़ लें।

तो हम लखनऊ से अगले स्टेशन को पैदल रवाना हुए। किन्तु अभी हम अगले स्टेशन के सिग्नल के निकट भी नहीं पहुँच पाये थे कि देखते क्या हैं, वह गाड़ी जिसे हम पकड़ने वाले थे, हमारे सामने से निकली जा रही है। हम कोई दस मिनट देर से पहुँचे थे। ऐसी हालत में हमारे लिए फिर पैदल लखनऊ लौट आने के अतिरिक्त और कोई चारा न था। फिर भी बिल्कुल निश्चित रूप से जान लेने के लिए कि यही आठ डाउन ट्रेन थी या नहीं, हमने अपने में से एक व्यक्ति को स्टेशन पर स्काउट बनाकर भेजा। बाकी लोग स्टेशन से दूर बैठे रहे, या इधर-उधर टहलते रहे। फिजूल में सबके स्टेशन पर जाकर पुलिस को सन्देह करने का मौका देने की ज़रूरत नहीं थी।

जब हमारा भेजा हुआ गुप्तचर ख़बर लेकर लौट आया कि यह जो गाड़ी गयी थी, सचमुच आठ डाउन गाड़ी थी, तब हम उलटे-पाँव पैदल लखनऊ लौटे। उन दिनों गोविन्द कर लखनऊ में ही थे। गोविन्दजी बंगाल के पबना जिले में पुलिस के साथ गोलीकाण्ड में घायल होकर पकड़े गये थे। सात साल की सज़ा लेकर अन्दमन गये थे। उनके शरीर में छर्रे मौजूद थे, जिन्हें हम टटोलकर देख सकते थे। उन्होंने हर तरीके से हमारी मदद की, किन्तु वे हमारी इस टुकड़ी में शरीक नहीं हुए। हमने उनसे कहा भी कि आप इसमें शिरकत करें, किन्तु कई कारण बताकर वे अलग रहे। जो हो, उनकी सहायता और सलाह हमारे लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई।

अगले दिन ९ अगस्त, १९२५ को हमने दूसरी योजना पर काम किया। हम सब दोपहर के समय लखनऊ से पश्चिम जानेवाली गाड़ी पर सवार हुए और काकोरी स्टेशन पर उतर गये। अबकी बार हम किसी बात को भाग्य पर छोड़ना नहीं चाहते थे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Research Foundation, Chandigarh

अबकी बार गाड़ी-हमें योजना देखने तक रुक नहीं जा सकती थी, क्योंकि हम स्वयं उस गाड़ी पर सवार होने वाले थे ।

हम उसी काकोरी स्टेशन से साढ़े छह बजे शाम के समय उस आठ डाउन ट्रेन पर सवार हो गये । हममें से तीन——अशफ़ाक़उल्ला, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी और शचीन्द्रनाथ बख्शी——ने सेकंड क्लास के टिकट लिये और सेकंड क्लास के डिब्बे में सवार हो गये । बाकी सात, अर्थात पंडित रामप्रसाद 'बिस्मिल', केशव चक्रवर्ती, मुरारीलाल, मुकुन्दीलाल, चन्द्रशेखर आज़ाद, बनवारीलाल और मैं, सारी ट्रेन में बँटकर सवार हुए। जो लोग सेकंड क्लास के डिब्बे में सवार हुए थे, उन पर यह काम डाला गया था कि वे ज़ंजीर खींचकर गाड़ी खड़ी करें । फिर दूसरे साथी गार्ड को पकड़ लेंगे और कुछ साथी ख़ज़ाने को कब्जे में कर लेंगे।

ट्रेन पर धावा

इस योजना का अक्षरशः पालन हुआ । यथासमय सेकंड क्लास के डिब्बे के साथियों ने ज़ंजीर खींच ली, और गाड़ी एकाएक खड़ी हो गयी । तब तक अंधेरा हो चला था, और उस समय सिर्फ उतनी ही रोशनी थी, जितनी इस योजना को सफल बनाने के लिए आवश्यक थी । इस दृष्टि से रामप्रसाद 'बिस्मिल' की योजना त्रुटिहीन थी ।

ज्योंही गाड़ी खड़ी हुई त्योंही हम, जो तीसरे दर्जे के डिब्बे में सवार थे, उतर पड़े, और पहले ही से जिसका जो काम तय था, वह उसे करने के लिए तैयार हो गया। फौरन गार्ड को पेट के बल लिटा दिया गया और जिस सन्दूक में प्रत्येक स्टेशन से ख़ज़ाना इकट्ठा होता था, उसे ढकेलकर नीचे गिरा दिया गया । इस सन्दूक को तोड़ने के लिए बहुत बड़ा हथोड़ा तथा एक छेनी तैयार थी । कुछ लोग फौरन इनको लेकर सन्दूक को तोड़ने-काटने में जुट गये । लाइन के दोनों तरफ दो-दो आदमी माउज़र पिस्तौल हाथ में लिये पहरा दे रहे थे । इस अवसर पर कोई दो-नली बन्दूक या राइफिल नहीं ले जायी गयी थी, किन्तु माउज़र पिस्तौलों पर कुन्दे चढ़ा दिये गये थे । ये कुन्दे ऐसे थे कि इनको जब आवश्यकता हो तब अलग किया जा सकता था । इस प्रकार कुन्दे चढ़ा देने पर, पिस्तौलें राइफिलों का काम दे सकती थीं । इस ट्रेन में एक अंग्रेज़ मेजर या कर्नल यात्रा कर रहा था । इसके पास एक फील्ड रिवाल्वर था । इसके अतिरिक्त हमारे आदमियों ने यह देखा था कि एक अन्य ख़ज़ाने के साथ कुछ हथियारबन्द पुलिस वाले भी उसी गाड़ी में यात्रा कर रहे थे । इसलिए यह सम्भव था कि दूसरी तरफ से भी गोली चलती । फर्स्ट क्लास के गोरों में भी किसी के पास पिस्तौल हो सकती थी ।

ज्योंही गाड़ी ठहरी त्योंही हमने अपनी-अपनी पूर्व निश्चित जगह ले ली । मुसाफिरों से यह अपील की गयी कि वे जहाँ के तहाँ बैठे रहें, क्योंकि उन्हें कोई लूटने नहीं जा रहा है और हम केवल सरकारी ख़ज़ाना लूटने आये हैं । कहीं लोग तमाशा न समझ बैठें, और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
परिस्थिति की गम्भीरता को अच्छी तरह से समझ ले, इसलिए कुछ गोलियों को भी योंही चला दिया गया। इस बीच सन्दूक को तोड़ने का काम जारी था, किन्तु इसमें आशानुरूप सफलता नहीं मिल रही थी। इस दिशा में असफलता से सारी बात पर पानी फिरा जा रहा था। अशफ़ाक़ पहरे की ड्यूटी पर थे। जब उन्होंने यह सुना कि इस प्रकार सन्दूक वाला काम ठीक नहीं चल रहा है तो अपनी माउज़र पिस्तौल मेरे हाथ में दे दी और स्वयं सन्दूक को काटने में जुट गये। पंडितजी के अतिरिक्त वही हम लोगों में शायद सबसे तगड़े व्यक्ति थे। उन्होंने जाते ही इस प्रकार हथौड़े की चोटें कीं कि शीघ्र ही वह सन्दूक इस बात के लिए विवश हो कि अपने अन्दर के छिपे हुए खजाने को उगल दे। उनकी भयानक चोटें दूर-दूर तक प्रतिध्वनित हो रही थीं।

व्यवधान और आशंका

प्रत्येक के चेहरे पर सफलता की झलक थी। किन्तु उसी समय एकाएक दूर से किसी गाड़ी के आने की आहट सुनायी पड़ने लगी। प्रतिक्षण वह गाड़ी करीब ही आती जा रही थी। इसमें कोई सन्देह नहीं था कि वह गाड़ी हमारी ही तरफ आ रही थी। वह गाड़ी किस प्रकार की थी? भला अधिकारियों को इतनी जल्दी ट्रेन डकैती की ख़बर कैसे लग गयी? क्या यह सम्भव है कि किसी ने हमारे साथ धोखा किया हो? ये प्रश्न हमारे मन में एक के बाद एक बहुत तेज़ी से कौंध गये। जब हमने सोचा कि गाड़ी सामरिक तरीके से लैस होकर हमारी तरफ आ रही है तो एक क्षण के लिए हमारी मज्जा जम-सी गयी। हम सबने इस समय मुँह उठाकर साहसी नेता की ओर देखा। वह विचारमग्न थे, कुछ न बोले। यह स्पष्ट था कि उन्होंने यह तय कर लिया था कि यदि सचमुच विपत्ति सिर पर आ ही पड़ी, तो हम डटकर सन्मुख युद्ध करेंगे। ऐसे समय पीछे हटने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। इसके अतिरिक्त हम तो यह सोच ही चुके थे कि इस मौक़े को एक प्रदर्शन के रूप में परिणत कर दिया जाये। फिर हमें इस बात से क्या डर हो सकता था? ओखली में सिर रख दिया, तो भला चोटों से क्या डरना?

इस बीच अशफ़ाक का प्रकांड हथौड़ा उस सन्दूक पर नियमित गति से गिरता जा रहा था और वह दरार बृहत्तर होती जा रही थी। अन्धकार का दामन पृथ्वी पर गिर रहा था। चारों तरफ सन्नाटा था। मुसाफिरों को, जिन्होंने इस कार्य के प्रारम्भ होते समय शोरगुल किया था, गोलियों के भय से चुप करा दिया गया था। बराबर गोलियाँ चलायी जा रही थीं, ताकि लोग डिब्बों के अन्दर ही रहें। क्योंकि प्रारम्भ में ही मुसाफिरों से यह कह दिया गया था कि हम यही सरकारी ख़ज़ाना लूटने आये हैं और उनको हमसे कोई खतरा नहीं है, अतः कुछ तो इस आश्वासन के कारण और अधिकांश लोग गोलियों के कारण चुप हो गये थे। इसके अतिरिक्त वे भी शायद उस करीब आती हुई आवाज़ को ध्यान से सुन रहे थे।

इस बीच इंजन के सामने की बहुत तेज़ सर्चलाइट दिखायी पड़ने लगी। अपरिहार्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाग्य की-सी तेज़ी से यह गाड़ी हमारी तरफ़ बढ़ती ही चली आ रही थी। हम पर क्या बीतने वाला था ? कौन जाने ? जिस जगह पर इस समय आठ डाउन ट्रेन खड़ी थी, वहाँ दोहरी लाइनें थीं। पंडितजी को एकाएक स्मरण हो आया कि यह दून एक्सप्रेस के आन का समय है। अवश्य ही आने वाली गाड़ी दून एक्सप्रेस ही है। उन्होंने फौरन हमें यह बात बता दी। इस पर सब आश्वस्त हुए और सभी इस बात पर ताज्जुब करने लगे कि एक ऐसी मामूली बात जो हम सबको ज्ञात थी, हमें याद नहीं आयी, क्योंकि इन दिनों हम सब इस तरफ की आने-जाने वाली सब गाड़ियों के टाइम टेबुल को बहुत बारीकी से अध्ययन करते थे। तो यह जो गाड़ी आ रही थी, कोई सैनिक गाड़ी नहीं थी। किन्तु इससे हमारा ख़तरा पूर्ण रूप से टलता नहीं जान पड़ा, क्योंकि मान लिया कि यह गाड़ी हमको पकडने के लिए भेजी नहीं गयी है, फिर भी जब उस आने वाली एक्सप्रेस ट्रेन के ड्राइवर, गार्ड तथा ट्रेन के अन्य लोग इस ट्रेन को जंगल के बीच रोशनी बुझाकर खड़ी देखेंगे, तो सम्भव था कि हमारी गाड़ी के मुसाफिर लोग मौका देखकर, एकाएक जोर से चिल्लाकर उस ट्रेन के लोगों को अपनी विपत्ति की ओर आकृष्ट करें।

किन्तु हमें सोचने का समय नहीं था। पंडितजी हमारे सामने ही खड़े थे। वे हमारे नेता थे, और हमें उनकी सामरिक योग्यता में पूर्ण विश्वास था। यदि मामला कुछ बिगड़ा, तो वे अवश्य ही कोई न कोई तरीका उसका मुकाबला करने के लिए निकाल लेंगे। इसके पहले भी इससे भी कहीं गम्भीर अवसरों का उन्होंने बहुत अच्छे ढंग से मुकाबला किया था। शायद वैसा अवसर आने पर वे हमसे पीछे हटने के लिए कहें। शायद वे हमसे आसपास के पेड़ों की आड़ लेकर खड़े होने को कहें, और फिर हम वहाँ से डटकर गोली का जवाब गोली से दें।

गोरे सैनिक की 'बहादुरी'!

अब एक्सप्रेस ट्रेन बिल्कुल हमारे पास आ गयी थी। इस मौके पर पंडितजी ने प्रत्येक को यह हिदायत दी कि वह थोड़ी देर के लिए अपनी उन्नत पिस्तौलों को नीची कर लें, और अशफ़ाक़ से यह कहा कि वह हथौड़ा जमीन पर डाल दें, और जो जहाँ था वहीं खड़ा रहे, इस तरह कि मानो कोई दृश्य देख रहा हो। क्या ही रोमांचकारी दृश्य था! एक्सप्रेस ट्रेन बहुत ही तेज़ गति से धड़धडाती आ रही थी। एक मिनट के अन्दर वह हमारे सामने से निकल गयी। ऐसा जान पड़ा कि एक्सप्रेस ट्रेन में से किसी ने भी इस पैसेंजर ट्रेन को देखा ही नहीं। जिस समय लोग एक्सप्रेस गाड़ी में सफर करते हैं, उस समय उनमें पैसेंजर गाड़ियों में सफर करने वाले मुसाफिरों को अवज्ञा की दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति होती है। यदि एक्सप्रेस ट्रेन के किसी भले आदमी ने इस प्रकार इस मुसाफ़िर गाड़ी को जंगल में खड़ी देखा भी होगा, तो उसने यह सोचकर अपने कौतूहल की निवृत्ति कर ली होगी कि इन पैसेंजर गाड़ियों में जहाँ-तहाँ जब-तब रुकने का मर्ज़ है।

इस घटना की **'इंडियन डेली टेलीग्राफ'** को दी हुई यह खबर बिल्कुल ग़लत थी कि इस काण्ड में अनेक अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी मारे गये। गाड़ी में जो गोरे और हिन्दुस्तानी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
था, स्पष्ट है कि उन लोगों ने हथियार का प्रयोग नहीं किया। कोई भी गोरा नहीं मारा गया। हाँ, एक मुसाफ़िर आकस्मिक रूप से मारा गया था। जिस समय गोलियाँ तेज़ी से चल रही थीं, उस समय वह महाशय अपनी गाड़ी से यह देखने के लिए उतरे थे कि उनकी नयी बीवी ठीक है या नहीं। यह बीवी औरतों के डिब्बे में थी और बिल्कुल सुरक्षित थी। इस प्रकार मुसाफ़िरों को दी गयी चेतावनी को न मानकर गाड़ी से उतरकर ही इस व्यक्ति ने विपत्ति बुलायी थी। इस व्यक्ति का नाम अमज़द अली या ऐसा ही कुछ था। जहाँ तक किसी गोरे के मारे जाने का सम्बन्ध है, तथ्य कुछ और ही था। जिस फ़ौजी गोरे के विषय में यह बात कही गयी थी वह पल्टन का मेजर था। जिस समय गोली चल रही थी, उसने उस समय अपने डिब्बे के सारे दरवाज़े बन्द कर लिये थे। जब गाड़ी लखनऊ पहुँची तभी यह गोरा अपने सुरक्षित स्थान से निकला। यह रही गोरे की 'बहादुरी'!

यहाँ मैं इस षडयंत्र का पूरा इतिहास नहीं लिख रहा हूँ। इस मुकदमे में लोगों को इस प्रकार सजाएँ हुईं : भूपेन्द्र सान्याल को पाँच साल की सजा सुनायी गयी। जब करीब-करीब निर्दोष भूपेन्द्र को इस प्रकार पाँच साल की सजा सुनायी गयी तो हम इस बात की आसानी से कल्पना कर सकते थे कि आगे उस पिटारे में क्या निकलेगा। फिर भी आशा बनी ही रही। संक्षेप में, अन्त तक तीन व्यक्तियों को, अर्थात रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी और रोशनसिंह को, फाँसी की सजा सुनायी गयी। शचीन्द्र दादा (शचीन्द्रनाथ सान्याल) को आजीवन कालेपानी की सजा सुनायी गयी। इसके बाद सबसे बड़ी सजा मेरी थी। मुझे चौदह साल की सख्त सजा सुना दी गयी। जोगेश चटर्जी, गोविन्दचरण कर, मुकुन्दीलाल, रामकृष्ण खत्री तथा राजकुमार सिंह, प्रत्येक को दस-दस साल की सजा सुनायी गयी। विष्णुशरण दुबलिश और सुरेश मट्टाचार्य को सात साल की सजा हुई। प्रेमकृष्ण खन्ना और रामदुलारे त्रिवेदी को पाँच-पाँच साल की सजा सुनायी गयी। प्रणवेश को चार साल की सजा हुई। बनवारी को भी शायद इतनी ही सजा मिली। रामनाथ पाण्डेय को तीन साल की सजा दी गयी। कुछ लोग फरार थे—जैसे चन्द्रशेखर आजाद, अशफ़ाक़उल्ला खाँ, शचीन्द्रनाथ बख्शी, कुन्दनलाल। इनमें से अशफ़ाक़ और बख्शी इतनी देर बाद गिरफ्तार हुए कि वे मुख्य मुकदमे में शामिल न किये जा सके। उन पर पूरक मुकदमा चला, जिसमें अशफ़ाक़ को फाँसी और शचीन्द्रनाथ बख्शी को आजन्म कालेपानी की सजा हुई।

काकोरी केस की विशेषताएँ

काकोरी षड़यंत्र को राष्ट्रीय आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर इस कारण माना गया कि इसमें कई विशेषताएँ थीं :

१. प्रथम बार किसी षड़यंत्र के लोगों ने अदालत को क्रान्तिकारी प्रचार कार्य के मंच के रूप में इस्तेमाल किया, जिस तकनीक को बाद में चलकर सरदार भगतसिंह और यतीन्द्रनाथ ने पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। काकोरी के अभियुक्त बेड़ियों की झनकार

पर बिस्मिल, रवीन्द्र, नजरुल आदि के राष्ट्रीय गीत गाते हुए अदालत में प्रविष्ट होते थे
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
और नारे लगाते थे : "भारतमाता की जय ! भारतीय प्रजातंत्र की जय !"

२. उनके मुकदमे की पैरवी करने वाले बाद में राष्ट्रीय रूप से प्रसिद्ध हो गये—जैसे चन्द्रभानु गुप्त और गोविन्दबल्लभ पन्त बाद में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री बने। पन्तजी तो बाद को भारत सरकार के गृह मंत्री बने। हमारे वकील मोहनलाल सक्सेना भी भारत सरकार के मंत्री बने। कलकत्ता के बी. एम. चौधरी बैरिस्टर मामूली पारिश्रमिक पर हमारी पैरवी करते रहे। सरकार की ओर से हमारे विरुद्ध वकील थे जगतनारायण मुल्ला और आनन्दनारायण मुल्ला।

३. काकोरी के कैदियों ने अनशन करके सरकार से यूरोपीय कैदियों जैसा व्यवहार प्राप्त किया। मुझे खूब याद है कि चन्द्रभानु गुप्त ने उस जमाने में हमारी माँग को असम्भव माना था। केवल गणेशशंकर विद्यार्थी को हमारे अनशन पर पूर्ण विश्वास था।

४. बाद को काकोरी के फरार चन्द्रशेखर आज़ाद (भगतसिंह के साथ) दल के नेता बने और छः साल सक्रिय फरारी जीवन का विश्व रेकार्ड स्थापित करके उन्होंने गोलियों का जवाब गोलियों से देते हुए वीर गति प्राप्त की।

५. इस षड़यंत्र के चार व्यक्ति बाद में संसद सदस्य हुए : (१) विष्णुशरण दुबलिश, (२) जोगेश चटर्जी, (३) प्रेमकृष्ण खन्ना, (४) दामोदरस्वरूप सेठ। लगभग बीस दण्डितों में चार ऐसे व्यक्तियों का होना, जिन्हें नेहरू सरकार ने इस लायक समझा कि वे संसद सदस्य बनाये जायें, बहुत बड़ी बात है। यों तो इनके अलावा शचीन्द्रनाथ बख़्शी भी उत्तर प्रदेश में विधानसभा के सदस्य बने—वह जनसंघ के टिकट पर चुने गये।

६. काकोरी षडयंत्र के शचीन्द्रनाथ सान्याल सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस के दाहिने हाथ थे। रासबिहारी बोस का सम्बन्ध ग़दर पार्टी से भी था और लार्ड हार्डिंज पर १९११ में जो बम बसन्तकुमार विश्वास ने फेंका था, उसके पीछे भी वही थे। शचीन्द्रनाथ सान्याल ने **'बन्दी जीवन'** में आपबीती लिखी है, जिसमें उस समय के क्रान्तिकारी आन्दोलन का पूरा विश्लेषण आ जाता है। शचीन्द्रनाथ सान्याल ही हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन के संस्थापक थे, जो भारत की प्रथम सोशलिस्ट या कम्युनिस्ट पार्टी कहला सकती है, क्योंकि कुछ वैचारिक गड़बड़ियों के बावजूद शचीन्द्रनाथ सान्याल ने संविधान में दल का उद्देश्य ऐसे समाज की स्थापना बताया था, जिसमें सब प्रकार से **'मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव'** हो।

इस सम्बन्ध में यह बता देना ज़रूरी है कि क्रान्तिकारियों ने ही भारत में सबसे पहले समाजवाद के विचार को स्वीकार किया। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारिणी मादाम विकाजी कामा १९०७ में जर्मनी के स्टटगार्ट शहर में होने वाली अन्तरराष्ट्रीय समाजवादी कान्फ्रेंस में पधारी थीं। बाद को वह फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी की नियमित सदस्या बनीं। इस क्षेत्र में दूसरे क्रान्तिकारी अग्रदूत थे मानवेन्द्रनाथ राय तथा अवनी मुकर्जी जिन्होंने ताशकन्द में १९१९ में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की, पर वर्तमान कम्युनिस्ट पार्टियाँ उससे नहीं निकलीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद ने इस मिलकर के दल का नाम हिन्दुस्तान प्रजातंत्र संघ से हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ कर दिया ।

इस दल के रामप्रसाद बिस्मिल और मुकुन्दीलाल, पं. गेंदादाल दीक्षित के नेतृत्व में चलने वाली संस्था 'मातृवेदी' के सदस्य थे, जिसके सदस्यों को लेकर मैनपुरी षड़यंत्र केस चला था ; दीक्षितजी जेल से किस तरह एक मुखबिर को लेकर भाग गये, यह क्रान्तिकारी इतिहास का एक अनोखा अध्याय है । दीक्षितजी बड़ी दयनीय परिस्थितियों में शहीद हुए, जिसकी कहानी मैंने **'क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास'** तथा अन्य पुस्तकों में लिखी है ।

यह तो हुई उन षड़यंत्रों की बात जो काकोरी के पहले हुए । पर काकोरी की शृंखला में चला लाहौर षड़यंत्र, जिसके नेता थे चन्द्रशेखर आज़ाद और सरदार भगतसिंह । इन लोगों ने दल के नाम में, जैसा कि हमने बताया, 'समाजवादी' शब्द जोड़ दिया और इस प्रकार दल का नया नाम पड़ा । सरदार भगतसिंह ने केंद्रीय असेम्बली में बटुकेश्वर दत्त के साथ बम फेंककर बहरों को भी सुनाते हुए यह घोषित किया कि **क्रान्तिकारी दल का उद्देश्य समाजवाद की स्थापना है** । इसके बाद ही नेहरूजी ने कांग्रेस के अध्यक्षीय मंच से उसको प्रतिध्वनित करते हुए कहा : "मैं समाजवादी और प्रजातंत्रवादी हूँ ।" सरदार भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव फाँसी पर चढ़े, यतीन्द्रनाथ दास अनशन के ६३वें दिन शहीद हुए ।

काकोरी की शाखा के रूप में देवघर षड़यंत्र चला, जिसके प्रमुख नेता थे इलाहाबाद के शैलेन्द्र चक्रवर्ती । काकोरी के सुरेन्द्र तथा वीरेन्द्र भी उसके नेता थे ।

सरदार भगतसिंह के मुकदमे वाले क्रान्तिकारी जेल में काकोरी दिवस मनाते रहे । १९ दिसम्बर, १९२७ को रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफ़ाक़उल्ला खाँ और रोशनसिंह को क्रमशः गोरखपुर, फ़ैजाबाद और इलाहाबाद (मलाका) जेल में फाँसी हुई । राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को १७ दिसम्बर को गोण्डा जेल में सब साथियों से दो दिन पहले क्यों फाँसी हुई, इस पर मनमाड बम काण्ड के दण्डित मनमोहन गुप्त का यह कहना है कि १८ दिसम्बर को क्रान्तिकारी उन्हें जेल से भगाने का तय कर चुके थे, इस कारण स्थानीय अधिकारियों ने डर के मारे १७ को ही उनसे छुट्टी पा ली । पर इस व्याख्या का कोई समर्थन नहीं हुआ । फिर भी कोई कारण तो होना चाहिये । इस पर अभी खोज पूरी नहीं हुई है ।

क्रान्तिकारी आन्दोलन इसके बाद ज़ोर पकड़ता चला गया । सरदार भगतसिंह और काकोरी के फरार चन्द्रशेखर आज़ाद और उनके बाद चटगाँव के सूर्यसेन ने इसमें चार चाँद लगा दिये । सरदार भगतसिंह और उनके बहादुर साथियों को यह श्रेय हासिल है कि उन्होंने दल के विचारधारागत मोर्चे को समाजवाद तक पहुँचा दिया । इसका यह असर हुआ कि जवाहरलाल नेहरू ने भी कांग्रेस के अध्यक्ष पद से अपने को समाजवादी और प्रजातंत्रवादी घोषित किया । वह तब से बराबर समाजवाद की बातें करते रहे, परन्तु उनके हाथों में सतरह साल तक राजशक्ति रहने पर भी वह एक भी ऐसा कार्य नहीं कर सके जिसे चिर्चिल या क्लेमांसो जैसा बूर्जुआ देशभक्त नहीं करता । वह समाजवाद की माला जपते ज़रूर रहे ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१९४२ के आन्दोलन में गांधी आन्दोलन के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन (लगभग क्रान्ति) भी हो गया, जो गाँधीजी द्वारा चलाये हुए १९२१, १९३०, १९३२ के आन्दोलनों से आधारभूत रूप से पृथक था। यहाँ तक कि गाँधीजी जब छूटे तो उन्होंने उसके पितृत्व को अस्वीकार किया।

क्रान्तिकारी आन्दोलन की अन्तिम कड़ी है रासबिहारी-सुभाष की आज़ाद हिन्द फ़ौज, जो युद्धक्षेत्र में तो हार गयी, क्योंकि उसका भाग्य जापान से बँधा था, पर उस पर जो मुकदमे चले, उनसे ऐसा वातावरण उत्पन्न हुआ कि रातोंरात अंग्रेज़ों की भारतीय सेना मुक्ति सेना बन गयी और इस प्रकार नौसैनिक विद्रोह आदि विस्फोट शुरू हो गये, जिससे भारत स्वतंत्र हो गया; क्योंकि अंग्रेज़ों ने इसी में भलाई समझी कि अब भारत छोड़कर चले जायें, नहीं तो आगे बने रहने पर—जैसा कि वे कुछ साल केवल गोरी फ़ौजों के बूते रह सकते थे—उन्हें कांग्रेस, मुस्लिम लीग जैसे नरम दलों के हाथों में नहीं बल्कि आज़ाद हिन्द फ़ौज, हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ, सूर्यसेन का दल, फारवर्ड ब्लाक, कम्युनिस्ट पार्टी (जो १९४२ के सम्मोहन से जागकर फिर मोर्चे पर आ चुकी थी) आदि के हाथों में शक्ति सौंपनी पड़ती, जिनका पहला फरमान होता अंग्रेज़ों आदि की पूँजी ज़ब्त करना।

आगे की लड़ाई

आगे की लड़ाई अभी बाकी है, क्योंकि अभी देश में समाजवाद की स्थापना नहीं हुई। १९७१ में बँगला देश क्रान्तिकारी उपायों से, भारत की सैनिक सहायता से, स्वतंत्र हुआ, क्योंकि १९४७ में अंग्रेज़ों के चंगुल से मुक्त होने पर भी वह आसमान से गिरकर पाकिस्तानी साम्राज्यवाद के खजूर में फँस गया था। पर दुख है कि तीन वर्ष मुश्किल से बीत पाये थे कि अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रान्ति ने मुजीब की हत्या करवाकर वहाँ फासिस्टवादी सैनिक शासन स्थापित करा दिया। भारत में इन्दिरा नेपोलियन की तरह राजवंश चलाने के चक्कर में देश को सर्वनाश के गड्ढे में ले जा रही थी। उससे बाल-बाल बचे, पर हम वहीं पहुँचे जहाँ १९४७ में पहुँचे थे। समाजवाद की लड़ाई अभी बाकी है। जब तक हम उसमें जीत हासिल नहीं करते, तब तक मंगल पाण्डे से लेकर मुजीब तक इस उपमहाद्वीप के शहीदों के ऋण से हम उऋण नहीं हो सकते। लड़ाई जारी है और जारी रहेगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फाँसी की छाया में क्रान्तिकारी मनोविनोद और दृढ़ता

☐ क्रान्तिवीर रामकृष्ण खत्री

[खत्रीजी काकोरी शहीद स्मारक समारोह के संयोजक हैं। आपका परिचय काकोरी के क्रान्तिवीरों के परिचय में दिया जा चुका है। --सं.]

अपने क्रान्तिकारी शहीदों और काकोरी केस के अपने साथियों के हवालाती जीवन के मनोविनोदों की याद आती है, तो किसी शायर का यह शेर भी याद आये बिना नहीं रहता :

अपना अपना हौसला है, अपना अपना ज़ब्ते ग़म ।
वह क़फ़स कहते रहे, हम आशियाँ कहते रहे ।।

हमारे शास्त्रकारों ने आत्मा को आनन्द रूप माना है। इस सत्य के दर्शन हमें सबसे अधिक उस समय होते हैं जिस समय हम फाँसी की सज़ा पाये हुए व्यक्तियों को भलीभाँति जानी-समझी मृत्यु की छाया में भी हृदय से मनोविनोद करते पाते हैं, केवल वीरता का बाह्य प्रदर्शन करने भर के लिए नहीं, बल्कि आत्मा के निश्छल निरावृत्त प्रकाश में ही। और मुझे ऐसे मनोविनोद के दर्शन करने का सौभाग्य काकोरी केस के अपने साथी अभियुक्तों के हवालाती जीवन में मिला है।

मुखबिर और मुख्यवीर

मेरा जन्म महाराष्ट्र अंचल में बुलढाना ज़िले के चिखली गाँव में हुआ था और मैं मूलतः मराठीभाषी ही हूँ, हिन्दी का मेरा ज्ञान यों चलताऊ ही था। मुझे जब काकोरी षड़यंत्र केस में गिरफ्तार करके जेल पहुँचाया गया तो मुझे कुछ दिन अन्य साथी अभियुक्तों से अलग रखा गया। अन्य साथियों को इसकी खबर लगी और उनको यह जानने की उत्सुकता स्वाभाविक रूप से हुई कि आखिर मुझे अन्य सबसे अलग क्यों रखा गया, क्योंकि नियमतः उन अभियुक्तों को ही अलग रखा जाता था जो अपराधी होना स्वीकार कर लेते थे और सरकार से क्षमादान प्राप्त करके अपने साथियों के विरुद्ध गवाही देने की तैयार हो जाते थे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

'काकोरी शहीद स्मृति' के लेखक

क्रान्तिवीर
विजयकुमार सिनहा

काकोरी षड़यंत्र केस में अभियुक्तों
के वकील श्री कृपाशंकर हजेला

क्रान्तिवीर
सदाशिवराव मलकापुरकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'काकोरी शहीद स्मृति' के लेखक

श्री बाबूलाल वर्मा

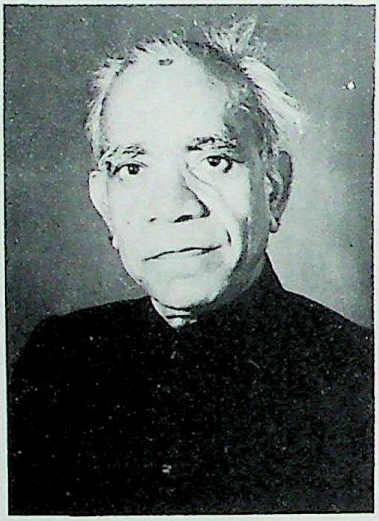

डा० भगवानदास माहौर

श्रीमती यमुना माहौर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'काकोरी शहीद स्मृति' के लेखक

क्रान्तिवीर
गजानन सदाशिव पोतदार

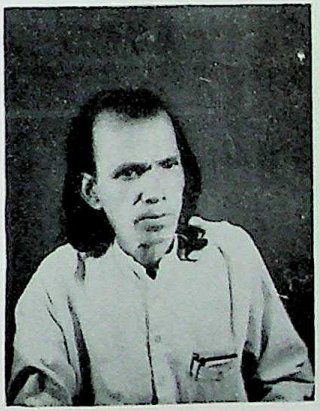

क्रान्तिवीर
रामचन्द्र नरहरि बापट

क्रान्तिवीर
रमेशचन्द्र गुप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'काकोरी शहीद स्मृति' के लेखक

क्रान्तिवीर
शंकरराव मलकापुरकर

क्रान्तिवीर
रामसेवक रावत

क्रान्तिवीर
राजाराम शर्मा

क्रान्तिवीर
मणिलाल शर्मा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
अंग्रेजी में इनको 'अप्रूवर' और हिन्दुस्तानी में 'मुखबिर' कहा जाता है। श्री शीतला-सहाय और श्री मोहनलाल गौतम आदि जो इस केस में पकड़े जाकर जेल में बन्द थे, और मुझे व्यक्तिगत रूप से नहीं जानते थे, उन्होंने एक कैदी वार्डर के द्वारा यह जानने का प्रयास किया कि मैं भी कहीं मुखबिर तो नहीं हो गया, हूँ। उन्होंने मुझ गोविन्दप्रकाश को कराची वाले स्वामी गोविन्दानन्द समझ लिया जो उनसे क्रान्तिकारी काम के लिए कुछ आर्थिक सहायता ले गये थे, अतः उनके अप्रूवर हो जाने से उनका घबरा जाना स्वाभाविक था । उन्होंने सभी अभियुक्तों में मेरे मुखबिर हो जाने की बात प्रचारित कर दी और बाहर श्री जवाहरलाल नेहरू आदि के पास भी यह समाचार भेज दिया ताकि बाहर गोविन्दानन्द के सम्पर्क के अन्य लोग भी सावधान हो जायें।

वार्डर ने आकर मुझसे पूछा कि क्या तुम मुखबिर हो? मुखबिर का अर्थ मैं नहीं जानता था। मैं संस्कृत की मध्यमा श्रेणी का विद्यार्थी था, अतः इस मुखबिर शब्द को मैंने 'मुखबीर' यानी 'मुख्यवीर' शब्द का विकृत रूप समझा। अतः मैंने वार्डर से विनम्रता से कहा कि मेरे अनेक साथी महान वीर हैं जो इसी जेल में हैं, मैं उनसे बहुत छोटा हूँ, तब भला मुझे मुखबीर (मुख्यवीर) कैसे कहा जा सकता है? न तो कैदी वार्डर मेरी संस्कृतनिष्ठ भाषा समझता था, न मैं उसकी जेल में चलनेवाली विशिष्ट शब्दावली वाली हिन्दी समझता था। जब कई बार मेरे और श्री मोहनलाल गौतम, श्री शीतलसहाय आदि के बीच इस प्रकार आ-जाकर उस कैदी वार्डर ने मुझसे कुछ कड़े शब्दों में कहा कि वे सब तो मुझे मुखबिर बताते हैं, तब भी मेरी समझ में कुछ न आया कि मामला क्या है। जेल की तनहाई के वातावरण में न जाने मन में क्या-क्या नहीं आया-गया। यह भी मन में आया कि कहीं साथियों का आशय यह तो नहीं है कि सारे क्रान्तिकारी कार्य, यानी सरकार और कानून की नज़रों में अपराध का मुख्य दायित्व मुझे लेना है। तो क्रान्तिकारी-सुलभ गर्व, और दृढ़ता से मेरा सीना फूल गया और मैंने गर्वीले स्वर से उससे कह दिया, "उनसे कह देना, मैं मुखबीर (मुख्यवीर) होने को तैयार हूँ।" और उसने जाकर यही श्री गौतम और श्री शीतलासहाय को कह भी दिया।

जब कालान्तर में अधिकारीगण मुझसे पूछताछ करके मुझसे ऐसी कोई भी बात न पा सके जो हमारे ख़िलाफ़ मुकदमे में सरकारी पक्ष के काम की होती, तो मुझे भी अब अन्य सब साथियों के साथ ही रख दिया गया। मैं जब उनके बीच पहुँचा तो साथियों में सनसनी फैल गयी। मामला क्या है? इस 'मुखबिर' को उनके बीच क्यों भेजा गया? अपने प्रति साथियों का उपेक्षा बल्कि तिरस्कार का व्यवहार देखकर मैं भी हैरान था । पं. रामप्रसाद की आँखों से तो मेरे ऊपर अंगारे ही बरस रहे थे। परन्तु दादा शचीन्द्रनाथ सान्याल के चेहरे पर कभी कोई भाव दिखता कभी कोई। उन्हें लगा, मेरा आचरण ऐसा तो नहीं है जो मुखबिरों का होना स्वाभाविक होता है। और कोई मुखबिर भी स्वभावतः अन्य अभियुक्तों के साथ स्वयं भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहना नहीं चाहेगा, क्योंकि किसी भी क्रान्तिकारी मामले के मुखबिर को यह पक्का विश्वास होता है कि क्रान्तिकारी लोग अवसर मिलते ही उसे जीता नहीं छोड़ेंगे। अधिकारी भी अप्रूवर को अभियुक्तों के साथ नहीं रखते। कहीं मुझे सिखा-पढ़ाकर पुलिस ने कुछ और रहस्य की बातें उनके साथ रहकर जानने को तो उनके बीच नहीं भेज दिया है ?

शचीनदा ने मुझसे कहा, "अब तक जो तुम्हें हम सबसे अलग रखा गया तो तुमने ज़रूर ऐसा कुछ किया या कहा होगा जिससे पुलिस को लगा होगा कि तुम मुखबिर हो सकते हो और तुमने वार्डर से भी कहा था कि तुम मुखबिर होने को तैयार हो। मुखबिर का अर्थ समझते हो क्या होता है?" मैंने बीच में ही टोककर कहा, "जी, अधिक नहीं तो कम से कम मध्यमा तक तो संस्कृत पढ़ा ही हूँ। 'मुख्य-वीर' शब्द का अर्थ भला में नहीं समझूँगा ? आप सब मुझसे बड़े हैं, आपके सामने मैं तो बहुत छोटा हूँ, लेकिन जब आपकी आज्ञा है कि मुझे आप सबमें मुख्यवीर होना चाहिये तो मैंने उसे शिरोधार्य कर लिया। इसमें मेरा क्या अपराध है ? मुख्यवीर के रूप में फाँसी पाने को पूरी तरह तैयार हूँ। मुख्यवीर का अर्थ तो मैं अच्छी तरह समझता हूँ परन्तु अपने प्रति साथियों का जो व्यवहार देख रहा हूँ, वह मेरी समझ में तनिक भी नहीं आ रहा है। मैं इससे बहुत दुखी हूँ।"

अनुभव-वृद्ध शचीनदा आधे सेकंड में ही सारा मामला समझ गये और उन्होंने हर्ष से चिल्लाकर सबसे कहा : "सुनो भाई, इन रामकृष्णजी को पुलिस ने नहीं, इनके संस्कृत ज्ञान ने ही 'मुखबिर' यानी 'मुख्यवीर' बना दिया है। इनका संस्कृत ज्ञान पुलिस से अधिक शक्तिशाली है।" फिर तो बड़े कहकहे लगे। सब बारी-बारी से मुझसे चिपटकर गले मिले। इस बीच में चित्त पर जो कलुष चढ़ा था, सारा धुल गया, और चित्त पहले से भी अधिक साफ़ और प्रफुल्लित होकर चमकने लगा, साथियों के स्नेह के लेप से। मेरे इस संस्कृत-ज्ञान का मज़ाक हफ्तों तक साथियों के मनोविनोद का विषय बना रहा।

हमारे मनोविनोद

क्रान्तिकारी पार्टी के हम सभी अभियुक्तों में नवयुवकों और बुजुर्गों का भेद स्वाभाविक था। बच्चों के लिए बुजुर्गों का और बुजुर्गों के लिए बच्चों का आचरण सदा से मनोविनोद का आधार होता चला आया है। हम क्रान्तिकारियों के सम्मिलित हवालाती जीवन में भी यही बात थी। नौजवानों का अल्हड़पन का और बुजुर्गों का सावधानीपूर्ण आचरण दोनों प्रचुर मनोविनोद की सामग्री जुटा देते थे। हम सभी का समय अधिकतर गाना गाने और एक दूसरे की तथा कुछ बुजुर्गों की नकलें उतारकर मनोविनोद करने में ही व्यतीत होता था। खेल और हास-परिहास के पर्याप्त साधन उपलब्ध हो गये थे। इस सम्बन्ध में मैं अपने साथी (अब स्वर्गीय) रामदुलारे त्रिवेदी के ही शब्दों को उद्धृत करना चाहता हूँ :

"जेल में हम लोगों ने एक अखाड़ा खोद रखा था, कबड्डी खेलते थे और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नियत समय पर पढ़ता भी होता था। सप्ताह में दो दिन वादविवाद के लिए नियत कर दिये गये थे। कुछ दिन बाद हारमोनियम, सितार आदि मिल गये। खूब गाना-बजाना होता था। हम लोगों में से राजकुमार, सुरेश बाबू और रामप्रसाद अच्छा गा लेते थे। ठा. रोशनसिंह और मुकुन्दीलाल अखाड़े में और विष्णुशरण दुबलिश शतरंज में विशेष रुचि रखते थे।

"फाँसी और लम्बी सजाएँ हमारे सामने नाच रही थीं। तब फिर जितने दिन एक साथ हैं, क्यों न उत्सव का जीवन व्यतीत करें? यह थी वह भावना जिसके अनुसार हम लोग काम कर रहे थे। महीने में दो दावतों का प्रबन्ध किया जाता था। उसमें हमारे सब वकील भी आमन्त्रित होते थे और दिन भर गाने-बजाने, हँसी-मनोरंजन में व्यतीत होता था। इसी बीच बसन्त आया। निश्चय हुआ कि सब लोग उस दिन बसन्ती रंग की गाँधी टोपी सर पर लगायें और हाथों में बसन्ती रूमाल लेकर अदालत जायें। यह भी निश्चय हुआ कि उस दिन के लिए कोई खास गीत हो। रात ही रात इस गीत की रचना की गयी (जो बाद में सर्वत्र प्रसिद्ध हो गया और आज तक रिकार्डों पर बजाया जाता है):

मेरा रँग दे बसन्ती चोला।
इसी रंग में रँग के शिवा ने माँ का बन्धन खोला।
यही रंग हल्दी घाटी में था खुलकर खेला।
नव बसन्त में भारत के हित वीरों का यह मेला।
मेरा रँग दे बसन्ती चोला॥

"रात को एक नाटक खेला गया। सभी यह अनुभव कर रहे थे कि अब कभी सब के सब एक साथ फिर ऐसे उत्सव में शामिल न हो सकेंगे। नाटक अछूतोद्धार पर था। जेल अधिकारी भी देखने आये थे। पं. रामप्रसादजी ने कल्लू चमार का पार्ट बड़ी खूबी से अदा किया।"

"तोरे से नैना मिलत नाहीं!"

उस नाटक में अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' ने कल्लू चमार का अभिनय करते हुए एक गाना भी गाया था जिसकी आरम्भिक पंक्ति आज भी मन में चमक जाती हैं:

तोरे से नैना मिलत नाहीं!
बदाऊँ ढूँढउ, बनारस ढूँढउ
तोरे से नैना मिलत नाहीं!

और उस अमर शहीद की मस्त और ज़िन्दादिल तस्वीर मन की आँखों में आज भी उसी प्रकार मटकने लगती है जिस प्रकार वह उस समय उक्त गाने को गाते और अभिनय करते हुए मटके थे। फाँसी के तख्ते की ओर दृढ़ता से अविकम्पित गति से चलने वाले

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
चरण विनोद में नाचते भी थे और फांसी पर गर्व से तनी सीना और स्थिर कटि विनोद में मटकती भी थी !

क्रान्तिकारी और पागलपन

दुनिया वाले तो हम सबको पागल कहते ही थे, हम भी एक दूसरे को आज़ादी के लिए अपने से कुछ अधिक ही पागल मानकर उसका सम्मान करते थे। ऐसी ही एक विनोद गोष्ठी में शचीनदा ने सबसे पूछा, "क्यों भाई, तुम्हारे घराने में कभी कोई पागल भी हुआ था या नहीं ?" अपने परिवार के भूतकाल के इतिवृत्त की याद करके जब कोई यह बता देता था कि उसकी अमुक पीढ़ी का अमुक रिश्तेदार पागल हो गया था, तब दादा कहा करते थे, "बिल्कुल ठीक। नहीं तो तुम क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित ही क्यों होते ?" मैंने भी याद करके अपने पूर्वजों में किसी पागल को खोज निकाला था और शचीनदा से तभी क्रान्तिकारी हो सकने का प्रमाणपत्र पा सका था।

अदालत में भी हास-परिहास

जब हम जेल से पुलिस की गाड़ी में बन्द अदालत में ले जाये जाते थे तो हम प्रायः कोई न कोई गाना गाते हुए और नारे लगाते हुए ही जाते थे। जैसा कि ऊपर स्वर्गीय भाई रामदुलारे के संस्मरण में आया है, जब हम बसन्ती टोपी और बसन्ती रूमाल लेकर अदालत पहुँचे तो उसके दूसरे दिन लखनऊ की उत्साही जनता अपने सारे कपड़े बसन्ती रंग में रँगे पहनकर जेल से अदालत तक के हमारे मार्ग पर खड़ी हमारा अभिनन्दन कर रही थी और हमारा उत्साह बढ़ा रही थी।

अदालत के कमरे में भी हमारे हास-परिहास की धारा रुकती न थी। वकीलों की जिरह और गवाहों के बयानों में आयी अनेक बातों से हमारा मनोरंजन होता था।

सरकार के पक्ष से बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के एक छात्र को गवाही के रूप में यह कहने के लिए प्रस्तुत किया गया था कि वह यह बताये कि सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी पर्चे 'दि रेवोल्यूशनरी' की पार्सल अभियुक्त राजकुमार सिनहा ने विश्वविद्यालय के डाकखाने से भेजी थी। उससे जिरह करते हुए जब बचाव पक्ष की तरफ से पूछा गया कि जिस पार्सल को उसने देखा था वह कितनी बड़ी थी, तो पहले तो वह सकपकाया और फिर उसने अपने दोनों हाथ सीने के सामने पूरे तानकर, एक दूसरे से मिलाकर और फिर उन्हें अलग करते हुए दोनों हाथों को कन्धे की सीध में ले जाकर लगभग दो गज़ का दायरा खींचकर बताया कि पार्सल का आकार इसके बीच का ही था, और कहा कि डाकख़ाने वाले इससे अधिक बड़ी पार्सल स्वीकार ही नहीं करते। इस पर सबको बड़ी हँसी आयी।

शास्त्रीजी की गवाही का 'सिलसिला'

बचाव पक्ष के एक गवाह संस्कृत के धुरन्धर विद्वान थे। वह बचाव पक्ष में गवाही में जिरह के सम्भावित प्रश्नों के उत्तरों को सिलसिलेवार भलीभाँति याद करके आये थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिरह में जब सरकारी वकील ने उनसे एक प्रश्न पूछा तो उसके उत्तर में आपने कहा, "देखिये वकील साहब, यह आपका सवाल है तो ठीक, और इसका उत्तर भी मेरे पास है, मगर यह सवाल आगे का है, यहाँ का नहीं। आप सिलसिलेवार पूछते जाइये।" सरकारी वकील ने कहा, "और यदि मैं इसे यहीं पूछ लूँ तो?" आप बोले, "इससे मेरा सिलसिला ही बिगड़ जायेगा।" सरकारी वकील की पहले तो भौंहें तनीं लेकिन फिर कुछ मुस्कराकर वह यह कहकर बैठ गये, "लीजिये साहब, इनका तो सिलसिला ही बिगड़ गया है।" हमारे बचाव पक्ष के वकील श्री चन्द्रभानु गुप्त की मुखमुद्रा इस पर देखने काबिल ही थी। कई दिनों तक हम लोगों में शास्त्रीजी का 'सिलसिला बिगड़ने' पर मनोविनोद होता रहा।

भूख-हड़तालों में भी विनोद

हवालाती जीवन में हमें कई बार भूख-हड़तालें भी करनी पड़ीं। परन्तु उनमें भी हमारे हास-परिहास की धारा कहीं अवरुद्ध नहीं हुई। भूख-हड़ताल के दौरान श्री मन्मथनाथ गुप्त सदैव बढ़िया-बढ़िया खाने की चीज़ों की बातें करके सबको हँसाने का सफल प्रयास करते रहते थे। जब कोई कहता कि इस प्रकार खाने की बातें करने से तो भूख की वेदना अधिक बढ़ जाती है, तो आप कहते, "अब जब भूखों मरना ही है तो कम से कम बढ़िया स्वादिष्ट चीज़ों का नाम लेते हुए ही मरें। इसमें भला क्या दोष है?"

मुझे उनका कहना ठीक लगा। भला हम अपने क्रान्तिकारी जीवन में स्वाधीनता की भूख में स्वाधीनता का नाम लेकर ही तो मरते रहे थे। उससे अपनी ही नहीं, सारे देश की जनता की स्वाधीनता की भूख भी अधिक बढ़ती थी। हमारे क्रान्तिकारी जीवन का, जीवन बलिदान का, तब इससे अधिक और क्या मूल्य था?

अदालत का नाटक

एक दिन अदालत द्वारा फैसला सुनाये जाने के पहले हम लोगों ने अपनी स्वयं की अदालत का नाटक किया जिसमें प्रत्येक अभियुक्त के भाग्य का फैसला सुनाया गया। सबसे पहले पं. रामप्रसाद बिस्मिल के भाग्य का फैसला सुनाया गया, और उनके 'गुनाहों' की एक लम्बी-चौड़ी फहरिस्त गिनायी गयी, जिसमें भारत देश को 'दयालु ब्रिटिश साम्राज्य' से छीनने की कोशिश करना मुख्य अपराध बतलाकर उन्हें एकदम 'मृत्युदण्ड' सुनाया गया।

फिर दूसरा नम्बर श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल का आया। उनके 'अपराधों' की भी एक काफी लम्बी सूची थी। उनके 'अपराध' और भी संगीन दृष्टि से देखे गये थे। इसका कारण यह था कि 'मा-बाप अंग्रेज़ सरकार' ने उन्हें इससे पूर्व भी बनारस षड़यंत्र केस में आजीवन कालेपानी की सज़ा दी थी, क्योंकि वे उन प्रसिद्ध 'पुराने और पागल' विप्लवी रासबिहारी बोस के हाहिने हाथ थे जिन्होंने लार्ड हार्डिंज पर बम फिंकवाया था, अतः उनको अण्डमान सरीखे 'स्वास्थ्यकर' टापू की सेलुलर जेल में रखकर अपना 'दिमाग़' सुधारने का मौका दिया गया था। वहाँ से लौटने के बाद जब उन्होंने एक सुन्दर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
युवती से शादी कर ली तो हमारी अच्छी सरकार धोखे में आ गयी कि शायद उनका (शचीनदा का) दिमाग़ कुछ 'सही' हो गया है। किन्तु अन्त में वह 'पागल' दिमाग़ के क्रान्तिकारी ही निकले और उन्होंने फिर से उत्तर भारत में 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन पार्टी' के नाम से एक 'खतरनाक' पार्टी का इतनी 'अच्छी सरकार' को उखाड़ फेंकने के लिए संगठन किया। उन्होंने 'दि रेवोल्युशनरी' (क्रान्तिकारी) नाम का पर्चा छपवाकर समग्र भारत में, यहाँ तक कि बर्मा और लंका में भी, एक ही दिन बटवाया तथा जनता के दिमाग़ को 'खराब' करने का 'दुष्कृत्य' किया। सबसे बड़ा अपराध उन्होंने यह किया कि '**बन्दी जीवन**' नाम की प्रसिद्ध पुस्तक लिखकर नौजवानों को गुमराह किया। हिन्दुस्तान रिपब्लिकन पार्टी के विधान को बनाने का काम भी आप ही का था, जिसके उद्देश्य में "**मनुष्य मनुष्य का शोषण न कर सके**" जैसी 'खतरनाक' बात लिखी थी।

अपराधों की यह सूची सुनाने के बाद उन्हीं से पूछा गया कि उन्हें भी फाँसी क्यों न दी जाये ? उस पर शचीनदा ने मुस्कराकर जवाब दिया, "जब आप 'मा-बाप सरकार' बने बैठे हैं तो जिसकी पत्नी सुन्दर और युवती हो उसको आप फाँसी कैसे दे सकते हैं ?" इस पर हमारी 'अदालत' ने पुनः विचार किया और शचीनदा को सिर्फ आजीवन कारावास का दण्ड सुनाया गया। इस प्रकार हर एक को उसके 'अपराध' सुनाकर तदनुसार उसे सज़ा सुना दी गयी थी।

रोशनसिंह बिगड़ उठे

ठाकुर रोशनसिंह के विरुद्ध कोई सरकारी गवाही एक प्रकार से गुजरी ही नहीं थी। इस प्रकार हम लोगों के विचार से उन्हें ज्यादा से ज्यादा पाँच वर्ष की सज़ा होनी चाहिये थी। अतः हमारी 'अदालत' ने ठाकुर साहब को पाँच ही साल की 'सज़ा' सुनायी। इस पर वे बहुत बिगड़े और अपनी 'सज़ा' को हँसी के रूप में न लेकर गुस्से में आ गये। बोले, "बदमाशो ! मैं तो कोदू बेचकर आया हूँ। और कम से कम सज़ा सुनाओ। तुम लोगों का बस चले तो इस अभागे को शायद छोड़ ही दो।"

मुझे याद है कि मैंने उनको और भी चिढ़ाने के ख्याल से कहा था, "ठाकुर साहब, हमारी अदालत के सामने बिगड़ने से काम नहीं चलेगा। आपकी तो 'बमरोली' (डकैती) में सिर्फ आवाज़ सुनी गयी थी। आपकी-सी आवाज़ तो और भी किसी की हो सकती है। हम आपको पाँच साल की सज़ा सुनाकर आप पर मेहरबानी कर रहे हैं। ज्यादा बोलेंगे, तो यह 'अदालत' आपको अदालत की मानहानि करने के आरोप में ज्यादा से ज्यादा और पन्द्रह-बीस दिन की सज़ा सुना सकती है। उससे ज्यादा कतई नहीं। अतः अपनी जगह चुपचाप बैठे रहिये, और इस अदालत को अपनी कार्रवाई करने दीजिये।"

इस पर सभी साथी एक साथ हँस पड़े, किन्तु ठाकुर साहब और भी भड़क उठे। कहने लगे, "ऐ कंजी आँख वाले ! (मेरी ओर इशारा करके) बहुत ज्यादा अपने आपको मत समझ ! बड़े आये हमको 'कुछ दिनों' की सज़ा देने वाले। बच्चू, बाहर होता तो हमारी

ऐसी तौहीन करने पर तुम्हें वह मज़ा चखाता कि ज़िन्दगी भर न भूलते ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं उन्हें और भी चिढ़ाने जा ही रहा था कि कर दा (गोविन्दचरण कर) व दुबलिशजी ने मुझे रोक दिया। किन्तु उनसे फिर भी कर दा ने यही कहा, "ठाकुर साहब! आप इन बच्चों पर बेकार बिगड़ता है। वैसे सही पूछो तो सबूत को देखते हुए आपको ज्यादा सज़ा, हम सब समझता है, नहीं ही मिलना चाहिये।" यह सुनकर ठाकुर साहब बड़े मायूस हो गये थे। खैर, उस रात वहाँ का हाल यह था कि जिस किसी साथी को औरों से कम सज़ा सुनाते तो वह अपना अपमान समझने लगता था। वैसे ठाकुर साहब को छोड़कर किसी ने कुछ कहा नहीं, किन्तु कम सज़ा सुनने वाले साथी दिल में उदास अवश्य हो गये। सबूत को देखते हुए हम लोगों के विचार से फाँसी की सज़ा यदि किसी को हो सकती थी तो वह पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' को, आजीवन कारावास शचीन्द्रनाथ सान्याल तथा राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को और शेष लोगों को पाँच-पाँच व दस-दस वर्ष की सज़ा। दरअसल सभी की राय में ठाकुर रोशनसिंह को पाँच साल से ज्यादा सज़ा नहीं होनी चाहिये थी। उस रात बारह-एक बजे तक यह नाटक चलता रहा और विनोद में हम लोग इसी प्रकार एक दूसरे के भाग्य का 'फैसला' करते रहे।

"आमी प्रस्तुत आछी"

मालूम नहीं, क्यों सोने से पहले मैं राजेन्द्र लाहिड़ी के बिस्तर में जाकर उनके साथ लेट गया और गंभीर होकर पूछा, "लाहिड़ी दा, सच-सच बताइये, आपको क्या महसूस हो रहा है? आपको कितनी सज़ा हो सकती है? वैसे ही आप दस वर्ष की सज़ा लेकर बंगाल से आये हैं।" उन्होंने बड़े ही शान्त स्वर में किन्तु मुस्कराकर बँगला में कहा, "तुमी ठीक बोलचो भाई, आजन्म कैद चेओ कम होबेई ना। सालारा फाँसी ओ दीते पारे। तारजन्य आमी प्रस्तुत आछी।" (तुम ठीक कहते हो भाई, आजीवन कारावास से कम होगा ही नहीं। वे साले फाँसी भी दे सकते हैं। उसके लिए तैयार हूँ।)

वे हृदयद्रावक क्षण

आखिर वह १९२७ की ६ अप्रैल का सूर्य निकला। हम लोग प्रातःकाल ही जल्दी-जल्दी स्नानादि प्रातःकालीन क्रियाओं से निवृत्त हुए। उस रोज सभी साथियों के चेहरों पर एक अजीब गंभीरता छायी थी। हर एक के हृदय में एक अजीब उथल-पुथल हो रही थी। जीवन-मरण के साथियों के बिछुड़ने का इतना गहरा दुःख होता है, यह मुझे उसी दिन अनुभव हुआ। पं. रामप्रसादजी कट्टर आर्यसमाजी थे। वे अपना भोजन अलग बनाकर खाया करते थे। उस दिन भी वे अपने पूजा-पाठ, हवन आदि से निवृत्त होकर भोजन करने बैठे ही थे कि पीछे-पीछे मैं पहुँच गया और हाथ जोड़कर डबडबाई हुई आँखों से उनसे प्रार्थना की, "पंडितजी, मालूम नहीं, आज इस बैरक से जाने के बाद हम लोग फिर दुबारा मिल पायें, न मिल पायें। मेरी एक छोटी-सी इच्छा है। यदि आप आज्ञा दें तो पूरी कर लूँ।" यह सुनकर पंडितजी भाव से अभिभूत हो उठे। पूछने लगे, "क्या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
चाहते हो भाई ?" मैंने कहा, "आज मैं अपने हाथ से आपको दो कौर खिलाना चाहता हूँ।" तत्काल अपने भोजन की थाली मेरे सामने करके बोले, "लो भाई, खिलाओ। मैं भी तुम्हें आज अपने हाथ से खिलाऊँगा।" हम दोनों एक दूसरे को खिला ही रहे थे कि यह खबर बिजली की भाँति सभी साथियों में फैल गयी।

फिर सभी साथी दौड़े-दौड़े आये और उन सबों ने पंडितजी को और आपस में एक दूसरे को खिलाना शुरू कर दिया। वह भोजन करना नहीं था, बल्कि एक प्रकार से एक दूसरे से आखिरी विदाई ली जा रही थी। हम लोगों के हाथ एक दूसरे के मुँह में कौर के साथ जाते थे और उधर आँखों से टप-टप करके आँसू गिरते जा रहे थे। एक अजीब हृदयद्रावक दृश्य था। कभी-कभी आज भी उस दृश्य की याद आती है तो दिल रो उठता है।

पुलिस की एक विशेष व्यवस्था में हम सभी साथी अदालत ले जाये गये। जज ने फैसला सुनाना शुरू किया। सबसे पहले अंग्रेज़ जज (हैमिल्टन) ने. पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' का नाम पुकारा और उन्हें धारा १२१-ए व १२०-बी के अन्तर्गत आजीवन कारावास तथा धारा ३९६ के अन्तर्गत मृत्युदण्ड सुनाया। दूसरे नम्बर पर उसने श्री राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को भी उन्हीं सब दफाओं में उतनी ही सज़ा सुनायी। किन्तु जैसे ही हैमिल्टन ने तीसरा नाम ठाकुर रोशनसिंह का पुकारा, तो हम सब आश्चर्यचकित और कुछ हतप्रभ-से हो गये।

"जजवा का बकर-बकर कर गवा ?"

उन्हें जज ने पहली दो दफाओं में पाँच-पाँच साल के कारावास का दण्ड (अंग्रेज़ी में ही) सुनाया। हम सब कुछ आश्वस्त होने जा ही रहे थे कि इसी बीच उसने दफ़ा ३९६ में फाँसी की सज़ा सुना दी। वह अप्रत्याशित सज़ा सुनकर हमारे दिलों पर मानो वज्रपात-सा हो गया। ठाकुर साहब, और फाँसी की सजा ! हममें से कोई भी अब इस मनःस्थिति में नहीं रहा कि जज इसके आगे क्या फैसला सुना रहा है, उसे ठीक से सुन सकें। ठाकुर साहब अंग्रेजी बिल्कुल नहीं जानते थे, इस कारण जज ने जो अंग्रेज़ी में 'फाइव इयर्स, फाइव इयर्स' कहा, वह उतना हिस्सा तो समझ गये; किन्तु बाद की अंग्रेज़ी उनकी समझ में नहीं आयी। दुबलिशजी उनके पास ही खड़े थे। उनसे रोशनसिंह ने पूछा, "जजवा यह बाद में का बकर-बकर कर गवा ?"

दुबलिशजी ने अपना दाहिना हाथ उनकी कमर में डालकर कहा, "ठाकुर साहब ! जज ने आपको फाँसी की सजा सुनायी है।" इतना सुनते ही ठाकुर साहब का चेहरा खिल उठा, ऐसे कि जैसे गुलाब का फूल ! तुरन्त पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' की ओर घूमकर बोले, "क्यों पंडित ! अकेले जाना चाहते थे ?" ठाकुर साहब का वह व्यवहार देखकर सब दंग रह गये।

सज़ा सुनाकर जज चला गया। पुलिस वालों ने फाँसी की सज़ा पाये तीनों साथियों को सबसे पहले ले जाने की जल्दी मचायी, किन्तु उन्हें हम लोगों ने ऐसा करने से यह कहकर रोका कि "हमें उनसे अंतिम बार मिल लेने दीजिये, अब तो इस जीवन में मिल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पाना मुश्किल है। यह सुनकर सिपाही रुक गये। सबसे पहले मैंने अपनी जेब से जेल से लाये हुए फूल निकाले और उन्हें पं. रामप्रसादजी, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी एवं ठाकुर रोशनसिंह के चरणों में रखकर प्रणाम किया। उन तीनों ने मुझको कसकर गले लगाया। गले लगाते वक्त पंडितजी ने कहा था, "खत्री भाई, तुम्हारे इस अटूट प्रेम भरे व्यवहार को फाँसी पर चढ़ते समय तक याद रखूँगा।" उसके बाद सब साथियों ने मेरे पास से बचे हुए फूल लेकर आपस में बाँट लिये और एक-एक कर सबने अपने बिछुड़ने वाले तीनों साथियों को प्रणाम करके उनके चरणों पर फूल चढ़ाये। चिरविदा के इन क्षणों में उम्र और पद-वरिष्ठता की सभी दीवारें ढह गयीं। छोटे-बड़े का विचार तिरोहित हो गया। शचीन दा, कर दा एवं सुरेश दा सरीखे ज्येष्ठ साथियों ने भी भावविभोर होकर उन तीनों महाविभूतियों के चरण छूए थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी दल की झाँसी शाखा

☐ क्रान्तिवीर सदाशिवराव मलकापुरकर

[क्रान्तिवीर मलकापुरकरजी झाँसी में अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के सबसे अधिक विश्वासपात्र क्रान्तिकारी साथी रहे हैं। आप लाहौर षड़यंत्र केस (१९२९) में फरार अभियुक्त घोषित किये गये थे, परन्तु उसी वर्ष सितम्बर में भुसावल बम केस में गिरफ्तार हुए और उसी केस में उन्हें १५ वर्ष के कालेपानी की सज़ा मिली। अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद की माताजी जगरानी देवी आपके ही साथ अपने अन्त समय में झाँसी में रहीं। आपने उनको उनकी इच्छा के अनुसार तीर्थयात्रा करायी और उनका अन्तिम संस्कार आपके ही हाथों झाँसी म हुआ। **'यश की धरोहर'** संस्मरण ग्रंथ में आज़ाद तथा उनकी माताजी सम्बन्धी आपके संस्मरण लेख बहुत ही मार्मिक एवं बहुप्रशंसित हुए हैं। — सं.]

सन् १९२१-२२ के असहयोग आन्दोलन के बन्द हो जाने के बाद से उत्तर भारत में क्रान्तिकारी फिर सक्रिय हुए और क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ सान्याल और अमर शहीद पंडित रामप्रसाद 'बिस्मिल' आदि के नेतृत्व में हिन्दुस्तान प्रजातंत्र संघ का संगठन हुआ। यह एक ऐसा क्रान्तिवृक्ष बना जिसकी शाखाएँ समस्त उत्तरी भारत में छा गयीं। उसकी एक शाखा झाँसी में स्थापित करने के लिए क्रान्तिवीर शचीन्द्रनाथ बख्शी को नियुक्त किया गया था। उन्होंने झाँसी के सुप्रसिद्ध कांग्रेसी देशभक्त मास्टर रुद्रनारायण सिंह की सहायता से वहाँ १९२४ में ही एक सुदृढ़ शाखा स्थापित कर दी और उसमें (अब स्वर्गीय) विश्वनाथ गंगाधर वैशम्पायन तथा भगवानदास माहौर जैसे क्रान्तिकारी सम्मिलित हुए जो बाद में सुविख्यात हुए।

सशस्त्र क्रान्ति प्रयास के इतिहास में काकोरी दल की अनेक विशेषताओं में एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी रही कि इसके एक प्रमुख अभियुक्त श्री चन्द्रशेखर आज़ाद को सरकार लाख उपाय करने पर भी कभी पकड़ नहीं सकी और फिर यह क्रान्तिवृक्ष, इसकी अनेक शाखाएँ काकोरी केस के परिणामतः कट जाने पर भी, आगे चन्द्रशेखर आज़ाद और भगतसिंह के प्रयास से हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ के रूप में विकसित हुआ। काकोरी केस से झाँसी की शाखा पर ज़रा भी आँच नहीं आयी थी और चन्द्रशेखर आज़ाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
झाँसी की शाखा के प्रबन्ध में सुरक्षित बने रहे और दल को संगठित और प्रशिक्षित करते रहे।

आज़ाद के गुप्त सहायक मास्टर रुद्रनारायणसिंह

झाँसी में आज़ाद के सुरक्षित रहते हुए क्रान्तिकारी कर्मण्यता के जीवन में सर्वाधिक योगदान (अब स्वर्गीय) मास्टर रुद्रनारायणसिंह का ही रहा। वे एक पक्के अहिंसावादी कांग्रेसी राष्ट्रीय कार्यकर्ता के रूप में विख्यात थे और असहयोग आन्दोलन में उन्होंने सज़ा काटी थी। परन्तु वह गुप्त रूप से क्रान्तिकारी दल से भी सम्बन्ध रखते थे और उसकी यथाशक्य सहायता करते रहते थे। वह बिस्मिलजी से मिल चुके थे और शचीन्द्रनाथ बख्शी और फिर चन्द्रशेखर आज़ाद ने उन्हीं के सक्रिय परन्तु गुप्त सहयोग से क्रान्तिकारी दल की शाखा झाँसी में गठित करने में पूरा-पूरा योगदान किया था।

मास्टर रुद्रनारायण ने ही काकोरी केस के फरार चन्द्रशेखर आज़ाद को ओरछा के निकट साधु के छद्म-वेष में छिपाकर रखा। इसके बाद झाँसी में एक मोटर ड्राइवर श्री रामानन्द के पास उनके घर पर ही एक मजदूर के रूप में रखा। उनके मित्र दतिया के (अब स्वर्गीय) ठाकुर दीवान नाहरसिंह तथा खनिया थाना नरेश (अब स्वर्गीय) श्रीमान खलकसिंहजू देव के यहाँ भी रखा और वहाँ हम झाँसी की शाखा वालों को बन्दूक आदि चलाने में आज़ाद ने प्रशिक्षित किया। सच तो यह है कि जिस सैनिक कुशलता का आज़ाद ने क्रान्तिकारी दल के नेता के रूप में आगे परिचय दिया, उसका विकास उनमें ओरछा, झाँसी, दतिया, बसई (खनिया थाना) आदि स्थानों में रहते हुए और वहाँ के ठाकुरों के साथ शिकार आदि में भाग लेते हुए हुआ था।

मास्टर साहब बहुगुणी थे। वह एक अच्छे चित्रकार और मूर्तिकार भी थे। उनका बनाया हुआ युद्ध करती हुई रानी लक्ष्मीबाई का चित्र बड़ा ही भव्य है और उनकी बनायी हुई झाँसी की विख्यात लक्ष्मी व्यायामशाला में युद्ध करती हुई रानी लक्ष्मीबाई की मूर्ति के दर्शन भी वे सभी अवश्य करते हैं जो स्वातंत्र्य संग्राम की इस बलिदानी वीरांगना की नगरी और किले तथा युद्धस्थल की तीर्थयात्रा करने देश-देशान्तरों से आते रहते हैं। हम क्रान्तिकारियों की दृष्टि से एक कुशल फोटोग्राफर के रूप में मास्टर साहब की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि आज़ाद का वह चित्र है जिसे ही हम आज जगह-जगह देखते हैं। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि इस फोटो-चित्र को निकालने के लिए मास्टर साहब को कई महीनों तक आज़ाद को समझाना-मनाना पड़ा था, तब कहीं वह अपना फोटो खिंचवाने के लिए तैयार हुए थे।

क्रान्तिकारी गोपनीयता में और पुलिस को भुलावे में रखने में मास्टर साहब इतने कुशल थे कि जब आज़ाद स्वयं उनके ही घर में सगे छोटे भाई बनकर छिपे होते थे तो बाहर मास्टर साहब खुफिया पुलिस के इन्सपेक्टर से गरमागरम बातें करते रहते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कहते कि—मिलने तो दो आज़ाद को, फौरन पकड़ा न दिया तो मेरा नाम नहीं; बोलो क्या इनाम दिलवाओगे ?

अपनी इस कुशलता से मास्टर साहब न काकोरी केस में पकड़े गये, न भगतसिंह वाले लाहौर षड़यंत्र केस में, न मेरे साथी भगवानदास माहौर और मुझ पर चले भुसावल बम केस में, और न विश्वनाथ वैशम्पायन आदि पर चले दिल्ली षड़यंत्र केस में, जबकि सारी झाँसी जानती थी कि भगवानदास माहौर, विश्वनाथ वैशम्पायन और मुझसे उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था ।

सैनिक कार्यों में भगवानदास माहौर के साथ

चन्द्रशेखर आज़ाद के सम्पर्क से हम तीनों हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र संघ की सैनिक टुकड़ी के प्रमुख सदस्यों में गिने जाने लगे थे । निशाना लगाने आदि में विशेष कुशलता प्राप्त कर लेने के कारण सैनिक कार्यों के लिए हम तीन में से भगवानदास को पहले चुन लिया जाता था । देश के वरिष्ठ नेता लाला लाजपत राय पर लाठीचार्ज होने और उसके परिणामतः थोड़े दिनों में ही उनकी मृत्यु हो जाने से देश का जो महान अपमान हुआ, उसके परिशोध रूप में जब दल ने लाहौर में दिनदहाड़े पुलिस दफ्तर के सामने ही ए. एस. पी. सौंण्डर्स को गोली से मार गिराया, तो उसके लिए कार्यस्थल पर आवश्यक सैनिक कार्य के लिए तैनात साथियों में साथी भगवानदास माहौर भी थे । इस पर भगतसिंह आदि पर चले लाहौर षड़यंत्र केस के नाम से सुविख्यात मुकदमे में भगवानदास माहौर को उनके दल के नाम 'कैलास' और 'कुठे गुन्तला' के नाम से और मुझे 'सखाराम' के नाम से फरार अभियुक्तों की सूची में रखा गया ।

सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी जोगेशचन्द्र चटर्जी को जेल से छुड़ाने के प्रयास में आज़ाद और भगतसिंह ने हम दोनों को भी शामिल किया था । इस केस में मुखबिर बने हंसराज बोहरा, जयगोपाल और फणीन्द्र घोष हम लोगों के पार्टी के नाम ही पुलिस वालों को बता पाये थे, हमारे असली नाम नहीं । भगवानदास माहौर का लाहौर में 'कुठे गुन्तला' नाम इसलिए पड़ गया था कि वह एक मराठी गाना अपने उस समय के सुमधुर कंठ से प्रायः गाते रहते थे, जिसकी ध्रुव पंक्ति थी : "सखये तो प्राण माझा, राजा कुठे गुन्तला !" भगतसिंह को यह गाना बहुत पसन्द था और उन्होंने बड़े आग्रह से यह गाना भगवानदास से हंसराज बोहरा को सुनवाया था और इसे जय-गोपाल ने भी सुना था ।

हमारी गिरफ्तारी

बाद में हम दोनों, भगवानदास और मैं, भुसावल रेलवे स्टेशन पर तब पकड़ लिये गये जब हमें चन्द्रशेखर आज़ाद ने ग्वालियर की बम फैक्टरी का सारा सामान लेकर महाराष्ट्र में, राजगुरु का पता लगाकर, उनके पास जा पहुँचने का आदेश दिया था । भुसावल रेलवे स्टेशन पर एक्साइज पुलिस वाले प्रायः यात्रियों की तलाशी अफीम-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गाँजे आदि के लिए किया करते थे। एसाइन कान्स्टेबिल ने हमारे गुली को इसी सिलसिले में रोका और हमारे सामान की तलाशी लेने लगा। मैंने और भगवानदास ने पहले तो कान्स्टेबिल को समझा-बुझाकर तलाशी टालने का प्रयास किया, परन्तु जब वह किसी तरह माना ही नहीं, तो भगवानदास ने अपनी जेब से पिस्तौल निकाल लिया और हवा में फायर किया जिससे वह और अन्य लोग जो इस बीच हमारे चारों ओर आ जमे थे, आतंकित होकर हट जायें। भगवानदास अपने पिस्तौल से फायर करते हुए आगे और उनके पीछे मैं उस सन्दूक को हाथ में लिये भागे जिसमें दो भरे बम, कुछ बम के खोल और एक माउज़र पिस्तौल और उसके ६० कारतूस बन्द थे। मगर जगह जानी-पहचानी नहीं थी। भगवानदास का पिस्तौल जाम हो गया और मेरा पैर सिग्नल के तारों में उलझ गया तो मैं गिर पड़ा। इस प्रकार हमें गाँजे-अफीम की तस्करी करने वाले समझकर हमारा पीछा करने वाली भीड़ के कारण हम दोनों पकड़ लिये गये, क्योंकि हम न तो भीड़ पर गोली चला सकते थे और न बम।

हमारी यह गिरफ्तारी ११ सितम्बर, १९२९ की शाम को हुई थी। यह निश्चित था कि कुछ ही दिनों में पुलिस को यह ज्ञात हो ही जायेगा कि हम दोनों आज़ाद के विशिष्ट साथियों में हैं और फिर आज़ाद के बारे में हमसे जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई भी कैसी भी यंत्रणा हमें देने से वह न चूकेगी। अतः हमने पकड़े जाने पर पहले से ही भख-हड़ताल की घोषणा कर दी। परन्तु वास्तव में हुआ यह कि लाहौर में १३ सितम्बर को अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास की अनशन में शहादत से देश में जो बिजली-सी दौड़ गयी थी, उससे पुलिस वालों का साहस हमें विशेष यंत्रणा देने का न हो सका।

हम दोनों को पहले तो भगतसिंह आदि पर चल रहे लाहौर षड़यंत्र केस में सम्मिलित करने के लिए पुलिस के कड़े पहरे में लाहौर ले जाया गया, परन्तु वहाँ सरकार ने यह निश्चय किया कि पहले हम पर भुसावल रेलवे स्टेशन पर घटी घटना के लिए जलगाँव की अदालत में ही मुकदमा चले। जलगाँव में मजिस्ट्रेट की अदालत में पुलिस ने लाहौर केस के दो अप्रूवरों फणीन्द्र घोष और जयगोपाल को भी सरकारी गवाह के रूप में प्रस्तुत किया। मजिस्ट्रेट ने हमें सेशन सुपुर्द कर दिया।

अदालत में अप्रूवरों पर गोली

सेशन अदालत में हमारे विरुद्ध गवाही देने के लिए ये अप्रूवर लाये जायेंगे, इस सुयोग का लाभ उठाने का हमने निश्चय किया। हमने अपने वकील झाँसी के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता श्री रघुनाथ विनायक धुलेकर के द्वारा चन्द्रशेखर आज़ाद को सन्देश भेजा कि परिस्थिति ऐसी है कि यदि हमें एक पिस्तौल पहुँचा दिया जाये तो हम खुली अदालत में दोनों अप्रूवरों पर गोली चला सकते हैं। चन्द्रशेखर आज़ाद ने पूरी परिस्थिति को और हमारी योजनाओं को भली-भाँति समझने के लिए (अमर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शहीद) भगवतीचरण को हमसे धुलिया जेल में एक वकील के छद्म रूप में मिलने के लिए भेजा। वह मेरे बड़े भाई शंकरराव मलकापुरकर को साथ में लेकर हम दोनों से जेल में मिले। उन्होंने सारी परिस्थिति और हमारी योजना समझ ली।

हम लोगों ने जलगाँव की छोटी जेल में रहते हुए वहाँ पर पहरे के लिए आने वाले पुलिस के सिपाहियों और हवलदारों के साथ, अपने सद्व्यवहार से और विशेषत: भगवानदास ने अपने मधुर गानों से, बड़े अच्छे सम्बन्ध बना लिये थे और हमें विश्वास हो गया था कि हम उनकी नज़रों से पिस्तौल को छिपाकर छोटी जेल में ले जा सकेंगे और उसे उनकी तलाशी से बचाकर सेशन कोर्ट में भी ले जा सकेंगे। ऐसा ही हुआ। २० फरवरी, १९३० की शाम को मेरे बड़े भाई शंकरराव खाने के साथ भगवानदास को भरा हुआ पिस्तौल दे गये। आज़ाद का यह आदेश था कि भगवानदास अच्छे निशानेबाज हैं अत: अप्रूवरों को कोर्ट में गोली मारने का काम उन्हें ही करने दिया जाये और यह प्रयत्न किया जाये कि इसमें पुलिस मुझे न फाँस सके। ऐसा ही किया गया। २१ फरवरी के दिन हम दोनों सेशन अदालत के कटघरे में थे और भरी पिस्तौल भगवानदास के कोट की जेब में थी।

पहले अप्रूवर जयगोपाल को गवाही देने के लिए लाया गया। आज़ाद का आदेश यह भी था कि यदि दोनों अप्रूवरों को मारा जा सके, तो दोनों को मारा जाये, लेकिन यदि एक को ही मारा जा सके तो फणीन्द्र को मारा जाये। इसलिए हमारी योजना यह बनी कि जयगोपाल की गवाही पूरी हो ले और फणीन्द्र को गवाही देने के लिए कोर्ट-रूम में लाया जाये तभी पहले फणीन्द्र पर वार किया जाये और लपककर जयगोपाल को भी मारने का प्रयास किया जाये; और फिर बन सके तो उस माउज़र पिस्तौल और ६० कारतूसों को उठा लिया जाये जो कोर्ट में एक मेज पर प्रदर्शित सबूत की चीज़ों में रखे हुए थे।

परन्तु जयगोपाल की गवाही चलती रहते ही लंच का समय हो गया और अदालत लंच के लिए उठ गयी। हमको कठघरे के बाहर हथकड़ी लगाकर ले आया गया। हमने हथकड़ी इस प्रकार लगवायी कि भगवानदास का दाहिना हाथ और मेरा बाँयाँ हाथ उसके एक-एक कड़े में थे। बाहर आकर हमने भी खाने के लिए कुछ मँगवाया जो मेरे बड़े भाई ने ला दिया और फिर खाने की सुविधा के लिए भगवानदास ने अपना दाहिना हाथ हथकड़ी से खुलवा लिया और हथकड़ी के दोनों कड़े मेरे बाँयें हाथ में पड़ गये। यह स्थिति इसके लिए अनुकूल थी कि अप्रूवरों को मारने के मामले में मुझे न फाँसा जा सके।

सामने एक तम्बू में दोनों अप्रूवर और लाहौर पुलिस के दो उच्च अधिकारी साथ बैठे हुए थे। तम्बू के दरवाज़े पर एक लम्बा-तड़ंगा पंजाबी पुलिस सब-इन्स्पेक्टर अपना रिवाल्वर लिये बैठा था और उससे कुछ फासले पर एक पंजाबी पुलिसमैन संगीन लगी राइफिल से सज्जित खड़ा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh.

कोर्ट के कमरे में, कम्पाउण्ड में, बाहर सड़क पर, आसपास के मकानों की छतों पर, जहाँ देखो वहीं अप्रूवरों को घृणा की दृष्टि से देखने वाले लोगों की भीड़ ही नज़र आ रही थी। हमें हमारी गारद के दस सिपाही घेरे खड़े थे। उनसे कहकर हमने अपने और अप्रूवरों के तम्बू के बीच के स्थान को दर्शकों से खाली करा लिया और ऐसी स्थिति हो गयी कि भगवानदास भागकर तम्बू तक पहुँच भी सकता था और चाहे तो वहीं से बैठे उन पर गोली चला सकता था।

मैंने देखा कि यही सबसे अच्छा मौका वार करने का है। दोनों अप्रूवर और दो उच्च पुलिस अधिकारी भी इस समय घात में आ सकते थे। अतः मैंने भगवानदास से अपनी बुन्देली बोली में यह कहा। सुनते ही वह तुरन्त कोट की जेब से पिस्तौल निकालकर तम्बू की ओर दौड़ा। पंजाबी सिपाही उसके हाथ में पिस्तौल देखकर पीछे हटा। तम्बू के द्वार पर बैठा लहीम-शहीम सब-इंसपेक्टर भगवानदास की ओर बढ़ा तो उसने उसके पैरों की ओर गोली चलायी जो उसके कूल्हे को चाटती निकल गयी। वह भी पीछे हटा। तम्बू में पहुँचकर बहुत पास से दोनों अप्रूवरों के सीनों पर एक-एक गोली भगवानदास ने बड़ी शीघ्रता से दाग़ी। वे कुर्सी पर से लुढ़क गये। परन्तु जैसे ही उसने पुलिस अफसर पर गोली दाग़ी तो दग़ी नहीं, पिस्तौल जाम हो गया। भगवानदास ने कोशिश की कि लपककर कोर्ट-रूम में मेज पर रखी माउज़र पिस्तौल और उसके ६० कारतूस उठा लें तो फिर कोई अच्छी-सी आड़ पकड़कर लड़ते हुए मरें।

फाँसी पर गाना या थ्री-नाट-थ्री की गोली खाना

बात यह थी कि एक बार हास-परिहास में भगतसिंह ने माहौर से कहा था कि "क्यों हनुमानजी! फाँसी के तख्ते पर भी गा सकोगे?" तो उसने भी उत्तर दिया था, "क्यों नहीं? अगर तुम जैसा कोई जामवन्त याद दिला दे।" और ऐसे ही एक बार उसके 'हृदय लागी प्रेम की बात ही निराली, मन्मथशर हो!' गाने पर उससे बिगड़कर आज़ाद ने कहा था, "अबे, क्यों अपना और साथियों का भी मन खराब करता है! हृदय में लगेगी थ्री-नाट-थ्री की गोली, मन्मथशर फन्मथशर नहीं।" तब से वह यही सोच रहा था कि या तो फाँसी के तख़्ते पर गाऊँगा या हृदय में पुलिस की थ्री-नाट-थ्री की गोली खाऊँगा।

कोर्ट-रूम की ओर लौटते हुए वही घायल तगड़ा इन्सपेक्टर माहौर के आगे फिर पड़ गया और जब अपना जाम हुआ पिस्तौल माहौर ने उसकी ओर ताना तो वह यह कहता हुआ कि "बाबू मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, मुझे क्यों मारते हो?" जो गिरा तो माहौर के ऊपर ही गिरा। उसके भारी शरीर का धक्का भगवानदास न सँभाल सका। वह भी गिर पड़ा और फिर तो सभी उसकी छाती पर चढ़ गये। एक पुलिस अफसर ने अब अपना पिस्तौल निकाला और उसकी छाती से अड़ाते हुए वह कुछ अनाप-शनाप बकने लगा तो माहौर ने बड़ी शान्त मुद्रा से मुस्कराते हुए कहा, "अब हुई आपको

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पिस्तौल निकालने की हिम्मत ! जाइये, खैर मनाइये कि बच गये । मेरे लिए तो क्या गोली, क्या फाँसी, अब सब बराबर है ।"

जनता में उत्तेजना और उत्साह, पुलिसमैनों की हमदर्दी

एकत्र जनता इस बीच में उत्तेजित होकर "अप्रूवरों को मारने वाले की जय !" के नारे लगा रही थी। लेकिन अप्रूवर मरे नहीं थे, घायल ही हुए थे। पुलिस अफसर ने अपना पिस्तौल हटा लिया और भगवानदास के हाथों में पीठ के पीछे हथकड़ियाँ डाल दी गयीं। इस घटना की जो सबसे प्रिय और उत्साहवर्धक स्मृति हमारे मन में है वह यही है कि हमारी गारद के सिपाहियों ने अपने ऊपर इस प्रकार संकट आने पर भी भगवानदास से कोई अपशब्द नहीं कहे, बड़े आदर और सद्भावना का ही व्यवहार किया। एक ने तो कहा, "बाबू, आपने बड़ी बहादुरी का काम किया है, आप दिल छोटा न कीजिये; हमारा क्या होना-जाना है, बहुत हुआ तो नौकरी जायेगी। मेहनत-मजदूरी कर लेंगे। दो-चार महीने की सज़ा भी हुई तो उसे भी तुम्हें याद करके खुशी से काट लेंगे।" जब गोरा पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट हमें उनके पास से ले चला तो एक मुसलमान नौजवान सिपाही ने कहा, "बहादुर ! ऐसी ही साबित-क़दमी से फ़ाँसी पर चढ़ जाना ! खुदा हाफ़िज़ !"

जैसी हमारी योजना थी, अप्रूवरों पर गोली चलाने के केस में मुझे नहीं फाँसा जा सका। यह केस केवल भगवानदास पर ही चला और उसे इसमें आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई। मुझे तो पहले केस में ही पन्द्रह वर्ष कालेपानी की सज़ा हो चुकी थी।

१९३८ में बम्बई की कांग्रेसी सरकार ने हम दोनों को छोड़ दिया। १९४० में हम फिर भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत नज़रबन्द करके देवली नज़रबन्दी कैम्प आदि में रखे गये और द्वितीय विश्व युद्ध के अन्त में ही छोडे गये।

काकोरी के शहीदों की याद से मनोबल

काकोरी केस और लाहौर केस के अपने शहीद साथियों की याद हमें जेल जीवन की कठिनाइयों का मुक़ाबला करन का हौसला और सभी कष्टों को सहने की शक्ति भी देती रही। हमें विश्वास है कि शहीदों की ये पावन स्मृतियाँ आम जनता को भी उनके लक्ष्य 'समाजवाद की स्थापना के हेतु त्याग और बलिदान' करने की प्रेरणा का अजस्र स्रोत बनी रहेंगी।

भगवानदास ने स्वराज्य प्राप्त हो जाने पर अपनी कालेज की पढ़ाई पूरी करके और डिग्रियाँ प्राप्त करके शिक्षक की वृत्ति अपनायी। शोध-प्रबन्ध लिखकर डाक्टरेट ली और बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. लिट्. की मानद उपाधि से भी विभूषित किया है। दल की झाँसी शाखा के हमारे और साथी विश्वनाथ वैशम्पायन तो अब दिवंगत हो चुके हैं, परन्तु हम दोनों रिटायर्ड शिक्षक जीवन व्यतीत कर रहे

हैं और कभी मिल बैठते हैं तो पुरानी स्मृतियों में खो जाते हैं और मेरा भी दिल भर आता है, जब भगवानदास को भरे गले से गाते सुनता हूँ :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं दार का तालिब था तकदीर में जिन्दाँ था
कैसे मुझे मिल जाता जो हक्के शहीदाँ था ।

यह मर्तबा बलन्द मिला जिसको मिल गया
हर मुद्दई के वास्ते दारो-रसन नहीं ।

यह केवल भगवानदास और मेरे ही दिल की बात नहीं है, शहीदों के उन सभी साथियों के मन की बात है, जिन्हें यह बलन्द मर्तबा नहीं मिला। परन्तु यह विश्वास, कि शहीदों के सपनों की समाजवादी आज़ादी भारत की जनता को मिलकर ही रहेगी, हमारे मनोबल को कभी क्षीण नहीं होने देता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्तिकारी और साहित्य

☐ श्रीमती यमुना माहौर
एम.ए., एल.टी.

[डा. भगवानदास माहौर की धर्मपत्नी यमुनाजी प्रायः क्रान्तिकारी आन्दोलन, विशेषतः उसमें स्त्रियों के योगदान के सम्बन्ध में लिखती रहती हैं। -- सं.]

अंग्रेज़ी में एक कहावत है : 'The pen is mightier than the sword' अर्थात लेखनी तलवार से अधिक शक्तिशालिनी होती है। इसमें जो सत्य निहित है उसको सभी मनीषी स्वीकार करते आये हैं और भारतीय क्रान्तिकारियों ने भी इस सत्य को भली-भाँति हृदयंगम किया था। यों तो रण में वीरों का यशोगान करके उनकी वीरता को उभारने वाले गीत और काव्य सुनाने वाले चारणों की यशस्वी परम्परा भारत में रही है परन्तु वह सामन्तवादी मनोवृत्ति से अभिभूत रही है। हमारे १८५७ के सिपाहियों के स्वातंत्र्य युद्ध के काल से हमारी वीरता की धारा में स्वतंत्र जनवादी राष्ट्रवाद के सर्व-प्रथम दर्शन हुए थे। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी डा. भगवानदास माहौर ने अपने ग्रन्थ '**१८५७ के स्वाधीनता संग्राम का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव**' में सन् सत्तावन के स्वातंत्र्य सैनिकों का जो झण्डा गीत या प्रयाण गीत प्रस्तुत किया है उसे यहाँ उद्धृत करके उसकी व्याख्या प्रस्तुत करना उपयुक्त होगा।

"ऐसी मान्यता है कि इस शहीद राष्ट्रगीत की रचना १८५७ के क्रान्तिवीर अजीमुल्ला ने की थी।

१८५७ के क्रान्तिकारी सिपाहियों का झण्डा गीत

हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा।
पाक वतन है क़ौम का, जन्नत से भी प्यारा।।
ये है हमारी मिल्कियत, हिन्दुस्तान हमारा।
इसकी रूहानियत से रोशन है जग सारा।।
कितना कदीम, कितना नईम, सब दुनियाँ से न्यारा।
करती है जरखेज़ जिसे गंगो-जमुन की धारा।।
ऊपर बर्फीला पर्वत पहरेदार हमारा।
नीचे साहिल पर बजता सागर का नक्कारा।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इसकी खानें उगल रहीं हैं सोना हीरा पारा।
इसकी शानो-शौकत का दुनियाँ में जयकारा ।।
आया फिरंगी दूर से ऐसा मंतर मारा।
लूटा दोनों हाथ से प्यारा वतन हमारा।।
आज शहीदों ने है तुमको अहले वतन ललकारा।
तोड़ो ग़ुलामी को ज़ंजीरें बरसाओ अंगारा।।
हिन्दु मुसलमाँ सिख हमारा, भाई-भाई प्यारा।
यह है आज़ादी का झण्डा इसे सलाम हमारा।।

"१८५७ के क्रान्तिकारी सिपाहियों का यह झण्डा गीत हमारे राष्ट्रीय गीतों की माला का सुमेरु होने का अधिकारी है। यह सीधा, सरल, साफ और अमित शक्ति से भरा है। श्रद्धेय बंकिम बाबू के '**आनन्दमठ**' के 'सप्तकोटि कण्ठ कल-कल निनाद कराले' वाले '**वन्देमातरम्**' स्तुति गीत से भी यह अधिक शक्तिशाली है और अल्लामा इक़बाल के 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा' गीत से भी कहीं ज्यादा पुरज़ोर है। इसमें केवल देश की स्तुति ही नहीं है, स्वातंत्र्य संघर्ष के लिए तुरन्त आह्वान भी है, ललकार भी है। इसमें घोषित किया गया है कि समस्त भारतवासियों की एक क़ौम है, एक राष्ट्र है, हिन्दुस्तान जिसका पाक वतन (पवित्र जन्मभूमि) है; इसमें रहने वाले हिन्दू, मुसलमान, सिख आदि सब भाई-भाई हैं; यह जन्मभूमि 'स्वर्गादपि गरीयसी' है, यह ऊपर हिमाचल नाम नगाधिराज से नीचे आसमुद्र विस्तीर्ण है, अनन्त रत्नप्रभवा है, धनधान्य-सम्पन्ना है। इसे फिरंगी ने दूर से आकर मंतर मारकर—हमें शौर्य और वीरता में पराजित करके नहीं—दोनों हाथ से लूटा है। यह बात विशेष ध्यान देने की है कि यहाँ 'मंतर' का अर्थ जादू-टोना नहीं है, राजनीतिक 'मंत्र' यानी युक्ति या चाल है।

"ग़ुलामी की ज़ंजीरों को तोड़ने के लिए जो झण्डा सिपाहियों ने उठाया है वह क़ौम की आज़ादी का झण्डा है, किसी सामन्त या सम्राट का निजी झण्डा नहीं। इस गीत की भावना में जनवाद है, राष्ट्रवाद है, सामन्तवाद नहीं। इसमें शत्रुता और आक्रोश विदेशी लुटेरे, आततायी फिरंगी के प्रति है, क़ौम नसारा या ईसाई के प्रति नहीं। यदि १८५७ के ये क्रान्तिकारी सिपाही किसी साम्प्रदायिक विद्वेष या ईसाई विरोध की भावना से परिचालित होते तो उनके इस गीत की एक तुक में किसी बुरे विशेषण के साथ 'नसारा' भी होना बहुत स्वाभाविक होता।

"इस गीत की यह भी एक विशेषता है कि इसमें १८५७ के भी पहले अंग्रेज़ों के विरुद्ध हुए स्वातंत्र्य संघर्षों में मारे गये वीरों को 'शहीद' शब्द से याद किया गया है। संभवतः इस गीत में ही सबसे पहले राजनीतिक स्वातंत्र्य संघर्ष में प्राण होमने वालों को शहीद कहा गया है, इसके पूर्व यह शब्द केवल धर्मयुद्धों या जिहाद में मारे गये लोगों के लिए ही प्रयुक्त होता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

''१८५७ के सिपाहियों का यह गीत तत्कालीन क्रान्तिकारी अख़बार **'पयामे-आज़ादी'** में छपा था जिसकी एक प्रति ब्रिटिश म्यूजियम में सुरक्षित रखी गयी है। परन्तु हिन्दुस्तान में इसकी सभी प्रतियाँ ढूँढ़-ढूँढ़कर न केवल नष्ट कर दी गयी थीं, बल्कि जिसके पास इसकी कोई प्रति मिलती थी तो यदि वह हिन्दू हुआ तो उसके मुँह में गो-मांस ठूँसकर और यदि मुसलमान हुआ तो उसके मुँह में सुअर का गोश्त ठूँसकर, बिना किसी प्रकार का मुकदमा चलाये, या तो उसे फाँसी दे दी जाती थी या गोली मार दी जाती थी। विदेशी सरकार इस गीत की भनक भी किसी भारतीय के कानों में पड़ने नहीं देना चाहती थी, क्योंकि इस गीत में उन सभी आक्षेपों का करारा जवाब है जो हमारे १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम पर, उसे धर्मान्ध सिपाहियों का निरा ग़दर या सामन्ती प्रतिक्रियावादियों का एक प्रतिक्रान्ति का प्रयास प्रतिपादित करने वाले करते रहे हैं।

''उन आक्षेपों और उनके समर्थन में प्रस्तुत तर्कों को आज कोई महत्व नहीं देता, अतः उनकी बात करना अब व्यर्थ है। यदि और कुछ भी न हुआ होता, बस केवल इतना ही हुआ होता कि कुछ मुट्ठी भर लोग ही सर से कफन बाँधकर हार-जीत और जीवन-मरण की चिन्ता ज़रा भी किये बिना राष्ट्रीय झण्डा उठाकर, इस गीत को गाते हुए विदेशी आततायियों से लड़ मरते, तो भी उनकी वह लड़ाई राष्ट्रीय होती, समस्त राष्ट्र के हित के लिए होती और वे होते हमारे राष्ट्रीय शहीद जिनका यश राष्ट्रीय काव्यों में गाया जाना सदैव राष्ट्र का मनोबल बढ़ाता। जिन भेजे वालों को यह गीत १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम के वास्तविक नेता भारत की ग़रीब किसान और कारीगर जनता से आये सिपाहियों और उनके नेताओं के उच्च राष्ट्रीय आदर्श को हृदयंगम नहीं करा सकता उनसे सहृदयों को मगज मारना व्यर्थ है।

''इस राष्ट्रीय गीत को गाते हुए जितना भारतीय रक्त बहा है, स्वातंत्र्य संग्राम में मारे गये शहीद सैनिकों के जितने रक्त से यह गीत अभिषिक्त है, संभवतः उतना कोई अन्य गीत नहीं। यह केवल हमारे शहीदों का ही गीत नहीं है, विदेशी आततायी सरकार के अत्याचार से यह गीत स्वयं शहीद हुआ है, जिसकी स्मृति हम स्वाधीनता प्राप्त करने पर ही कर सके। जब्त किये जाने वाले राष्ट्रीय गीतों में यह सर्वप्रथम और ऐसे गीतों की माला का सुमेरु है। अन्य ज़ब्त किये गये गीतों को तो फिर भी गाते और गुनगुनाते रहे, एक यही गीत है जो आततायी सरकार के अत्याचार से पूर्णतया लुप्त हो गया था। हम कह सकते हैं कि अन्य गीतों को यदि सरकारी ज़ब्ती का कुछ काल तक के लिए कारावास मात्र मिला था, जिससे वे कालान्तर में मुक्त भी हुए, परन्तु इस गीत को तो, कहना चाहिये, उनके द्वारा फाँसी ही दे दी गयी थी।

''अपने स्वातंत्र्य संघर्ष की निरन्तर चलती रहने वाली धारा को ध्यान में रखते हुए और आज की स्थिति में उसके समाजवादी मोड़ और गति को ध्यान में रखते हुए अपने १८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य संग्राम के इस गीत को धुन में गाते हुए हम आगे बढ़ सकते हैं :

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

भारत में साम्राज्यवाद का होगा नहीं गुजारा,
पूँजीवादी लूट ठगी का, होगा नहीं पसारा।
आज शहीदों ने है हमको अहले वतन ललकारा,
उनके सपने पूरे करना है अब काम हमारा।।
"हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, सब भाई" है नारा,
स्वतंत्रता, समता, सुबन्धुता से महके जग सारा।
महके जग में बराबरी, आज़ादी, भाईचारा,
हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा।
पाक वतन है क़ौम का, जन्नत से भी प्यारा।।"

--- भगवानदास माहौर

१८५७ के बाद से गुप्त क्रान्ति प्रयास में स्वयं सक्रिय क्रान्तिकारी भी, और अन्य सहानुभूति रखने वाले प्रतिष्ठित साहित्यकार भी, क्रान्तिकारी साहित्य का निरन्तर सृजन करते रहे। राजद्रोही साहित्य के सम्बन्ध में भारतीय दण्ड विधान की धारा १२४-ए के प्रहार से बचने के लिए औपचारिक राजभक्ति की ऊपरी बातें करते हुए, तथा अन्य प्रकार की अनेक साहित्यिक तरकीबों का प्रयोग करते हुए भी वे क्रान्तिकारी प्रभावपूर्ण साहित्य का निर्माण करते ही रहे। राजभक्ति की ऊपरी आड़ रहते हुए भी उनकी कृतियाँ सरकार द्वारा ज़ब्त होती रहीं और वे भी दण्डित होते रहे।

बंगाल में 'आनन्दमठ' और 'वन्देमातरम्'

बंकिम बाबू का संन्यासी विद्रोह पर लिखा गया प्रसिद्ध उपन्यास **'आनन्दमठ'** इसी क्रान्ति की चेतना को प्रदीप्त रखने के उद्देश्य से ही लिखा गया था और क्रान्तिकारी दल में नये भर्ती किये गये सदस्यों को क्रान्तिकारी शिक्षणार्थ दी जाने वाली वह प्रथम पाठ्य पुस्तक होती थी। उसका **'वन्देमातरम्'** गीत तो क्रान्तिकारियों का राष्ट्रीय क्रान्तिकारी गीत ही बन गया था। अनेक क्रान्तिकारी शहीद 'वन्देमातरम्' गाते हुए फाँसी पर चढ़े। तब से बंगाल में क्रान्तिकारी लेखकों की यशस्वी परम्परा क्रान्तिकारियों की परम्परा के साथ निरन्तर चलती रही। इस संक्षिप्त लेख में उनकी सभी कृतियों का उल्लेख हो सकने का अवकाश नहीं है।

हिन्दी का भारतेन्दु युगीय साहित्य

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के साहित्य में, विशेषतः उनके रूपक **'भारत-दुर्दशा'** में, तथा उनके मण्डल के अन्य साहित्यकारों के साहित्य में भी भारत के उद्धार के लिए "कठिन धार करवार कर, कृष्ण कल्कि अवतार" की पुकार—अर्थात् सशस्त्र क्रान्ति की पुकार—भली भाँति व्यंजित हुई। उसकी इस क्रान्तिकारी प्रेरणा से प्रेरित होकर अमर शहीद भगतसिंह आदि 'भारत-दुर्दशा' रूपक अभिनीत किये जाने का आयोजन करते थे और उसमें स्वयं भी अभिनय करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराष्ट्र के क्रान्तिकारी साहित्यकार

महाराष्ट्र में मराठी में भी प्रचुर क्रान्तिकारी साहित्य का निर्माण हुआ और उसके रचयिताओं को राजद्रोह के अपराध में या अन्य भाँति भी दण्डित किया जाता रहा। इस सम्बन्ध में स्मरणीय है कि प्रसिद्ध क्रान्तिवीर स्वर्गीय विनायक दामोदर सावरकर ने १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम पर जो महान क्रान्तिकारी ग्रन्थ लिखा था उससे ब्रिटिश सरकार इतनी आतंकित हुई थी कि उस ग्रन्थ के प्रकाशित होने के पूर्व ही उसने उसे ज़ब्त घोषित कर दिया था। परन्तु उसकी प्रतियाँ चोरी-छिपे भारत में आती ही रहीं और वह ग्रन्थ भी क्रान्तिकारियों की बौद्धिक शिक्षा का एक पाठ्य ग्रन्थ बना। उल्लेखनीय है, यह इतिहास ग्रन्थ होते हुए भी इसमें एक महान वीर काव्य के समान भावोद्रेक करने की शक्ति है। स्वर्गीय विनायक दामोदर सावरकर के बड़े भाई स्वर्गीय गणेश दामोदर सावरकर को भी कुछ क्रान्तिकारी कविताओं के लिखने और प्रकाशित करने के लिए आजीवन कालेपानी का दण्ड मिला था। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि मराठी साहित्य में तो फिर एक सावरकर युग ही आलोचकों ने स्वीकार किया। सावरकर बन्धुओं में सबसे छोटे नारायण दामोदर सावरकर भी एक यशस्वी लेखक हुए।

क्रान्तिकारी साहित्य के सम्बन्ध में यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि अंग्रेज़ों के आधिपत्य के विरुद्ध सशस्त्र संग्राम की अभीष्टता को व्यंजित करने के लिए उन स्वातंत्र्य युद्धों का सहारा लिया गया था जो पहले पठान या मुग़लों के देश पर आधिपत्य के विरुद्ध राजपूतों, मराठों या सिखों ने किये थे। लोकमान्य तिलक ने शिवाजी द्वारा अफ़ज़लखाँ का छल से वध किये जाने के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा था उसे जज स्ट्रेची ने अंग्रेज़ सरकार के विरुद्ध विद्रोह की भावना भड़काने वाला प्रतिपादित किया था और उन्हें राजद्रोह के अपराध में दण्डित किया था। आगे अमर शहीद खुदीराम बोस की शहादत पर लिखे गये लेख के लिए तो उन्हें ६ वर्ष के कारावास का दण्ड दिया गया था।

ग़दर पार्टी के तत्वावधान में सुप्रसिद्ध विद्वान लाला हरदयाल के सम्पादन में अमरीका से **'ग़दर'** पत्र का प्रकाशन भी किया जाता था जिसकी प्रतियाँ चोरी-छिपी रीति से भारत में भी भेजी जाती थीं। उसके तत्वावधान में भी प्रचुर मात्रा में क्रान्तिकारी साहित्य का निर्माण हुआ था। उसके गीतों का संकलन **'ग़दर की गूंज'** नाम से प्रकाशित हुआ था जिसमें अंग्रेज़ों के विरुद्ध सशस्त्र क्रान्तियुद्ध का खुला आह्वान था।

सक्रिय क्रान्तिकारियों में उच्च श्रेणी के साहित्यकार भी बहुत हुए हैं जिनका हाथ क्रान्तिकारी पिस्तौल और क्रान्तिकारी लेखनी दोनों का ही प्रयोग बड़ी कुशलता, वीरता और शहादत की भावना से करता था। इस सम्बन्ध में ध्यान रखने की बात है कि जो क्रान्तिकारी अपनी पिस्तौल का प्रभावपूर्ण उपयोग कर जाते थे वे अल्पायु में फाँसी पर शहीद हो जाते थे और फिर उनकी लेखनी का जौहर देशवासियों को देखने को नहीं मिल पाता था। अमर शहीद करतारसिंह सरावा, सरदार भगतसिंह आदि ऐसे ही शहीद हुए हैं जिनके भीतर के महान क्रान्तिकारी साहित्यकार को विकसित होने का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अवसर ही नहीं मिला। 'चाँद' के फाँसी अंक में सरदार भगतसिंह के द्वारा छद्म नामों से लिखे गये लेख और उनके द्वारा अंग्रेज़ी में अनूदित अनेक पुस्तकें इसका प्रमाण हैं।

जो क्रान्तिकारी किसी प्रकार फाँसी से बच गये उनमें से अनेक बड़े ही सशक्त और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में भी ख्याति प्राप्त करने वाले साहित्यकार हुए हैं। उनमें काकोरी क्रान्तिकारी केस के श्री मन्मथनाथ गुप्त और उसी दल के आगे के विकास के लाहौर षड़यंत्र केस से सम्बन्धित क्रान्तिकारी स्वर्गीय यशपालजी और श्री विजयकुमार सिनहा और श्री शिव वर्मा अग्रगण्य हैं। अपने उच्च कोटि के साहित्य के लिए, जो सारा राजनीतिक और सामाजिक क्रान्ति के भाववल से ओतप्रोत है, यशपालजी को आगरा विश्वविद्यालय ने डी. लिट. की मानद उपाधि से और अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपनी सर्वोच्च मानद उपाधि 'साहित्य वाचस्पति' से विभूषित किया था। इसी प्रकार लाहौर षड़यंत्र केस और भुसावल बम केस में आजीवन कालेपानी की सज़ा पाने वाले श्री भगवानदास माहौर ने भी क्रान्तिकारी साहित्य प्रणीत किया और उस पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'साहित्य महोपाध्याय' तथा आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधियाँ प्राप्त कीं तथा बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय (झाँसी) ने भी उन्हें डी. लिट. की मानद उपाधि से विभूषित किया है। लाहौर षड़यंत्र केस और दिल्ली षड़यंत्र केस से सम्बन्धित स्वर्गीय क्रान्तिकारी विश्वनाथ वैशम्पायन भी एक प्रतिष्ठित साहित्यकार हुए हैं।

काकोरी केस के अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल', और अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ अच्छे लेखक और कवि थ। बिस्मिलजी ने फाँसी की कोठरी में जो आत्मकथा लिखी थी उसके अन्त में उन्होंन उन गीतों को भी उद्धृत किया जिनसे अपने जीवन में वह बहुत प्रभावित हुए थे। काकोरी के अमर शहीदों में प्रायः सभी ने फाँसी की कोठरी से लिखे गये अपने अन्तिम पत्रों में भी कुछ काव्य पक्तियाँ अवश्य लिखी हैं। इससे यह भली भाँति प्रकट है कि क्रान्तिकारी जीवन में साहित्य का कितना महत्त्व उनके मन में शहीद होने के क्षण तक रहा।

विश्वास है कि इन अमर शहीदों की साहित्यिक कृतियों का उल्लेख इस 'स्मृति ग्रंथ' में प्रकाशित लेखों में होगा ही, अतः पुनरुक्ति न होने देने के लिए उनके सम्बन्ध में इस संक्षिप्त लेख में और कुछ नहीं लिखा जा रहा है। काकोरी केस के अनेक क्रान्ति-वीर बाद में क्रान्तिकारी साहित्यवीर भी सिद्ध हुए। इनमें स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल, सुरेश भट्टाचार्य और रामदुलारे त्रिवेदी के नाम भी विशेष रूप में उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी के क्रान्तिकारी साहित्यकारों के सम्बन्ध में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके मथुरा के श्रीकृष्ण 'भूषण' ने आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की है। भारत की सभी भाषाओं में क्रान्तिकारी साहित्य प्रचुर मात्रा में निर्मित हुआ है, परन्तु संघर्ष में जी-जान से जुटे सक्रिय क्रान्तिकारियों द्वारा निर्मित साहित्य पर एक विस्तृत और वृहद शोध प्रबन्ध लिखे जाने का काम अभी भी किये जाने को पड़ा है। आशा है अधिकारी क्रान्तिकारी साहित्यकार इस कार्य को भी शीघ्र पूरा करेंगे। ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नेताजी काकोरी के शहीदों की गाथा सुनाते थे

☐ ठाकुर रामसिंह
भूतपूर्व कप्तान, आज़ाद हिन्द फ़ौज

जो लोग आज़ाद हिन्द फ़ौज में सबसे पहले भर्ती हुए उनमें मैं भी एक था। सन् १८५७ की जंगे आज़ादी से लेकर सन् १९३९-४० में, दूसरी दुनियाई जंग तक भारत की स्वाधीनता की लड़ाई में जो शहीद हुए हैं उनकी पवित्र जीवन गाथाएँ सुना-सुनाकर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जापानियों द्वारा गिरफ्तार किये गये अंग्रेज़ी सेना के हम भारतीय क़ैदी सिपाहियों में देशभक्ति और देश की जंगे आज़ादी में मर मिटने के भाव उभारते थे। उनमें काकोरी काण्ड के अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफ़ाक़उल्ला खाँ, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी और रोशनसिंह के बलिदान की पावन गाथाएँ भी वह सुनाते थे। अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला खाँ की शहादत हमारे मुसलमान भाइयों के दिलों में देश-भक्ति की भावना और हिन्दू-मुस्लिम भाई-चारे की भावना बड़े दृढ़ रूप में भरती थी। यों तो १८५७ से लेकर जंगे आज़ादी में बहुत-से मुसलमान शहीद हुए हैं, लेकिन अंग्रेज़ों द्वारा उभारे गये हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यों और झगड़ों के जिस माहौल में अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ने अपनी कुर्बानी से एकता और भाईचारे की भावना को हम लोगों में जीता-जागता रखा उसका अपना अलग ही और विशेष महत्त्व है।

मेरा जन्म १५ अगस्त, १९१४ में हिमाचल प्रदेश के काँगड़ा ज़िले के धर्मशाला ग्राम में हुआ और १४ वर्ष की आयु में ही मैं २/१ गोरखा रेजिमेण्ट में भर्ती हो गया था। मुझे सिपाही बनने की और संगीत की बड़ी लगन थी, अतः मैं फ़ौज के बैण्ड में ले लिया गया। मेरे गानों और वायलिन-वादन से सभी सिपाही और अफ़सर भी बहुत उत्साहित और प्रसन्न होते थे।

दूसरी दुनियाई जंग में हमारी रेजिमेण्ट को भी मलेशिया के मोर्चे पर भेजा गया। जापानियों की फ़ौज और उसकी जंगी तैयारी अंग्रेज़ी फ़ौज से अधिक ताकतवर साबित हुई और सिंगापुर में अंग्रेज़ी फ़ौजों को जापानियों के सामने आत्मसमर्पण करना पड़ा। इस प्रकार जापानियों के हाथ में हम भारतीय सिपाही युद्धबन्दी के रूप में पड़ गये जो बाद में आज़ाद हिन्द फ़ौज में भरती हुए। हम और हमारे बुज़ुर्ग अंग्रेज़ों की फ़ौज में भर्ती होते रहे थे और हमने कभी यह सोचा भी न था कि हम कभी शक्तिशाली अंग्रेज़ सरकार की हुकूमत के खिलाफ़ टक्कर ले सकते हैं और अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से भारत को आज़ाद करा सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

रामायण और महाभारत की गाथाओं से, गीता के उपदेश ने और हमसे बढ़कर तो अंग्रेज़ों के विरुद्ध चली आ रही हमारी आज़ादी की तहरीक में हुए शहीदों के जीवन पर नेताजी की पुरज़ोर तकरीरों ने, हम सभी के मन से अंग्रेज़ सरकार का आतंक मिटा दिया और हम भारत की आज़ादी के लिए खुशी-खुशी जान देने को तैयार हो गये। जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूँ, हमारे भीतर बलिदान की भावना भरने में क्रान्तिकारी शहीदों की शहादत ने बहुत प्रेरणा दी।

आज़ाद हिन्द फ़ौज के सैनिक बैण्ड के संगठन का कार्य नेताजी ने मुझे सौंपा, और जो बैण्ड मैंने संगठित किया उससे वह भी बहुत प्रसन्न और उत्साहित हुए। अंग्रेज़ों की फ़ौज में मैं हवलदार मेजर था। आज़ाद हिन्द फ़ौज में तरक्की करते-करते मैं कैप्टेन हुआ। मुझे इस बात का विनीत गर्व है कि आज़ाद हिन्द फ़ौज के गानों और उनकी धुनों में अनेक गानों के शब्द भी मैंने सँजोये थे और स्वर तो प्रायः सभी के मैंने ही दिये थे। इस गाने में जिसे गाते हुए हम आज़ाद हिन्द फ़ौज के सिपाही मार्च करते थे, देश की आज़ादी के लिए खुशी-खुशी मर मिटने का हमारा उत्साह भली भाँति प्रकट हुआ है :

कदम-कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गाए जा,
ये ज़िन्दगी है क़ौम की, तू क़ौम पै लुटाए जा।
तू शेरे हिन्द आगे बढ़, मरने से भी तू न डर
उड़ा के दुश्मनों का सर, जोशे वतन बढ़ाए जा।
तेरी हिम्मत बढ़ती रहे, ख़ुदा तेरी सुनता रहे
जो सामने तेरे अड़े, तो ख़ाक में मिलाए जा।
'दिल्ली चलो' पुकार के, क़ौमी निशाँ सँभाल के
लाल क़िले में गाड़ के, लहराए जा, लहराए जा।

और इस नीचे लिखे गीत और उसको मेरे द्वारा दी गयी धुन को नेताजी ने बहुत पसन्द किया था :

वतन की राह में वतन के नौजवाँ शहीद हो
पुकारते हैं यह ज़मीन आसमाँ शहीद हो।
शहीद तेरी मौत ही तेरे वतन की ज़िन्दगी
तेरे लहू से जाग उठेगी चमन की ज़िन्दगी।
वतन की लाज रखना है अजीज अपनी जान से
वह नौजवान जा रहा है आज कितनी शान से।
पाक वतन की खाक पर, हर एक जवाँ शहीद हो।।
ग़ुलाम उठ वतन के दुश्मनों से इन्तकाम ले
इन अपने बाज़ुओं से तू ख़ंजरों को थाम ले।
पहाड़ तक भी काँपने लगें तेरे लो खून से
वतन की राह में वतन के नौजवाँ शहीद हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
सब देख सकते हैं कि इन गीतों के बोलों में अमर शहीद क्रान्तिकारियों के आत्म-बलिदान की प्रेरणा ही सर्वत्र गूँज रही है।

आज़ाद हिन्द फ़ौज का पूरा इतिहास देने की यहाँ जगह नहीं है। अपने बारे में भी मैं यहाँ कुछ नहीं कहना चाहता हूँ। जो हमारे क्रान्तिकारियों का सपना था कि उनके बलिदान से प्रेरित होकर फ़ौज के सिपाही उपयुक्त अवसर और कुशल नेता के नेतृत्व में भारत की आज़ादी के सैनिक बनकर देश को अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से मुक्त करने के लिए लड़ेंगे, वह आज़ाद हिन्द फ़ौज और उसकी लड़ाई के रूप में साकार हुआ।

हम आज़ाद हिन्द के सैनिक यह बड़े गर्व से कह सकते हैं कि जब अंग्रेज़ों की साज़िश से हिन्दू-मुसलमानों में वैमनस्य उभारा जा रहा था और मजहबों के भेद के आधार पर हिन्दुस्तान के बटवारे का वातावरण बन रहा था, हमारी आज़ाद हिन्द फ़ौज में सभी हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई भाई-भाई की तरह कंधे से कंधा मिलाये शत्रुओं से लड़ रहे थे। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के हृदय में महात्मा गाँधीं के प्रति महान श्रद्धा सदैव रही थी; वह कांग्रेस में अपना विश्वास और महात्मा गाँधी के प्रति पूरी फ़ौज में श्रद्धा जाग्रत करने का कोई मौका कभी हाथ से न जाने देते थे। आज़ाद हिन्द फ़ौज में 'गाँधी बिग्रेड', 'नेहरू ब्रिगेड', 'सुभाष ब्रिगेड', 'आज़ाद ब्रिगेड' नाम की ब्रिगेडें थीं और स्त्रियों की एक 'लक्ष्मीबाई ब्रिगेड' भी थी, जिनमें सभी मजहबों के, सभी प्रान्तों के पुरुष और महिलाएँ थीं।

जीवन भर मैं उस दिन की याद नहीं भूल सकता जब मई १९४६ में पूज्य बापूजी के वाल्मीकि आश्रम में आज़ाद हिन्द फ़ौज के सभी प्रान्तों के लोग उनका आशीर्वाद लेने पहुँचे थे और उन्हें अपना क़ौमी तराना सुनाया था। नेताजी की प्रशंसा करते हुए बापूजी ने कहा था, "नेताजी ने वह काम थोड़े ही समय में कर दिखाया है जिसे हम लम्बे समय में भी नहीं कर पाये थे।" इस गीत की गाँधीजी ने बहुत प्रशंसा की थी जिसमें आज़ाद हिन्द फ़ौज का लक्ष्य और आदर्श भलीभाँति जाहिर हुआ था :

आओ मिलकर गायें गीत।
आओ प्रेम की ज्योति जलायें। बिछड़ों को आपस में मिलायें।
बैर मिटायें, प्रेम बढ़ायें। सबको कर लें अपना मीत।
आओ मिलकर गायें गीत।
सेवा अपना ढंग बनायें। दुखियों का दुख दर्द मिटायें।
देश की बिगड़ी बात बनायें। सेवा की है जग में जीत।
आओ मिलकर गायें गीत।
हम भारत माँ के काम आयें। दुख की कैद से उसको छुड़ायें।
आज़ादी लें या मर जायें। फिर सुख चैन के गायें गीत।
आओ मिलकर गायें गीत।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई। आपस में हम भाई-भाई।
ना झगड़ा ना कोई लड़ाई। प्रेम की कैसी प्यारी रीत।
आओ मिलकर गायें गीत।

काकोरी के शहीदों का वह गीत, जो वे अदालत में गाते थे और जिसको गाते-गाते ही वे शहीद हुए, हम आज़ाद हिन्द फ़ौज वाले बड़े उत्साह से गाते थे और उससे हमें बड़ी प्रेरणा मिलती थी। उस गीत* के शुरू के बोल थे :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए क़ातिल में है।

देश की आज़ादी के लिए खुशी से गाते हुए मरने का हौसला हमें काकोरी के शहीदों की शहादत की उन कहानियों से सदा मिलता रहा जो नेताजी हमें समय-समय पर अपने भाषणों में सुनाते रहते थे।

* परिशिष्ट में यह गीत पूरा दिया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शहीदों के गीत : हमारी नयी गीता

☐ श्रीमती दुर्गादेवी वोहरा

[श्रीमती दुर्गादेवी वोहरा (जन्म ७ अक्टूबर, १९०७) अमर शहीद भगवती-चरण वोहरा की पत्नी हैं, जिनकी शहादत अमर शहीद भगतसिंह को जेल से छुड़ाने की योजना में प्रयोग में लाये जानेवाले बमों में से एक से, रावीतट के जंगल में परीक्षण करते समय हुई थी। आप अपने पति के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करती थीं और लाहौर में ए. एस. पी. सौण्डर्स के वध के बाद भगतसिंह को, उनकी पत्नी के छद्म वेश में, लाहौर में पूर्णतः सुरक्षित निकाल ले आने का श्रेय आपको ही है। पति की शहादत के बाद अपनी असीम व्यथा को अपने मन में छुपाये आप अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के नेतृत्व में द्विगुणित उत्साह से क्रान्तिकारी दल का कार्य करती रहीं। पुराने क्रान्तिकारी बाबा पृथ्वीसिंह आज़ाद के साथ आपने ही बम्बई में लेमिंगटन रोड के पुलिस थाने पर गोली चलायी थी। मगर घटनास्थल से पृथ्वीसिंहजी के साथ आप भी साफ बच निकली थीं और लगभग तीन वर्ष फरार रहीं। बाद में आपको लाहौर में गिरफ्तार किया गया था तथा १८१८ के रेग्युलेशन के अन्तर्गत आपको जेल में नजरबन्द रखा गया था। आपने आठ महीने नज़रबन्दी और एक साल क़ैद की सज़ा काटी थी। —सं.]

आज जब हम काकोरी के शहीदों की अर्धशताब्दी का समारोह करने जा रहे ह तो जाने मन कैसा-कैसा हो रहा है। कभी लगता है कि यह हमारा सौभाग्य है—सौभाग्य इसलिए कि जिस उद्देश्य के लिए इन अमर शहीदों रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफ़ाक़उल्ला खाँ, राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी और रोशनसिंह ने अपना बलिदान किया था वह पूर्ण हुआ और भारत आज पूर्ण स्वतंत्र है। कभी यह कुछ दुर्भाग्य सा भी लगता है—दुर्भाग्य इसलिए कि आज भी उनकी शहादतों की याद करके एक दुःखपूर्ण रोमांच भी हो आता है और विशेषतः इसलिए कि हमें आज उस क्रान्तिकारी उत्साह के दर्शन नहीं हो रहे हैं जिसका परिचय इन शहीदों ने अपने आचरण से दिया था और उस समय निश्चित रूप से उनका वह उत्साह जनता में मानो बीज की तरह पड़कर एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लहलहाती खेती के रूप में उपजा था। उस खेती को साम्राज्यवाद के पशुओं ने बहुत चरा परन्तु वह लहलहाती ही रही। लेकिन आज तो उसकी पत्तियों को भी देखने को आँखें तरस जाती हैं। फिर भी इन शहीदों की याद में ऐसा कुछ है जो मन को पूरी तरह उदास और निराश नहीं ही होने देता। हमारे मन में जो यह अर्धशताब्दी मनाने का संकल्प जागा है वह हमें लगता है, आम जनता में उन भावनाओं के पुनः जागृत होने का ही परिणाम है, उस बीज से उत्पन्न फल ही है, जिसे इन शहीदों ने अपने खून से यह गाते हुए सींचा था :

सूख जाए न कहीं पौदा ये आज़ादी का
खून अपने से इसे इसलिए तर करते हैं
दरो दीवार पै हसरत से नज़र करते हैं
खुश रहो अहले वतन, हम तो सफर करते हैं।

१९२०-२१ के असहयोग आन्दोलन के समाप्त हो जाने के बाद जनता के मन म जो एक मुर्दनी-सी छा गयी थी, वह इस काकोरी काण्ड से दूर हो गयी थी और इन शहीदों के खून से सिंचकर आज़ादी की आशा के बीज पुनः अंकुरित हुए थे और बढ़े थे। हमें आशा है कि इन शहीदों के इस अर्धशताब्दी महोत्सव से उनकी आशा की जनतंत्री समाजवादी आज़ादी का उत्साह जनता में फिर उसी प्रकार लहलहायेगा।

यह मेरा सौभाग्य रहा है कि मुझे अपने पति अमर शहीद भगवतीचरण वोहरा और उनके अमर शहीद साथियों सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद आदि के नेतृत्व में क्रान्तिकारी दल में कार्य करने का अवसर मिला था। वास्तव में काकोरी काण्ड के सम्बन्ध में जो गिरफ्तारियाँ, सजाएँ और फाँसियाँ हुई थीं उनसे दल बुरी तरह छिन्न-भिन्न अवश्य हो गया था परन्तु उससे बचे साथियों ने विशेषतः अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद और भगत-सिंह ने, उसे दृढ़तर रूप में संगठित और विकसित कर लिया था। अमर शहीद राम-प्रसाद 'बिस्मिल' ने जेल में फाँसी की कोठरी से लिखे देशवासियों के लिए अपने सन्देश में इस शेर में यह आशा व्यक्त की थी :

मरते बिस्मिल, रोशन, लहरी, अशफ़ाक़ अत्याचार से
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रुधिर की धार से॥

उनकी यह आशा वास्तव में क्रान्तिकारी शहादत के पौदे में फले लाहौर षड़यंत्र केस के अमर शहीदों यतीन्द्रनाथ दास, सरदार भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु और उनके साथी चन्द्रशेखर आज़ाद और भगवतीचरण वोहरा आदि शहीदों के रूप में तो तत्काल ही फूली-फली और इसमें आगे सूर्यसेन आदि अमर शहीदों की लम्बी परम्परा फूलती-फलती रही।

काकोरी काण्ड और भले जो भी हो, और दल की आर्थिक स्थिति के कारण भले नियोजित हुआ हो, परन्तु उसकी सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि यह साम्राज्यवादी आततायी अंग्रेजी सरकार को खुली चुनौती थी और आम जनता के मन पर उसी का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वस्थ प्रभाव हुआ था, जैसा कि दमन कहा जा सकता है, विशेषतः असहयोग आन्दोलन बन्द कर दिये जाने की निराशा और अवसाद के वातावरण में ।

तदनन्तर ये क्रान्तिकारी चुनौतियाँ आततायी सरकार को दी ही जाती रहीं। हमारे दल ने काकोरी काण्ड में फाँसी की सज़ा पाये अपने नेताओं और अन्य बन्दी नेताओं को जेल से बाहर निकाल लाने की अनेक साहसपूर्ण योजनाएँ बनायीं और उन्हें कार्यान्वित करने का प्रयास किया । यह दूसरी बात है कि ये योजनाएँ सफल नहीं हुई । इन असफलताओं का महत्त्व कम नहीं है । आगे के अनेक क्रान्तिकारी काम तो केवल सरकार को शुद्ध चुनौती और ललकार देने के लिए ही हुए। लाहौर में ए. एस. पी. सौण्डर्स का बध और दिल्ली की असेम्बली में बम-विस्फोट तो क्रान्तिकारी इतिहास की स्वर्णाक्षरी घटनाएँ हुई जो सीधे काकोरी काण्ड की चुनौती की परम्परा में थीं।

जीवन की पैसों की तंगी, भूख, बिना दवादारू की बीमारी, क्रान्तिकारी आपस में विनोद करते सहते रहे। इसके लिए हमें मानसिक बल काकोरी काण्ड के शहीदों और अन्य बन्दियों की इन कष्टों और यंत्रणाओं की कथाओं से मिलता रहा जो उन्होंने सही थीं और तब भी सह रहे थे। ये कथाएँ हमारी धर्म-कथाएँ थीं और उनके द्वारा फाँसी की कोठरी में गाये गये गीत हमारी 'गीता' थी । हमें इनसे वैसा ही महान मनोबल मिलता रहा जैसा मनोबल आम श्रद्धालु जनता में संचरित करने के लिए ही हमारे पूर्वकाल के ऋषियों ने ये धर्म-कथाएँ लिखी थीं और श्रीमद्भगवद् गीता का प्रचार किया था ।

सच तो यह है कि हमारी धार्मिक कथाओं में जो कल्पना-प्रसूत अति-प्राकृतिक बातों का समावेश हुआ है, उनसे हम बुद्धिजीवियों के तार्किक मन पर अब विशेष प्रभाव पड़ने की आशा नहीं की जा सकती, परन्तु हमारे शहीदों की ये कथाएँ तो हमारी अपनी आँखोंदेखी अनुभव की हुई बातें हैं। जनता के मन को अब यही कथाएँ जीवन को जनतंत्री समाजवादी धरातल पर उठाने का मनोबल दे सकती हैं। शहीदों के ये गीत ही अब हमारी गीता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी की परम्परा में

अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास

☐ क्रान्तिवीर जयदेव कपूर

[लेखक अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद और सरदार भगतसिंह के साथी हैं। लाहौर षड़यंत्र केस में आपको आजन्म कालेपानी की सज़ा मिली थी। जेल में एक क्रान्तिकारी के आत्म-सम्मान पर आघात करने वाले अधिकारी को पीट देने पर आपको बेत भी लगाये गये थे।

काकोरी के शहीदों की शहादत के बाद क्रान्तिकारी शहादतों के इतिहास में अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास ही सबसे पहले थे जिनकी शहादत ने देश की जनता और सभी बुद्धिजीवियों को सबसे अधिक प्रभावित, आन्दोलित और उत्तेजित किया था। उनके बाद अमर शहीद भगवतीचरण वोहरा, चन्द्रशेखर आज़ाद, सरदार भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु आदि अमर शहीदों की शहादत की यशस्वी लम्बी परम्परा तेज़ी से आगे बढ़ी थी।

प्रस्तुत लेख में अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास की शहादत का बड़ा ही भावपूर्ण वर्णन उनके मुकदमे 'लाहौर षड़यंत्र केस' और उनकी बहुत ही प्रसिद्ध भूख-हड़ताल में भी उनके साथी क्रान्तिवीर जयदेव कपूर ने किया है। —सं.]

प्राचीन पौराणिक आख्यान है : देवासुर संग्राम चरम उत्कर्ष पर था। असुरों के आक्रमण प्रबल से प्रबलतर होते जा रहे थे। उनके सामने देवगणों की रणनीति, अस्त्रसंचालन, सब कुछ निर्बल और निस्तेज लग रहा था। आसन्न पराजय से चिन्तित देवताओं ने गम्भीर तपस्या, मनन और चिन्तन के पश्चात् निर्णय लिया—एक नये शस्त्र का निर्माण करना होगा, जिसकी संहार शक्ति प्रबल और प्रचण्ड हो। किसी शुद्धात्मा तपस्वी की अस्थियों से ही ऐसे महावज्र का निर्माण सम्भव होगा। कठिन खोज के उपरान्त एक अकेले महर्षि दधीचि ऐसे मिले, जिन्होंने जन-कल्याण हेतु अपनी अस्थियाँ दान कर दीं। इस प्रकार वह वज्रास्त्र बना, जिसके प्रहार से असुरों का पराभव हो सका।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बीसवीं शताब्दी के द्वितीय एवं तृतीय दशक में हमारे देश में ऐसा ही देवासुर संग्राम चल रहा था। एक ओर थी ब्रिटिश साम्राज्यशाही की समस्त आसुरी शक्ति, उसकी विशाल सेना, पुलिस, जेल, अदालतें, भीषण और भयानक दमन के विकराल शिकंजे और दूसरी ओर सब प्रकार से शस्त्र-साधन-विहीन, करोड़ों दबे-पिसे गुलाम हिन्दुस्तानी। फिर भी ब्रिटिश सरकार इनके निरन्तर शोषण, दोहन और दमन के लिए एक से एक नित्य नये अस्त्र गढ़ती जा रही थी। रौलट एक्ट, प्रेस सेडीशन एक्ट, बंगाल आर्डिनेंस और जब जहाँ निरीह जनता का विरोध दिखायी दिया तो जलियाँ-वाला बाग़, बजबज हत्याकाण्ड, काकोरी षड़यंत्र के देशभक्तों को फाँसी, बहुतों को आजन्म कारावास और पुनः नये अस्त्रों का निर्माण––पब्लिक सेफ्टी और ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल आदि।

ऐसी संकट बेला में भारतमाता ने किसी दधीचि को पुकारा था और माँ की पुकार सुनकर आगे आये थे कुछ तरुण बलिदानी, जिनमें प्रमुख थे यतीन्द्रनाथ दास। उन्होंने सुना और स्वीकारा था, उस दिन कबीर का गुरु गहवर आहवानः "खेत पुकारे सूरमा, कर लड़िवे को साज।" धन्य थी वह जननी जिसने उन्हें पुकारा था, धन्य थे वे जो जननी की पुकार को सुनकर दौड़ते हुए चले आये थे, उस धर्मक्षेत्र में, कुरुक्षेत्र में, अपना मन, अपना तन, रक्त की एक-एक बूँद निछावर कर देने के लिए। उस दिन माता निहाल हो गयी थी, ऐसे संकल्प और समर्पणव्रती बलिदानी पुत्रों को पाकर। उन पुत्रों में भीम महापुत्र थे यतीन्द्रनाथ दास।

२४ अक्टूबर, १९०४ : शिकदार बागान, कलकत्ता में विप्लव की उत्ताल और उद्वेलित तरंगों के बीच नवजात शिशु ने आँखें खोलीं। अभी वह मात्र एक वर्ष का अबोध शिशु था कि लार्ड कर्जन ने बंगाल के दो टुकड़े कर डाले। तरुण बंगाल ने, क्रान्तिकारी बंगाल ने, विदेशी शासकों की चुनौती स्वीकार कर ली। रवि ठाकुर का एकता गान घर-घर में गूँज उठा :

बांगालीर प्रान, बांगालीर मन
बांगालीर घरे, यत भाई बोन।
एक हौक, एक हौक, एक हौक, हे भगवान।

बंगाल के साथ उठ खड़ा हुआ सम्पूर्ण देश। धरती और आकाश में गूँज उठा बंकिम बाबू का अमर गान 'वन्देमातरम्' और फिर उठीं विप्लव की लपटें जिनमें अपने प्राणों की आहुति देने वाले आतुरप्राण देश के नौजवानों का ताँता लग गया। अन्त में विदेशी सरकार की पराजय हुई, बंग-भंग समाप्त हुआ। बंगाल के दोनों टुकड़े पुनः एक हुए। भारतीय जनता के क्रान्तिकारी अभियान की यह एक बड़ी विजय थी, जिसे यतीन्द्र दास ने पालने में पड़े हुए देखा।

अभी चार वसन्त भी न बीत पाये थे, १० नवम्बर, १९०८ को अलीपुर जेल में कन्हाईलाल को फाँसी दे दी गयी। पिता बंकिमबिहारी दास कई दिन तक शहीद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कन्हाई, उनके प्रयोगशाला, उनकी फाँसी और फिर जेल के फाटक से लेकर श्मशान घाट तक उनके शव की शोभायात्रा की कहानी घर में सबको सुनाते रहे। यतीन्द्र ने भी कितना सुना, कितना समझा, उसके कोमल मस्तिष्क पर कैसा प्रभाव पड़ा, यह तो आगे चलकर ही प्रकट हुआ।

१९१२ : यतीन्द्र की आयु उस समय आठ वर्ष की थी। सुना उसने, भारत की राजधानी दिल्ली में बड़े लाट हार्डिज साहब पर एक क्रान्तिकारी ने बम फेंका, हार्डिज साहब घायल हुए, लेकिन बच गये। बसन्त विश्वास, अमीरचन्द्र, अवधबिहारी और अन्य अनेक क्रान्तिकारियों को फाँसी पर लटका दिया गया।

१९२५ : यतीन्द्र दास अब ११ वर्ष पार कर चुके थे, तो पंजाब में ग़दर पार्टी और उनके सहयोगियों ने बग़ावत का अलम उठाया। सेनाओं में ग़दर की तैयारियाँ, जनता संगठित होकर, भारतीय सेनाओं को साथ लेकर, ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़ फेंकने का विराट अभियान—और पुनः हम असफल रहे। पुनः दुश्मन की अदालतें, जेल, फाँसी का तख्ता गुलजार हुआ। करतारसिंह, पिंगले और अनेक क्रान्तिकारी फाँसी चढ़ा दिये गये। जगह-जगह पर कोर्ट-मार्शल, विद्रोही सैनिकों को मृत्युदण्ड। यतीन्द्र का नन्हा-सा दिल दहल उठा। प्रतिशोध की चिनगारी उर-अन्तर में सुलग उठी।

इसके बाद आया १९१९ के अप्रैल मास में जलियानवाला बाग़ का हत्याकाण्ड। शान्त और निरस्त्र जनसमूह पर जिस प्रकार जनरल ओ'डायर और उसके सिपाहियों ने गोली-वर्षा की, उससे सम्पूर्ण देश में अंग्रेज़ सरकार के विरुद्ध भीषण घृणा और आक्रोश छा गया। रौलट एक्ट ने इस आग को और हवा दी। महात्मा गाँधी ने आवाज़ दी : "Education can wait, but swaraj cannot." (शिक्षा रोकी जा सकती है, किन्तु स्वराज की लड़ाई नहीं रोकी जा सकती।) यतीन्द्र उस आन्दोलन में कूद पड़े। विदेशी कपड़े की दूकान के सामने पिकेटिंग करते हुए कलकत्ता में गिरफ्तार हुए, जेल भेज दिये गये। छूटने पर पुनः कांग्रेस संगठन में सक्रिय। पिता ने विरोध किया, घर से निकाल दिये गये, लेकिन यतीन्द्र थे कि कोई विरोध, कोई विघ्न-बाधा उन्हें देश-सेवा के पथ से विरत न कर सकी।

असहयोग आन्दोलन जब अपने पूरे उबाल और उफान पर था तभी यकायक नेता ने चलती गाड़ी को ब्रेक लगा दिये। इंजन बन्द हो गया किन्तु गाड़ी घिसटती रही। पंजाब में ग़दर पार्टी द्वारा संचलित किसान विद्रोह, उत्तर प्रदेश में एका आन्दोलन, हैदराबाद में सीताराम राजू के नेतृत्व में किसानों का आन्दोलन, मलबार में मोपाला विद्रोह, बंगाल में मैमनसिंह, मिदनापुर तथा अन्य ज़िलों में भी विद्रोह—एक प्रकार से सम्पूर्ण देश में छुटपुट चिनगारियाँ उठ रही थीं। इन्हें एक सूत्र में पिरोकर एक विशाल विप्लवी ज्वाला का रूप देने वाला देशव्यापी संगठन न था।

ऐसी विप्लवी सम्भावनाओं से भरपूर परिस्थितियों में शचीन्द्रनाथ सान्याल, जो पंजाब और उत्तर प्रदेश के शीर्षस्थ क्रान्तिकारी नेता थे, बंगाल के पुराने क्रान्तिकारियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से मिले, विचार-विमर्श हुआ। शचीन दा महान सैद्धान्तिक विचारक के साथ-साथ महान संगठनकर्ता भी थे। वे चाहते थे क्रान्तिकारियों का एक देशव्यापी संगठन, उनके आदर्शों, सिद्धान्तों नीति और कार्यक्रम का व्यापक प्रचार और प्रसार। इस हेतु उन्होंने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट एसोसियेशन नामक संस्था का निर्माण किया। उन्होंने *The Revolutionary* पर्चा छपाया। देशभर में इस पर्चे का प्रचार हुआ। इधर-उधर बिखरे हुए क्रान्तिकारियों को एक मंच पर लाकर एक उद्देश्य और कार्यक्रम की पूर्ति हेतु एक सन्देश और सम्बल मिला। बंगाल में शचीन दा को पुराने दादाओं से विशेष कोई मदद नहीं मिली। हाँ, नये नौजवानों ने, जिनमें शौर्य और साहस था, कुछ कर गुजरने का हौसला था और जो समय और परिस्थितियों की माँग स्पष्टतः सुन रहे थे, शचीन दा को सहयोग और समर्थन दिया।

बंगाल में शचीन दा के दाहिने हाथ थे यतीन्द्रनाथ दास। पार्टी का संगठन, प्रचार, धन एवं अस्त्र संग्रह, हर काम में यतीन्द्र ने अद्भुत सूझबूझ, साहस और लगन का परिचय दिया। क्रान्तिकारियों के गुप्त संगठन थे अनुशीलन, युगान्तर, हिन्दुस्तान सोशलिस्ट एसोसियेशन और खुला मंच था बंगाल वालण्टियर्स। बंगाल वालण्टियर्स में, जिसके जी. ओ. सी. सुभाषचन्द्र बोस थे, यतीन्द्र दास को मेजर का पद मिला था और वह सुभाष बाबू के निकटतम सहयोगियों में थे।

धन-संग्रह हेतु यतीन्द्र दास को कई दुस्साहसिक कार्य करने पड़े, जिनमें विशेष उल्लेखनीय था इण्डो-बर्मा पेट्रोलियम कम्पनी की बिक्री की रकम लूट लेना। यह रकम लेकर कम्पनी का दरबान बैंक में जमा करने जा रहा था, एक और लट्ठबन्द दरबान उसके साथ था। सूचना पाकर दो नौजवान साइकिल सवार रास्ते में एक किनारे जाकर खड़े हो गये। दोनों दरबान उधर से निकले, एक के हाथ में रुपयों से भरे हुए दो झोले थे। दोनों नौजवानों ने आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया, एक ने मिरचों का चूर्ण दोनों दरबानों की आँखों में झोंक दिया। दरबान आँखें मलने लगे, दर्द से बेहाल चिल्लाने लगे। इतने में ही एक (यतीन्द्र दास) ने थैले छीन लिये और चम्पत हो गये।

दल का काम दो-चार पिटपिटियों, रिवाल्वरों और पिस्तौलों से चल नहीं सकता था। इसके लिए दरकार थे कुछ अच्छे किस्म के बम। बम किसी बाज़ार में तो मिलते न थे, इन्हें लुक-छिपकर घर में बनाना पड़ता था। काम इतना ख़तरनाक था कि जरा-सी असावधानी या जरा सी भूल-चूक हुई नहीं कि भीषण धमाके के साथ सब कुछ, यहाँ तक कि स्वयं भी, ध्वस्त हो जायें। अस्तु, पार्टी को ज़रूरत थी बम बनाने में कुशल विशेषज्ञ की। यतीन्द्रनाथ दास विशेष परिश्रम कर इस हुनर में पारंगत हो गये।

भगतसिंह भी एक ऐसे विशेषज्ञ की खोज करते हुए कांग्रेस अधिवेशन के अवसर पर कलकत्ता जा पहुँचे। बहुतों से मिले किन्तु कोई उत्तर प्रदेश जाकर पार्टी के लोगों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
को बम बनाने का हुनर सिखाने के लिए तैयार न था। एक अकेले यतीन्द्र दास ही ने भगतसिंह का निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया। योजना बनायी गयी, आवश्यक साज-सामान की सूची तैयार की गयी। मरकरी फ्लेमिनेट और गन-काटन कलकत्ता आर्य समाज की एक कोठरी में ही तैयार कर लिये गये। लोहे के कुछ खोल भी मिल गये।

भगतसिंह यह सब सामान लेकर आगरा लौट आये वहाँ हींग की मण्डी में एक भुतहा मकान में अन्य सब सामान जमा कर लिया गया। बाहर से साथी भी ट्रेनिंग के लिए बुला लिये गये। निश्चित तिथि पर यतीन्द्र दास भी आ गये। बड़े मनोयोग और परिश्रम के साथ दास ने बम बनाने का तौर-तरीका साथियों को सविस्तार समझाया और फिर स्वयं बनाकर दिखाया। यतीन्द्र दास का ज्ञान इस सम्बन्ध में बहुत विस्तृत था। इल्म और अमल (Theory and practical demonstration) दोनों में ही वह पारंगत थे और जुगाड़ू काम में भी उनकी बुद्धि बहुत तेज़ थी।

बम बनाने का हुनर सीखने के लिए जो साथी आगरा आये थे, उनमें एक ललित मुकर्जी भी था, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में विज्ञान का विद्यार्थी। पहले तो वह बड़ी बातें बघारता था, अपने को बड़ा साहसी और सूरमा जताता था, लेकिन उस दिन आगरा में जब उसने साथियों का जमघट, पिस्तौलें और रिवाल्वर, बम बनाने की तैयारियाँ देखीं तो उसे पूर्वाभास हुआ कि अब क्रान्तिकारियों की यह टोली कुछ दुःसाहसपूर्ण कार्य करने के लिए पूर्णतया सन्नद्ध है। ललित घबरा गया, होश गुम हो गये। यतीन्द्र तुरन्त भाँप गये। भगतसिंह ललित को समझ न पाये थे, यतीन्द्र को उसे समझने में किंचित देरी न हुई। मनुष्य को, उसकी ताकत और उसकी कमजोरियों को पहचानने, तौलने और नापने के वह प्रवीण पारखी थे। उन्होंने उसी समय कह दिया था कि ललित कायर है, किसी भी समय दबाव पड़ने पर पार्टी के भेद खोल सकता है। बाद के घटनाक्रम ने सिद्ध कर दिया कि यतीन्द्र में मनुष्य को पहचानने परखने की कितनी अद्भुत क्षमता थी। लाहौर षड़यंत्र में गिरफ्तारी के तुरन्त बाद ही ललित सरकारी गवाह बन गया था। आगरा में बम तैयार हो गये। झाँसी अंचल में उसका परीक्षण भी सफल रहा। पार्टी के सभी लोगों की हिम्मत और हौसला बहुत बढ़ गया।

यतीन्द्र दास कलकत्ता वापस चले गये, किन्तु उन सब साथियों के मस्तिष्क में अपनी अमिट छाप छोड़ गये। इन पंक्तियों के लेखक को भी सर्वप्रथम उन्हें आगरा में देखने का सौभाग्य मिला था। श्यामल वर्ण, गोल चेहरा, उन्नत ललाट के नीचे दो पैनी तीखी आँखें, बन्द ओंठ, चौड़ी ठुड्ढी, दृढ़ता और संकल्प की परिचायक। साधारण कद, किन्तु सुदृढ शरीर। सब मिलाकर एक अनोखा आकर्षक व्यक्तित्व था, बहुत अल्प किन्तु मृदुभाषी। उत्तर भारत में हम लोग बंगाल के क्रान्तिकारियों को बड़ी श्रद्धा और सम्मान के साथ देखते थे लेकिन उस दिन आगरा में हमने देखा कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हमारे सर्वमान्य और शीर्षस्थ नेता तथा विचारक भगतसिंह भी यतीन्द्र का आदर करते अघाते न थे, तो स्वाभाविक रूप से हम सब लोग भी यतीन्द्र के प्रति श्रद्धाव्यक्त थे।

दिन भर प्रशिक्षण चलता था, रात्रि में सिद्धान्त, संगठन और कार्यक्रम की चर्चा। अधिकतर इन चर्चाओं में भगतसिंह ही मुख्य वक्ता होते थे। उन्होंने यतीन्द्र से अपने लक्ष्य और कार्यक्रम की मूलभूत बातें कहीं, आज़ादी से हमारा क्या मतलब है, किसकी आज़ादी और कैसे यह आज़ादी हासिल होगी ? और फिर स्वयं इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा :

> "देश को आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। साम्यवादी सिद्धान्तों पर समाज का पुनर्निर्माण करना होगा। मनुष्य द्वारा मनुष्य का तथा एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का शोषण समाप्त करना ही अपना लक्ष्य है और इस हेतु एक जन-क्रान्ति का आवाहन करना होगा, उसका पथ प्रशस्त करना होगा। इसे ध्यान में रखकर ही हमें अपना कार्यक्रम निश्चित करना है। आज के हमारे काम कल की जन-क्रान्ति के लिए रास्ता बनायेंगे।"

मैंने देखा था यतीन्द्र दास भगतसिंह से पूर्णतया सहमत थे। रात्रि के दो पहर बीत चुके थे, तब यतीन्द्र दास से भी कुछ कहने का आग्रह किया गया। उन्होंने अधिक कुछ न कह कर, केवल नजरुल के विद्रोही गान की चार पंक्तियाँ सुनायीं। इन चार पंक्तियों में वह सब कुछ कह गये :

अमि विद्रोही चिर अशान्त,
सेइ दिन हवो शान्त।
जे दिन उत्पीड़ितेर क्रन्दन रोल
आकाशे, बातासे ध्वनिवे ना।

जुलाई १९२९ में लाहौर षड़यंत्र अभियोग में यतीन्द्र दास लाहौर की बोर्स्टल जेल में बन्द थे। १० तारीख को पहली पेशी पर हम लोग अदालत के सामने ले जाये गये। वहाँ यतीन्द्र दास से पुनः मिलन हुआ। भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त को भूख-हड़ताल करते हुए एक माह से अधिक समय बीत चुका था। दोनों ही शरीर से शिथिल होते हुए भी बहुत प्रसन्न थे। उधर सरकार किसी प्रकार की जुम्बिश नहीं ले रही थी। हम सब बहुत चिन्तित थे। सबने सोचा इस संघर्ष को और तेज़ किया जाय, हम लोग भी भूख-हड़ताल में शामिल हो जायें। यतीन्द्र दास को छोड़कर हममें से किसी को भूख-हड़ताल और बलपूर्वक रबर की नली से दूध पिलाये जाने के विरुद्ध प्रतिरोधात्मक संघर्ष का कोई ज्ञान अथवा अनुभव न था और यतीन्द्र दास का कहना था कि काम बहुत कठिन है। दुश्मन की गोली खाकर मर जाना आसान है, फाँसी की रस्सी गले में डालकर झूल जाना, उससे भी आसान है, किन्तु भूख-हड़ताल करते हुए प्रतिदिन एक-एक इंच मृत्यु की ओर सरकते रहना, बहुत कठिन तपस्या है और फिर एक बार भूख-हड़ताल आरम्भ करने के बाद हमारे लिए एक विप्लवी

आत्मसम्मान और मर्यादा का प्रश्न बन जाता है, जब तक शर्तें पूरी न हों, हमारे कदम वापस नहीं आ सकते ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यतीन्द्र की सलाह थी कि हम में से प्रत्येक गम्भीरता के साथ अपने दिल को टटोले, अपने उर-अन्तर की शक्ति को तौले और इसके बाद ही कोई फैसला ले । याद रहे, एक बार इस रास्ते में कदम रखने के बाद पीछे नहीं मुड़ना होगा, जब तक सरकार हमारी माँगों को मान नहीं लेती । यह भी उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि जो साथी इस भूख-हड़ताल में शामिल नहीं हो पाता वह भी हमारा उतना ही प्रिय, उतना ही विश्वासी, उतना ही सम्मानित साथी रहेगा, जितना कि भूख-हड़ताल में शामिल होने वाला कोई साथी । अपने लिए उन्होंने पूर्ण आत्म-विश्वासपूर्वक कहा कि एक बार भूख-हड़ताल आरम्भ करने के बाद जब तक हमारी माँगें सरकार स्वीकार नहीं करती, पीछे वापस आने का प्रश्न नहीं उठ सकता । **"विजय या मृत्यु—यही मेरी नियति होगी ।"**

वह ऐतिहासिक भूख-हड़ताल

तीन दिन तक हम लोग कभी सामूहिक रूप से, कभी अलग-अलग व्यक्तिगत रूप से, इस लड़ाई के हर पहलू पर सोच-विचार करते रहे । अन्त में कुछ एक को छोड़कर सभी साथियों ने भगतसिंह और दत्त की भूख-हड़ताल में शामिल होने का फैसला कर लिया । १३ जुलाई, १९२९ को स्पेशल मजिस्ट्रेट की अदालत में इसकी विधिवत् घोषणा कर दी गयी ।

जेल अधिकारियों ने प्रत्येक भूख-हड़ताली को अलग-अलग अहातों में अलग-अलग कोठरी में बन्द कर दिया । प्रलोभन हेतु सुन्दर सुवासित भोजन के थाल कोठरी में रखा दिये । उन्होंने सोचा था, सम्भव है, भूख की असह्य पीड़ा के बीच कहीं किसी का दिल डोल जाये । किन्तु ऐसा कुछ न हो सका । हम लोगों ने निश्चय कर रखा था कि हम अपनी कोठरी में किसी प्रकार का भोजन, दूध, फल या मिष्ठान्न किसी को रखने न देंगे । तुरन्त उठाकर बाहर फेंक देंगे । इस प्रकार प्रथम चक्र में हम विजयी रहे ।

अब आरम्भ हुआ दूसरा चक्र । आठ-दस लम्बे-तड़ंगे पठान क़ैदी और जमादारों की पल्टन लेकर जेलर एक-एक भूख-हड़ताली की कोठरी का ताला खुलवाता और उसे काबू में करने का युद्ध आरम्भ हो जाता । दस दिन से उपवास करता हुआ अकेला क्रान्तिकारी और उसके मुक़ाबले में दस मुस्टण्डे जवान । कोई उसका दाहिना हाथ दबाकर बैठ जाता तो कोई बायाँ । कोई उसका एक पैर दबाता तो कोई दूसरा । इस प्रकार जमीन पर पटककर उसका पूरा शरीर दाब लिया जाता । सिरहाने बैठकर एक मज़बूत जवान उसका सिर अपने दोनों घुटनों के बीच इस प्रकार दबोच लेता कि किसी प्रकार हिलडुल न सके । इसके बाद डाक्टर मुँह खोलने का प्रयत्न करता, किन्तु हमारा निश्चय था कि चाहे दाँत टूट जायें, चाहे जबड़ा ज़ख्मी हो जाये, हम अपना मुँह न खोलने देंगे । हार मानकर डाक्टर भूख-हड़ताली की नाक में रबर की नली घुसेड़ देता और यह नली गले में से गुज़रती हुई भोजन-नलिका में उतर जाती । तब ऊपर लगी हुई कीफ में आधा दूध आधा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
पानी मिलाकर [illegible] नली खींच ली जाती और भूख-हड़ताली को दर्द से बेहाल उलटता-पुलटता छोड़कर यह पल्टन आगे बढ़ जाती, दूसरे अहाते में, दूसरे भूख-हड़ताली को 'सबक सिखाने' के लिए।

यह दूसरा चक्र पहले से अधिक कठिन था। कुछ साथियों के पेट में बलपूर्वक दूध पहुँचाने में जेल अधिकारियों को कुछ सफलता मिली, किन्तु अधिकांश में वह असफल ही रहे। इस चक्र में भी हम जीत रहे थे। डाक्टर और जेलर तथा उनकी सेना बराबर पराजित और परेशान हो रही थी। खीझ और खिसियाहट में उन्होंने अनशन के ग्यारहवें दिन यतीन्द्र दास को ज़मीन पर पटक दिया, शरीर के प्रत्येक अंग को दबोच लिया, फिर भी उनकी नाक से नली पेट में न उतार सके। एक तो उनके नासिका-छिद्र इतने छोटे थे कि सख्त मोटी नली अन्दर जा नहीं सकती थी। दूसरे, यतीन्द्र को बड़ा अच्छा अभ्यास था––नली गले में पहुँचते ही खाँसकर मुँह में निकाल लेते और दाँतों से दबाकर देर तक पड़े रहते, जब तक कि डाक्टर थककर हार मानकर उन्हें छोड़कर चला न जाता। दो दिन की लगातार पराजय की पीड़ा ने डाक्टर को पागल जैसा बना दिया था। वैसे भी यह डाक्टर पागलख़ाने में बहुत दिनों से पागलों का इलाज करता हुआ स्वयं आधा पागल बन गया था। चलते समय वह यतीन्द्र को चुनौती दे गया : "कल तुम्हें देखेंगे !" यतीन्द्र ने मुस्कराकर चुनौती स्वीकार कर ली। इस प्रकार कुल मिलाकर दूसरा चक्र भी हम जीत गये।

२४ जुलाई १९२९ : आज तीसरा और अन्तिम चक्र था। जेलर, डाक्टर और जवान पठानों की पल्टन यतीन्द्र दास की कोठरी के सामने आ धमकी। दरवाज़ा खुला और एक के मुकाबले में दस जवानों का युद्ध आरम्भ हुआ। बड़ी मुश्किल से यतीन्द्र को काबू में कर पाया उन दानवों ने। डाक्टर ने नाक में नली घुसेड़ दी। यतीन्द्र ने ज़ोरों से खाँसना शुरू किया। रबड़ की नली भोजन-नलिका में न जाकर श्वाँस नलिका में जा पहुँची। अर्ध-विक्षिप्त एवं उत्तेजित डाक्टर ने ऊपर कीप में दूध उँड़ेल दिया। घर्र-घर्र की आवाज़ निकली, कीप में दूध की फुहार जैसी उठी, यतीन्द्र की आँखें उलट गयीं और वे बेहोश हो गये। डाक्टर ने घबराकर नली खींच ली और यतीन्द्र को तड़पता हुआ छोड़कर वह सारी पल्टन भाग खड़ी हुई। दूध यतीन्द्र दास के फेफड़े में पहुँच गया था।

यतीन्द्र दास अब अस्पताल में थे। पाँच-छः साथी भी, जैसे जिसकी हालत खराब हुई, अस्पताल पहुँच गये थे और सब एक ही बैरक में बन्द थे। यतीन्द्र दास तेज़ बुख़ार, खाँसी और श्वास-अवरोध के कारण कभी बेहोश हो जाते थे और कभी होश में आ जाते थे। साथियों के शोर मचाने पर डाक्टर आया और उसने जब यतीन्द्र दास की हालत देखी तो बेहद घबरा गया। डाक्टर ने उनके मुँह में दवा डालने की चेष्टा की तो वे यकायक ज़ोरों से चीख पड़े "नो !" और पुनः बेहोशी में डूब गये। डाक्टर ने इंजेक्शन देने की चेष्टा की तो उनका सम्पूर्ण शरीर सिहर उठा और पुनः उन्होंने गुरु गम्भीर स्वर में चिल्लाकर कहा "नो !" साथियों ने जब दवा या इंजेक्शन लेने का अनुरोध किया तो उनसे भी दृढ़ता के साथ इनकार कर दिया। बोलने में बहुत कष्ट था, फिर भी रुक-रुककर आहिस्ते से बोले, "अब मैं उनकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पकड़ से बाहर पहुँच गया हूँ। विजय हमारी निश्चित है।" यह कहते हुए न जाने कहाँ से आकर एक मन्द मुस्कान उनके मुख पर दौड़ गयी।

धीरे-धीरे एक-एक इंच मौत की ओर सरकने का उनका अभियान अब आरम्भ हो गया। शरीर में विषैले द्रव्य का प्रभाव बढ़ने लगा। आँखों की ज्योति दिन-प्रति-दिन क्षीण होती गयी। अधिकतर मूर्च्छा में पड़े रहते, कभी कुछ होश आता तो धीरे से सिरहाने बैठे हुए साथी से कहते, 'वन्देमातरम्' गान सुनाओ। सब साथी, जो उस समय अस्पताल में थे, सिमटकर उनकी चारपाई के चारों ओर बैठ जाते और अश्रुपूरित नेत्रों के साथ, दर्द-भरे गले से 'वन्देमातरम्' गाते रहते। इसके बाद उनके छोटे भाई किरन दास से ज्ञात हुआ कि यतीन्द्र दास को रवि ठाकुर का यह गीत बहुत प्रिय था :

यदि तोर डाक शुने केऊ न आसे तबे
एकला चलो रे।
तबे वज्रानले आपन बुकेर पांजर जालिये निये
एकला चलो रे।

गीत के बोल किरन दास बोलते जाते थे और हम दुहराते जाते थे। गीत की समाप्ति पर यतीन्द्र दास के मुख पर एक सस्मित शान्ति छा जाती थी जैसे वह एक महान आत्मिक सन्तोष का अनुभव कर रहे हों।

दिन-पर-दिन हालत खराब होती गयी। सरकार इस ज़िम्मेदारी को ओढ़ना नहीं चाहती थी कि यतीन्द्र दास की मृत्यु जेल में हो। एक 'चोली चुक' चापलूस रायबहादुर के नाम से अदालत में दर्खास्त लगा दी गयी कि यतीन्द्र दास को उनकी जमानत और मुचलके पर छोड़ दिया जाये। अदालत ने हुक्म निकाल दिया। जेल के अन्दर ख़बर पहुँची। लेकिन यतीन्द्र दास ने जमानत और मुचलके पर बाहर जाने से इनकार कर दिया। हम लोगों ने, जो उन दिनों उनके साथ अस्पताल की एक ही बैरक में थे, लोहे की चारपाइयाँ, अलमारियाँ, मेजें घसीटकर एक के ऊपर एक लगा दीं और उन चारपाइयों पर लेट गये। बैरक का दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर लिया। जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट और जेलर अपने दल-बल के साथ यतीन्द दास को बाहर ले जाने के लिए आये और जब उन्होंने हमारा अभेद्य अवरोध देखा तो पहले बल प्रयोग की धमकी दी, बाद में सुपरिण्टेण्डेण्ट मिस्टर ब्रिग्स ने इसके परिणामों पर विचार किया। दरवाज़ा अन्दर ठेलने से, सटी हुई चारपाइयाँ, अलमारियाँ, मेजें भरभराकर गिर जातीं, उनके नीचे दुर्बल कृषकाय भूख-हड़ताली निश्चय ही कुचलकर मर जाते। अन्ततः यतीन्द्र दास को बाहर ले जाने का प्रयास असफल रहा।

देश के सभी दैनिक, साप्ताहिक समाचार-पत्रों के प्रथम पृष्ठ पर लाहौर के भूख-हड़तालियों के स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचनाएँ प्रकाशित हो रही थीं—किसका वजन कितना घटा, नाड़ी-गति कितनी मद्धिम हुई, पेशाब में एसीटोन की मात्रा कितनी अधिक बढ़ गयी; संक्षेप में, कौन कितना मृत्यु के निकट पहुँचा। एक व्यापक और विशाल जन-आन्दोलन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उठ खड़ा हुआ सम्पूर्ण देश में। सरकार झुकी, राजबन्दियों के साथ अच्छे व्यवहार का आश्वासन दिया गया। उस समय तक यतीन्द्र दास रेखा पार जा चुके थे। उन्होंने कह दिया था कि वे अब मृत्यु का पथ छोड़कर जीवन की ओर वापस न आयेंगे। किन्तु उनकी इच्छा थी, जो अब आदेश बन चुकी थी, कि अन्य सब साथी भूख-हड़ताल बन्द कर दें। एक दिन उन्होंने छोटे भाई किरन के द्वारा कुछ बिस्कुट बाहर से मँगाये। सब साथियों को अपनी चारपाई के इर्द-गिर्द जमा किया। साथियों से 'वन्देमातरम्' गान सुनाने का आग्रह किया। बाद में प्रत्येक साथी से एक-एक बिस्कुट खाने का अनुरोध किया। बोले—"सरकार झुकी है; हमारी माँगें स्वीकार करने का वचन दे रही है। तुम लोग फिलहाल भूख-हड़ताल स्थगित कर दो। अभी इस सरकार से निपटने के लिए बहुत अवसर मिलेंगे।" अपने लिए उन्होंने कहा कि वे इस मोरचे की जीत के लिए अपना जीवन देंगे और उनका विश्वास था कि उनकी मृत्यु देश को नया जीवन देगी।

और अब वे बड़ी तेज़ी के साथ मृत्यु की ओर चले जा रहे थे। आँख की रोशनी पहले ही जा चुकी थी। बोलने की ताकत बहुत क्षीण थी। हाथ-पैर भी संज्ञाशून्य होते जा रहे थे। अधिकतर बेहोशी में पड़े रहते, फिर भी जब कभी होश आता तो इशारों से जो एक-दो बात कहते उसमें उनका स्वस्थ मन ही परिलक्षित होता था।

१३ सितम्बर १९२९ : उनकी यात्रा का अन्तिम दिन। सभी साथी उनकी चारपाई के चारों ओर खड़े थे। एक हिचकी आयी और उनके प्राण-पखेरू साथ लेकर चली गयी। अश्रुपूरित नयनों के साथ सबने साथी को अन्तिम श्रद्धांजलि दी और इसके बाद दो बाँसों की शैय्या पर उनका शव-श्रृंगार किया, जैसा जो कुछ बन पड़ा। फिर 'वन्देमातरम्' की धुन के साथ उस शव-शैय्या को कन्धा देकर जेल के फाटक पर विशाल जनसमूह को सौंप आये।

कितना सही कहा था किसी ने उस दिन यतीन्द्र के लिए : Lived a Hero, Died a Martyr.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी की परम्परा में

रावीतट के बलिदानी भगवतीचरण वोहरा

☐ क्रान्तिवीर जयदेव कपूर

सन. १९३० के मई मास का अन्त था। भरी दुपहरी, ऊपर आकाश में सूरज जल रहा था। नीचे धरती पर लू की लपटें लहरा रही थीं। असह्य गर्मी थी। गर्द और गुबार. भरे आँधी-अन्धड़ ने राह चलना दूभर कर रखा था। अधिकतर दुकानें या तो बन्द थीं या फिर उनके द्वारों पर भारी-भारी पर्दे पड़े हुए थे। इनसान तो दूर रहा, जानवर तक घर से बाहर निकलने का साहस खो बैठे थे। सड़कें सब सुनसान थीं। दोनों किनारों पर चुपचाप खड़ी हुई इमारतों की ऊँची-ऊँची दीवारें सायँ-सायँ कर रही थीं। कहीं किसी प्रकार की कोई जुम्बिश नज़र न आती थी। एक अजीब उदासी, मरघट जैसी मुर्दनी ने उस दिन लाहौर नगरी को ढँक लिया था।

सहसा तीन नौजवान, बोर्स्टल जेल के समीप बहावलपुर रोड स्थित एक बँगले से बाहर निकले। एक बार खोज करती हुई पैनी-पैनी आँखों से उन्होंने चारों ओर देखा, और फिर सड़क पर चल दिये। उनकी गम्भीर मुखमुद्रा, अन्तर में किसी भीषण निश्चय की परिचायक थी। वे चले जा रहे थे, अपने भारी पगचाप से सड़क का सीना रोंदते हुए, गर्द-गुबार के तूफान को चुनौती देते हुए, तीनों चुपचाप, सिर झुकाये हुए, किसी गहरे चिन्तन में लीन। आपस में भी वे एक-दूसरे से बोलते न थे। चारों ओर की नीरव स्तब्धता और इन अनोखे मुसाफ़िरों का गहरा मौन भंग करते हुए सड़क के किनारे किसी वृक्ष की छाँह में हाँफता पड़ा हुआ कोई कुत्ता कभी भौंक उठता था। तब वे चौकन्ने होकर चारों ओर देख लेते, और पुनः उनके पग आगे बढ़ जाते, अपने पूर्व निश्चित और निर्दिष्ट पथ पर। चलते-चलते रास्ते ने भी उनका साथ छोड़ दिया। कोलतार और पत्थर की सड़क समाप्त हो गयी। अब उनके सामने आगे दूर तक फैला हुआ था रेतीला मैदान, जिसकी चमक से आँखें चकाचौंध हो जाती थीं। एक क्षण के लिए वे ठहरे। एक बार आँख उठाकर उन्होंने ऊपर देखा। आकाश में अब भी वही जलता हुआ सूरज, सामने बालू का विशाल विस्तार। और फिर कुछ सोचकर वे चल दिये, उस बालू में अपने पदचिह्न पीछे छोड़ते हुए। चलते-चलते वे तीनों बालू का मैदान भी लाँघ गये। अब उनके सामने था घना जंगल, और समीप ही उसके बीच से बहती हुई रावी नदी, उसका भयावह चीत्कारपूर्ण प्रवाह।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अभी तक वह दूसरों के बनाये या बताये हुए रास्ते पर चल रहे थे। अब आगे उन्हें अपना रास्ता स्वयं बनाना था। ऐसे में तेजी के साथ बढ़कर आगे हो लिये भगवती-चरण। उनके पीछे थे सुखदेव राज, और सबके पीछे बच्चन (वैशम्पायन)। ऊँचे-नीचे टीलों, लताओं-वृक्षों के झुरमुटों के बीच में से, टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता बनाते हुए, वे तीनों अब भी चलते ही चले जा रहे थे। घने जंगल के बीच सुविधाजनक एक स्थान देखकर, सहसा भगवती भाई के कदम रुक गये। पीछे आने वाले साथियों को सम्बोधित करते हुए बोले : "सावधान साथियो ! पीछे हट जाओ। अब मैं इस बम का परीक्षण करने जा रहा हूँ।" यह कहकर उन्होंने अपने झोले से लोहे का अण्डाकार बम बाहर निकाल लिया। रबड़ की इलास्टिक डोरी खींचकर घोड़ा चढ़ा दिया और बम के मुँह पर मरकरी फुलमिनेट की टोपी फँसा दी। दो-एक बार उसे उलट-पुलटकर देखा, फिर पीछे साथियों से कहा : "इसका घोड़ा तो बहुत ढीला है। आज इसे रहने दिया जाय।" तुरन्त थोड़ी दूर से सुखदेव राज बोल उठा : "तुम्हें भय लगता है तो लाओ मुझे दो।" भगवती भाई जोरों से हँस पड़े, बोले : "जिस दिन इस रास्ते में पहला कदम रखा था, उसी दिन मौत का भय, गहराई में, बहुत गहराई में दफ़ना आये थे, सुखदेव ! क्या बात करते हो ? अच्छा पीछे हट जाओ !" और इतना कहते हुए उनका बाँयाँ पैर आगे बढ़ गया, दाहिना हाथ आकाश में अर्धवृत्ताकार बनाता हुआ लहराया, और उन्होंने बम फेंक दिया।

हाथ से बम का छूटना था कि तत्क्षण एक भीषण विस्फोट हुआ। जंगल का कोना-कोना गूंज उठा। धरती काँप उठी, वृक्ष हिलने लगे। छोटे-छोटे जानवर भय से भाग चले। पक्षीगण ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते, शोर मचाते हुए, आकाश में उड़ने लगे। और इधर भगवती भाई का भारी-भरकम शरीर भूमि पर गिर गया। एक क्षण के लिए तो समझ में न आया—क्या हो गया, कैसे ? और फिर तुरन्त ही झपटकर बच्चन ने अपनी बाँहों में भाई को भर लिया। फिर आँसू भरी आँखों से देखा उसने, भगवती भाई का एक हाथ कलाई के पास से कट गया था। दूसरे हाथ की उँगलियाँ उड़ गयी थीं। चेहरे पर कई जगह गहरे घावों से रक्त बह रहा था। पेट में बड़े-बड़े छेद हो गये थे, जिनसे लहू की फुहारें निकल रही थीं। आँतें कुछ बाहर निकल आयी थीं। सारा शरीर क्षतविक्षत, लहूलुहान। लेकिन मुख पर वही तेज, वही सदैव हँसती हुई सौम्य शान्त चेतना अभी जाग्रत थी। बोले वह : "यही दुःख है, भगतसिंह के छुड़ाने में सहयोग न दे सकूँगा। .... काश, यह मृत्यु दो दिन बाद होती !" इतना कहते हुए वह बेहोश हो गये।

बच्चन दौड़कर नदी के जल से कपड़ा भिगा लाया। भीगे कपड़े से मस्तक पोंछा, जल की कुछ बूंदें मुख में डालीं, तो भैया ने फिर आँखें खोल दीं। धीमे स्वर में रुक-रुककर कहने लगे : "मैं जा रहा हूं। मेरे मरने की ख़बर पुलिस को न मिलने पाये। .... अपना आन्दोलन मज़बूती के साथ चलाते रहना ...." और उनके अन्तिम शब्द थे : "मरने से पहले यदि आज़ाद भैया से मुलाक़ात हो सकती ...." और भी न जाने क्या और कितना वह कहना चाहते थे। लेकिन, दिल की बातें दिल ही में रह गयीं, ज़बान पर न आ सकीं। और वह चले गये, सदैव के लिए चले गये, हमें और हमारी दुनिया को छोड़कर।

कहते हैं, जीवन को समझना है तो मृत्यु को देखो। मृत्यु में ही जीवन का समस्त दर्शन झिलमिलाता है। भगवती भाई की मृत्यु के क्षणों में, उनके अन्तिम दो शब्द उनकी जीवन की सारी कहानी कह गये। मृत्यु की विकराल विभीषिका के बीच वह हमारा भाई कितना शान्त था, कितना निर्भय! कालीदह में विषधर के फणों पर नृत्य करते हुए कृष्ण की भाँति! मृत्यु उन पर हावी न हो पायी, वह मृत्यु पर हावी रहे। अन्तिम क्षणों में उन्होंने अपनी प्रियतमा पत्नी दुर्गादेवी को याद नहीं किया। अपने सुन्दर सुकुमार शची को याद नहीं किया। याद किया उन्होंने आज़ादी और इन्क़लाब के लिए लड़ने वाली अपनी पार्टी को, याद किया उन्होंने अपने सेनापति आज़ाद को। और अन्तिम सन्देश जो वह छोड़ गये, अपने साथियों के नाम, देश की कोटि-कोटि शोषित और सतायी हुई जनता के नाम, वह भी यही था : "अपना आन्दोलन मज़बूती के साथ चलाते रहना।" ऐसे थे हमारे भगवती भाई। ऐसी थी उनकी महान निष्ठा, उनकी एकाग्र साधना, अपने आदर्शों, सिद्धान्तों के प्रति, अपनी पार्टी के प्रति, अपने आन्दोलन के प्रति। उनका जीवन पूर्णरूपेण अर्पित था, उत्सर्ग था, आज़ादी और समाजवाद के लिए। इसके लिए वह जिये, इसके लिए वह मरे।

उस दिन घने जंगल के बीच, निर्जन एकान्त में हम अपने शहीद साथी के शव का भी समुचित सत्कार न कर सके। एक सफेद चादर में किसी तरह समेटकर उन्हें नदी तक ले गये। कुछ भारी-भारी पत्थर चादर के चारों खूंट से बाँधकर, राष्ट्र की यह अमूल्य निधि रावी के अथाह जल को समर्पित कर आये। कोई सलामी का बाजा नहीं, कोई बिदाई की धुन नहीं। हम किसी प्रकार की रस्म-अदाई तक न कर पाये। लेकिन भगवती भाई अपनी मनचाही कर गये। लोगों से, जो उनके बहुत निकट रहे हैं, सुना है कि जीवन के एकान्त क्षणों में वह अक्सर गुनगुनाया करते थे :

मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथ पर तुम देना फेंक,
मातृभूमि हित शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।

क्रान्तिकारियों में भी भगवती भाई बहुत चमकने वाले रत्न थे। हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ के कमाण्डर आज़ाद थे, तो उसके मार्ग-निर्देशक थे भगवतीचरण। आज़ाद सैनिक संघर्ष में अद्वितीय थे, तो भगवतीचरण सैद्धान्तिक संघर्ष में अपना सानी नहीं रखते थे। ऐसे बहादुर और ऐसी सूझबूझ वाले नेताओं को पाकर कोई भी पार्टी चमक सकती थी। आश्चर्य नहीं, उस समय के स्वातंत्र्य संघर्ष में हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ अपनी अमिट छाप छोड़ गया है।

और वे दिन भी क्या थे। अवनि-अम्बर में जैसे आग बरस रही थी, सब ओर चिनगारियाँ बिखर रही थीं और एक-एक चिनगारी अंगार बनने जा रही थी। देश के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक एक अजीब उन्माद और आवेश था। आज़ादी के दीवानों की अलमस्त टोली सिर से कफन बाँधे हुए विदेशी शासन को चुनौती दे रही थी : "नहिं रखनी सरकार ज़ालिम नहिं रखनी!" लाला लाजपतराय पर लाठी बरसाने वाला अंग्रेज़ कप्तान सौण्डर्स लाहौर में दिन-दहाड़े शहर की चौड़ी सड़क पर गोली का निशाना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन चुका था। वायसराय की ट्रेन के नीचे बम-विस्फोट हुआ। चटगाँव में सरकारी शस्त्रागार लूट लिया गया। कलकत्ता, ढाका, मैमनसिंह, मिदनापुर में एक के बाद दूसरे गोरे अफ़सर मारे जा रहे थे। गढ़वाली पल्टन के सूरमा सिपाही बग़ावत का झंडा बुलन्द कर रहे थे। बम्बई, अहमदाबाद, नागपुर के मज़दूर बड़ी-बड़ी हड़तालें कर रहे थे। देश के किसान सामूहिक रूप से लगानबन्दी करने जा रहे थे। कितनी महान् क्रान्तिकारी सम्भावनाएँ भरी हुई थीं उस समय और परिस्थिति में!

विदेशी शासन ने भी दमन की सम्पूर्ण मशीनरी––सेना, पुलिस, जेल, अदालतें सब––अपने पूरे वेग से चालू कर दी थीं, आज़ादी के इस आन्दोलन को कुचलकर खून के गड्ढे में डुबा देने के लिए।

इधर देश के मध्यम वर्गीय राजनीतिक रहनुमा, क्रान्ति और उसके परिणामों से घबराने वाले नेता, जनता के आगे बढते हुए कदम क्रान्ति पथ से हटाकर सुधारवादी गलियों की ओर मोड़ देने के लिए प्रयत्नशील थे। ऐसे महान (?) नेता कभी भगतसिंह की तुलना अब्दुल रशीद से करते थे, कभी यतीन्द्र नाथ के बलिदान को 'आत्मघात' की संज्ञा देते थे, कभी गढ़वाली पल्टन के गोली चलाने से इनकार करने पर उन्हें 'अनुशासनहीन' कहकर 'कर्तव्यविमुखता' का दोषी ठहराते थे। उनकी दृष्टि में ''इन्क़लाब ज़िन्दाबाद'' का नारा एक 'महान मूर्खता' थी। आज़ादी और इन्क़लाब के लिए जीवन होम करने वाले नौजवान उनकी दृष्टि में 'कायर' थे। तभी तो 'Cult of the Bomb' शीर्षक लेख लिखकर तथा लाहौर कांग्रेस के अवसर पर वायसराय को बधाई देते हुए, देश के क्रान्तिकारियों की सार्वजनिक भर्त्सना के प्रस्ताव पास किये जा रहे थे, उनके कार्यों को 'जघन्य' घोषित करते हुए सर्वसाधारण जनता को उनसे दूर और अलग रहने की 'नेक सलाह' दी जा रही थी।

ऐसे समय में देश के राजनीतिक क्षितिज पर एक सितारा चमक उठा, जिसके प्रकाश ने कितानों को रास्ता दिखाया। उसने ब्रिटिश साम्राज्यशाही के दमन का मुँहतोड़ जवाब दिया, हिन्दुस्तानी नौजवानों के हाथों में बम और पिस्तौल देकर उसने सुधार और समझौता परस्त मध्यम वर्गीय नेताओं की खोखली राजनीति का पर्दाफाश किया, अपनी ओजमयी लेखनी और वाणी से उसने क्रान्ति का पथ प्रशस्त किया, देश के नौजवानों, मज़दूरों और किसानों के लिए उसके द्वारा लिखित **'नौजवान भारत सभा का घोषणा-पत्र', 'बम का दर्शन'** तथा अन्य ऐतिहासिक दस्तावेज़ों ने क्रान्तिकारी आन्दोलन का मार्ग-प्रदर्शन किया, उसकी जड़ें गहराई तक जनता के मानस में जमायीं, और आज भी वे आग के अक्षर हमारी रहनुमाई कर रहे हैं। ऐसा था वह हमारा साथी भगवतीचरण। मेहराब के बीच चमकने वाला पत्थर तो वह न बन सका और न ही उसकी ऐसी कोई आकांक्षा या अरमान ही था। हाँ, वह क्रान्तिकारी आन्दोलन की नींव में एक आधारशिला अवश्य बन गया। सस्ती शोहरत के कोलाहलमय वातावरण से दूर रहकर शान्त और ठोस सेवा और समर्पण ही उसके जीवन का मूलमन्त्र था।

जन्म १९०२ में, आगरा में। प्रारम्भिक शिक्षा आगरा तथा लाहौर में। सब प्रकार से

सुखी और सम्पन्न परिवार । जीवनसंगिनी के रूप में ऐसा रत्न उन्होंने पाया जो कवि-कल्पना
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
से भी परे था । असाधारण सौन्दर्य और शालीनता के साथ-साथ असाधारण शौर्य और साहस का सामंजस्य—ऐसा आकर्षक व्यक्तित्व जो इस दुनिया में ढूँढने पर मुश्किल से मिलेगा । सब कुछ तो सहज ही उपलब्ध था भगवतीचरण को । नेशनल कालेज, लाहौर में इनके मित्र और सहपाठी थे भगतसिंह और सुखदेव । लाला लाजपतराय इनकी प्रतिभा के कायल थे और उनका विशाल पुस्तकालय इनके लिए सदैव खुला रहता था । सैद्धान्तिक ज्ञान और विवेचन में, लेखक और वक्ता के रूप में, भगवतीचरण अपने सब साथियों में अद्वितीय थे । बृहत् अध्ययन और गम्भीर चिन्तन, शान्त और सरल स्वभाव, सबको समेट-कर चलने और चलाने की अद्भुत क्षमता, संगठन और सिद्धान्तों के लिए सबसे आगे बढ़कर सदैव अपना सर्वस्व निछावर करने को उद्धत–इन्हीं गुणों के कारण वे अपने समय के सभी क्रान्तिकारियों के भाई बन गये थे और इसी प्रकार दुर्गादेवी भी सबकी भाभी बन गयी थीं । भगवती भाई, उनका घर-परिवार, धन-सम्पत्ति सब कुछ पार्टी को अर्पण थे । पार्टी के प्राय: सभी सदस्यों से उन्हें असीम प्यार और विश्वास मिला । हाँ, दो-एक ऐसे भी व्यक्ति थे जो कभी-कभी उन्हें बदनाम करने के लिए बकवास करने से भी न चूकते थे । लेकिन भगवती भाई ने कभी इसकी परवाह न की, कभी बदले में किसी पर चोट न की । यह भी उनके चरित्र की एक अद्भुत विशेषता थी ।

१९२९-३० में लाहौर सेण्ट्रल जेल की फाँसी की कोठरी में बन्द भगतसिंह जल्लाद की रस्सी का इन्तज़ार कर रहा था । बाहर पार्टी ने निश्चय किया कि जान पर खेलकर सरदार को जेल और पुलिस के पंजे से मुक्त कराना है, जो बड़ा जोखिम का काम था । गोलियाँ चलेंगी, बम फटेंगे, कुछ हमारे साथी मरेंगे, कुछ पुलिस के जवान मारे जायेंगे । पार्टी के वरिष्ठ सदस्यों ने आग्रह किया कि पार्टी का 'संचालक मस्तिष्क' ख़तरे से बाहर रखा जाये । किन्तु, भगवती भाई बिलकुल सहमत न हुए । उनका प्रबल अनुरोध और आग्रह था कि वे इस लड़ाई की अगली कतार में रहेंगे । और वे अगली ही कतार में रहे भी ।

उनके जीवन को समझने और समझाने वाली अनेक घटनाओं में से आज एक और स्मृतिपट पर सबसे अधिक उभरकर आती है । १९२९ की जनवरी और मार्च में मेरठ तथा लाहौर षड़यन्त्र के अभियोग में बहुत–से कम्युनिस्ट और क्रान्तिकारी नौजवान गिरफ्तार होकर जेल में बन्द थे । भगवती भाई पर वारण्ट था । वह फरार हो गये । आगे-आगे वह भाग रहे थे और उनके पीछे पुलिस और खुफिया विभाग के हथियारबन्द जवान । ऐसे समय में बहुतों ने भगवती भाई से कहा कि वे रूस चले जायें और इसके लिए साधन और सुविधाएँ भी नियोजित की गयीं । लेकिन भगवती भाई ने इनकार कर दिया । बोले वह : "आज देश की आज़ादी और इन्क़लाब के लिए मेरे खून की ज़रूरत है । मैं खून दूँगा, अपने देशवासियों के बीच रहकर खून दूँगा । मैं हरगिज बाहर नहीं जाऊँगा ।" और उन्होंने अपने खून की एक-एक बूँद क्रान्ति के लिए दी ।

२८ मई, १९३० उनका बलिदान दिवस है । वही रावी है, वही उसका मस्ती

CC-0. Agamnigam Foundation. Chandigarh. Digitized by eGangotri

भरा प्रवाह और प्रवाह वाला धारा है, बल्कि रहेगा। हाँ, भगवती भाई अब इसके तट पर न आयेंगे, कभी न आयेंगे । कोई पत्थर भी न बता सकेगा, कहाँ किस स्थान पर उनकी अस्थियाँ सोयी हैं।

रावी, पुण्य-सलिले ! एक दिन तुम करतारसिंह, पिंगले और उनके शहीद साथियों के भस्मावशेष लेकर प्रवाहित हुई थीं । यतीन्द्र दास ६३ दिनों की घोर तपस्या के बाद तुम्हारे ही तट पर अपनी अस्थियाँ दान कर गये थे । तुम्हीं ने अपने एक किनारे पर भगवती भाई के लिए स्वर्ग की सेज सजा दी थी। भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु ने तुम्हारे ही तट पर एक दिन फाँसी की मालाओं से बलिदानी का श्रृंगार किया था। रावी, जाने-अनजाने सैकड़ों शहीदों की पुण्य भस्म लेकर बहने वाली रावी, तुम धन्य हो, तुम्हारा प्रवाह धन्य है ! तुमने अपनी पवित्र लहरों पर बिठाकर करतार और पिंगले, भगवती भाई और भगतसिंह और भी न जाने कितने क्रान्तिकारियों की संघर्ष और बलिदानमयी परम्पराओं से पंजाब से लेकर अरब सागर तक, अरब सागर से लेकर बंगाल की खाड़ी तक, देश को चतुर्दिक बाँध रखा है। रावी, तुम बहती रहना, इन क्रान्तिकारी परम्पराओं को बनाये रखना, विस्तारित करती रहना। आज के दिन तुम्हें शतशः प्रणाम है, और प्रणाम है उन सब तरुण तपस्वियों को, जो देश की आज़ादी और इन्क़लाब के लिए तुम्हारे तट पर हँसते हुए अपना जीवन दान कर गये ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काकोरी काण्ड और मेरठ

☐ क्रान्तिवीर राजेन्द्रपालसिंह वारियर

[लेखक क्रान्तिकारी दल की मेरठ शाखा के एक प्रमुख सदस्य रहे हैं और अपनी क्रान्तिकारी गतिविधि के लिए अज्ञातवास तथा कारावास भी आपने भोगा है। —सं.]

सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन से देश में जो महान जागृति हुई उसमें मेरे एक सम्बन्धी चौ. विजयपालसिंह भी अपनी एल-एल. बी. परीक्षा छोड़कर उसमें कूद पड़े। उन्होंने एक साल का कारावास मेरठ और कानपुर की जेलों में पूरा किया। कानपुर की जेल में चौधरी साहब और उनके निकटतम सहयोगी श्री विष्णुशरण दुबलिश दोनों के साथ में बहुत-से क्रान्तिकारियों का भी सम्पर्क हुआ। जेलों से बाहर आने के बाद चौधरी साहब ने तो अपने गले में भुने चनों का झोला डाला, पाँवों में लकड़ी की खड़ाऊँ पहनी और हाथ में एक सोटा लेकर, देहातों में निकल पड़े और स्वराज का अलख जगाने लगे। वह १९२४ में स्वराज पार्टी के टिकट पर .यू. पी. लेजिस्लेटिव कौन्सिल में भारी बहुमत से चुने गये। दुबलिशजी मेरठ के वैश्य अनाथालय के प्रबन्धक बनकर उसमें ही रहने लगे। जेल में क्रान्तिकारियों का जो सम्पर्क मेरठ वालों से हुआ था उसी सम्पर्क के द्वारा कुछ क्रान्तिकारी मेरठ आये क्योंकि मेरठ में दुबलिशजी हर समय उपस्थित रहते थे, इसलिए बाहर के क्रान्तिकारियों का ठहरना और रहना दुबलिशजी के पास ही हुआ।

काकोरी काण्ड में क्रान्तिकारियों ने रेल का ख़ज़ाना लूटकर अंग्रेज़ी सरकार के मुँह पर ऐसा तमाचा मारा जिससे वह तिलमिला गयी। अनेकों नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं को पुलिस ने पकड़कर जेल में बन्द कर दिया। षड़यंत्रों को घड़कर तैयार करना अंग्रेज़ी राज में पुलिस का खेल रहा है। इस मामले में भी काकोरी षड़यत्र केस चालू कर दिया। इससे अन्ततः चार नौजवानों को फाँसी देकर शहीद किया गया। कई को आजन्म कैद, कुछ को चौदह तथा दस साल की जेल और दूसरों को पाँच-पाँच साल की जेल की सज़ा दी गयी।

जब यह केस लखनऊ में चालू था तो चौधरी विजयपालसिंह गवर्नर की कौन्सिल के मेम्बर हो चुके थे। कौन्सिल की बैठकों में उनको लखनऊ जाना ही होता था। वह काकोरी केस को देखते और सुनते थे। मेरठ में अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कानून की छोड़ी हुई [illegible] की क्लास में चौधरी साहब [illegible] दाखिल हो गये। उसी समय मैं भी मेरठ कालेज का विद्यार्थी हो गया था। मेरठ कालेज का मैं एक अच्छा स्पोर्ट्समैन था। मेरठ कालेज में एक जिमनेज़ियम खोला गया। उसका मुझे कप्तान नियुक्त किया गया। कप्तान होने की वजह से हर शाम को मुझे जिमनेज़ियम में होना आवश्यक था। चौधरी साहब भी जिमनेज़ियम में अपनी क्लास पूरी करने के बाद आते थे।

हम पाँच-छः नौजवानों से, जो जिम्नेस्टिक्स के बहुत शौकीन थे, चौधरी साहब काकोरी षड़यंत्र केस के नौजवान वीरों की वीरता, उनके साहस, उनकी देशभक्ति और बलिदान की प्रशंसा करते रहते थे, जिसका हमारे दिमाग़ पर गहरा असर पड़ता था। हम लोगों ने भी प्रतिज्ञा की कि हम भी अपने देश के लिए अवश्य कुछ करेंगे। मैंने और मेरे निकटतम साथी श्री रणवीर गहलोत ने यह निश्चय किया कि हम अपना सम्पर्क क्रान्तिकारी दल से अवश्य करेंगे। हमने अपना यह निश्चय चौधरी साहब को बताया तो पहले तो उन्होंने हमें बहुत समझाया कि हम ऐसे ख़तरनाक काम में न पड़ें, पर जब हमारा दृढ़ निश्चय देखा तो वादा किया कि वह तो स्वयं गाँधीवादी हैं, परन्तु भूले-भटके से यदि कोई क्रान्तिकारी उनके पास आया तो वह अवश्य ही हमारा परिचय उससे करा देंगे।

भाग्य से हुआ भी यही कि चौधरी साहब की धर्मपत्नी सत्यवती स्नातिका की बहन दीदी सुशीला, जो क्रान्तिकारी दल की प्रसिद्ध सदस्या थीं, मेरठ आयीं और उनके साथ एक प्रमुख क्रान्तिकारी भी था। इस अवसर पर मेरा परिचय ऊँचे क्रान्तिकारियों से करा दिया गया। मैं और मेरे साथी उसी समय से एकजुट होकर गुप्त क्रान्तिकारी संघर्ष में जुट गये।

काकोरी केस के वीरों की वीरता और बलिदान ने हम सबको देशसेवा के लिए बड़ी प्रेरणा दी। काकोरी के वीर सेनानियों की देन भारत को आज़ाद कराने में बहुत महत्त्वपूर्ण है। परन्तु अभी उन शहीदों क सपने का भारत बनना बाकी ही है जिसमें ग़रीबी, बेकारी, भ्रष्टाचार और व्यक्तिगत लाभ के लिए मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण सम्भव न हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

THE LAST STRUGGLE

Major M. H. ALVI (I.N.A.)

[Since the very beginning of the revolutionary movement against British rule in India, the main point of the strategy of the revolutionaries was to inspire the Indian soldiers in the British Army of India to rise in rebellion against the British power at some opportunte time when under compulsion of the inevitable rivalry of Capitalist Imperialist powers, Britain should be involved in some international war. This hope of the revolutionaries was finally realized in the formation of the Indian National Army (I.N.A.) and its struggle under Netaji Subhash Chandra Bose, and as such that was really *The Last Struggle* which, though formally suppressed, was substantially successful.

Without this illuminating article, contributed by Major M. H. Alvi, I.N.A., we are afraid, this *Smriti Granth* (Commemoration Volume) of the exploits of the Martyrs of Kakori Case would have been poorer. — Editor]

IT was a fateful day in June 1941, when Netaji Subhash Chandra Bose, dodging dextrously the British vigilance, crossed the borders of India. That momentous action set in motion a chain of events which, though not perceptible to the common man in India then, were destined to destroy the last bulwark of the British Raj, turn their victory into defeat and bring the epic struggle of the Indian people against Britain, from Plassey to Imphal, to a final and successful end. A farsighted statesman, he was firmly convinced that the British, secure behind a bulwark of armed might, would never relinquish their hold of 'the brightest jewel in their Imperial diadem', and would not be overburdened with any scruples, in the event of a real threat to their security, to crush brutally any unarmed struggle with their armed might. They could exploit and play upon the internal dissension indefinitely. Impelled by his conviction and sustained by his unflinching zeal and undaunted courage, he had launched himself, irrevocably and

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
singlehanded, on the only possible course, with the express object of forging a final blow to the British, in their most vulnerable part, from out of the condition created by the Second World War.

In Germany, after the necessary arrangements, he set about planning that final blow in the shape of organization of the Indian National Army from out of the prisoners of war, while in the East, Sri Ras Behari Bose, a veteran revolutionary living in exile in Japan with whom Netaji was in contact, set about organizing the Indian Independence League, which was later to organize the I.N.A. in Malaya. The 8000 strong army in Germany was known as the German Wing of the I.N.A. or sometimes simply as the Indian Legion.

The British dubbed Netaji a fascist—a collaborator with the Axis. They sought to besmirch his image with a prevailing sentiment against 'nazism'. They dubbed the I.N.A. as stooges of the Axis Powers and opportunists. This tirade from the British could be ignored as malicious and not altogether unexpected. For the benefit of such of our countrymen, who had raised their disdainful eyebrows, the words of Mr. Winston Churchill may be recalled. Speaking in a broadcast to the British nation, soon after Germany declared war on Russia on June 22, 1941, he said that all their previous stand against and objections to the Soviet System of Government remaining unchanged, they have decided to render maximum aid to the Government of U.S.S.R., subscribing to the principle that all those who were fighting against Nazi Germany were their friends.

Netaji was neither a fascist nor an admirer of fascism. Second to none in his love for Freedom and Democracy, he believed that the bondage of India not being different in nature from the bondage of the countries overwhelmed by nazi aggression, only an armed struggle at an opportune moment could lead to the emancipation of the country, and only those nations, who were at war with Britain could help India. He was chiefly concerned with the Struggle for Freedom. He has made it quite clear in the *Proclamation of the Provisional Government of Azad Hind,* the basic document defining the purpose, aims and objects of that government, that the Provisional Government will only act in trust for Indians and after victory it was to be the task of the Indian people, under the leadership of Mahatma Gandhi, to choose the government they proposed to live under.

That he was correct both in his judgement and action, has been borne out by subsequent events which are now history.

The British Viceroy proclaimed India to be at war with Germany on September 3, 1939, without the consent of the Indian people. The Congress High Command, while expressing sympathy with those

nations struggling against Nazi Germany, directed the Congress Ministries to resign as a mark of protest and desired the British Government to clarify their war aims, particularly in relation to India. Beyond an invitation for the major political parties to participate in the War Consultative Committees, no headway was made. The Congress High Command had demanded immediate formation of a Provisional National Government and a clear declaration of Independence. The real British intentions regarding India became quite clear after Mr. Churchill's clarification of the grandiose declaration of the principles agreed upon by the Allied Powers on August 14, 1941 on board the warship *Prince of Wales*. Generally known as Atlantic Charter, the declaration provided for the right of freedom for all the peoples and the right of self-determination. Mr. Churchill soon after explained that the Atlantic Charter did not, in any way, qualify the statement of policy already made regarding development of Constitutional Government in India. He elaborated later that he had not taken over as Prime Minister to preside over the liquidation of the British Empire.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Completely disappointed, the Indian National Congress decided upon non-co-operation and individual *satyagraha*.

The Japanese onslaught from December 7, 1942 led to the crumbling of the British Empire in East Asia in a matter of 147 days, and brought the War to the borders of India. The political situation was now charged with a feeling of insecurity and lack of faith in the ability of the British to defend India. This lent a new edge to the demand for immediate Independence. Indeed, with the cream of Indian Army either committed in the Middle East or held prisoners of war in Malaya, and with only an equivalent of inadequately armed divisions then available in India, the British were in no position to defend India, had the Japanese strategy not envisaged a halt at the Burma border. The British Government had in fact made plans to evacuate India after a feeble resistance, if the Japanese advanced further.

During this critical situation facing India, His Majesty's Government despatched with all due haste the Cripps Mission, who were at Delhi on March 23, 1942, Rangoon having fallen just a fortnight earlier on March 7. The Cripps Mission, however, had nothing to propose beyond the convening of a Constituent Assembly after the War to frame the Constitution of a new Union, being a Dominion owing allegiance to the Crown, and immediate participation of the political parties in an expanded Viceroy's Executive Council to organize the Moral, Material and Military Resources of India.

Now thoroughly disillusioned, the Congress decided to launch the 'Quit India' movement. This set off the British Press in a campaign of hate. Abuses were hurled and accusations were levelled. On the

CC-A. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

morning of August 9, they arrested all the leaders and let loose a reign of terror and brutality. The dazed and unarmed people fought on, non-violently, all over the country. The ruthless suppression of the people, in anything, exceeded the nazi treatment of their subject nations. Although the spirit of the people was not broken, the non-violent struggle in due course of time quietened down. The British, after their savagery, beamed with satisfaction at having solved the Indian problem for the duration of the War.

Their satisfaction was short lived. Now Netaji Subhash Chandra Bose advanced to give battle, this time an armed one and from across the border.

The Provisional Government of Azad Hind declared war on Great Britain and America on October 22, 1943. 'The Last Struggle' started. The Dawn of Freedom was at hand.

After the Japanese breakthrough at Kotha Bharu, two officers of 1/14 Punjab Regiment, Capt. Mohan Singh and Capt. Mohd. Akram, came in contact with one Sardar Budh Singh, a venerable figure in white robes and whiter beard, working for the Indian Independence League with its headquarters at Bangkok. These officers, already politically conscious and ardent nationalists at heart, agreed to strike a blow for the freedom of their country and soon formed a nucleus of like-minded soldiers around them.

The first time I ever heard of the Indian National Army was on February 17, 1942 at Farrer Park in Singapore. Ordered to assemble there, I found the vast field teeming with some 30,000 Indian soldiers and officers. Shortly after, some Japanese, Indian and British officers appeared on the balcony of the stadium building and a quaint ceremony took place. Lt. Col. Hunt of the British Army formally handed over all the Indian prisoners of war to Capt. Mohan Singh, who in a short speech said that the Japanese were fighting their enemy the British, they had no quarrel with the Indians and had sympathy with their aspirations for freedom and that as far as the Japanese were concerned the Indian prisoners of war were free. Thereafter Capt. Mohan Singh announced that he had decided to fight the British and invited all patriotic Indians to join the Indian National Army he was forming. The 50,000 soldiers present there cheered and clapped their hands enthusiastically.

This spontaneous cheering that burst out that day was the most significant thing. This cheering sounded like the Doom of the British Empire. For, the moment the restraint was removed, the inner self of the Army was revealed in an impulsive outburst. The Army was patriotic at heart.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

The deep insight of Netaji was demonstrated once again. He had correctly judged that the bulwark of the British Empire, laboriously built, was really hollow and needed only a blow to crumble. The new awakening, the sweeping political consciousness, with which India was now throbbing under the inspired leadership of Gandhiji, had penetrated into that closely guarded citadel, the British Indian Army. The British did not suspect it at all. Destiny had chosen Netaji to deal that final blow, at the core of that very last redoubt the British had built, in the last ever struggle, which brought about the dissolution of the British Empire and turned the fruits of victory like ashes in their mouth.

The 50,000 soldiers, both officers and men, assembled there at the Farrer Park, were neither cowards nor opportunists They were the elite of the Indian Army, the best fighting material India had. They were tall, sturdy and well disciplined men, trained to perfection in the use of arms. Numerically they were nearly one-sixth of the entire Indian Army. There were men from every province of India, belonging to every religion and every stratum of life.

There were one or two battalions from every proud regiment of the Army. There were the tough Gurkhas and Kumaunies, the Marathas, the men from the 6th Rajputana Rifles, the 7th Rajputs, the 9th Jats, the 10th Baluchs, the 11th Sikhs, the 13th Frontier Force, the 14th, 15th and 16th Punjab Regiments, the 17th Dogras, the 18th Garhwalies and the 19th Hyderabad Regiment, and the grenadiers. There were the battalions of the Native States of Hyderabad, Mysore, Kapurthala, Jind and Bahawalpur. There were Cavalry Regiments and Artillery Regiments. There were the Sappers, Engineers and the Medical Units.

The first impulsive reaction to this representative throng was wild cheering at hearing the name of the Indian National Army. Later, more than half of the prisoners of war in Malaya, some 40,000 men, joined the Indian National Army. It was an *en masse* action and not some dupes falling to temptation.

The men were then marched off to different camps. The first impulsive reaction being over, a period of deep thinking, mutual discussions, and examinations of pros and cons followed. Sardar Budh Singh and Capt. Mohd Akram, having died in an air-crash, the soldiers' meetings were occasionally addresed by Capt. Mohan Singh, who was now G.O.C. of the nucleus I.N.A. The great question before everyone was the soldiers' honour—the oath of allegiance. Soldiers don't change sides. It is simply not done. But here was a call for fighting for the Motherland. Scandalized at the German agression we had fought for

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Poland, France, Belgium, China. We, of course, received very good pay then and led very comfortable lives. What were we then—mercenaries or patriots? Now we were called upon to give up the security of the prisoners-of-war life (with pay and seniority accumulating back in India), and to face the toil, ordeal and hazards of another war, without pay or the standards of life we were used to, with our families in India under British control and dependent upon the family allotments paid by the British, with the tide of war already turning against the Axis since the repulse of German Armies from before Moscow, with the chances of an Allies victory adjudged as 6 : 4, and with chances of La Belle Gallows greeting those who survived the war, not altogether overruled, the general prospects were not rosy.

But there was a prompting of the heart, an indescribable yearning to take up arms against the hated foreigners and while intellect pointed to the other course the leaning of heart tilted the balance. Then there were other questions : Could we trust the Japanese? Would the Indian people appreciate our action? Those who take the risk decided to join the I.N.A., if they could be satisfied on this last point. Those who were 'worldly wise' took their stand on Technical Allegiance to the Crown. Nearly half of the prisoners of war did not join the I.N.A. It was an entirely voluntary Army and no one was coerced to join it, as some tried to assert to curry favour with their British masters in 1945.

In March 1942 the senior officers in a meeting at Bidadhari camp considered the situation and passed the famous Bidadhari Resolutions, one of them being that any definite action against the British should be taken only when some indication from the Indians inside India was received that such action was not to their disliking.

In July 1942 a Conference of Indians residing in South-East Asia was held at Bangkok under the presidentship of Sri Ras Behari Bose. Some 110 delegates, representing the three million Indians residing in Thailand, Malaya, Burma, Java, Sumatra, Borneo, Celebese, Japan and Shanghai, attended the Conference. About 60 to 70 resolutions were passed. A Council of Action with Sri R. B. Bose as President and Gen. Bhonsle, Gen. Mohan Singh, Col. Gilani, Mr. Raghavan, Mr. Goho and Mr. K. P. K. Menon as Members. Two of the resolutions were :

1. "Resolved that the Indian National Army shall be made use of only —
   (a) For operations against the British or other Foreign Powers in India,
   (b) For the purpose of securing and safeguarding Indian National Independence."

2. "Resolved :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(a) That India shall be considered as one and indivisible,

(b) That the activities of the movement shall be on a national basis and not on sectional, communal or religious basis."

Then came news about the 'Quit India' movement in August 1942. It set at rest the inner turmoil and doubts. A movement of this nature, as its title implies, and at a time when the Japanese were at the gates of India, was interpreted to express the view of the Indian leaders that once the British quitted, India could deal with the Japanese, with whom India had no quarrel. The bulk of the I.N.A. officers and men made their final decision influenced by the Quit India movement.

The Indian National Army formally came into existence with effect from September 1, 1942, with Capt. Mohan Singh as General Officer Commanding and Gen. Zaman Kiami as Chief of the General Staff.

The strength of the Indian National Army at this stage was 40,000 men, all of them fully trained. There was a large number of very competent senior officers. Out of the ten Sandhurst trained officers called K.C.O.s present in Malaya then, six joined the I.N.A. There was no shortage of I.C.O.s trained at I.M.A. Dehra Doon. There was however a shortage in Junior Officers—the platoon commanders. To meet this shortage an Officers Training School was opened at Neesoon. The K.C.O.s and some of the I.C.O.s could handle Divisions and Brigades straight away. Some of them could handle Army Corps and even Armies.

The I.N.A. consisted of a Field Force under the Command of Col. S. M. Husain, which comprised of No. I, No. II and No. III Infantry Regiments, an Armoured Fighting Vehicles Battalion, a Heavy Gun Battalion, an Engineering Company, a Signal Company, an M.T. Coy. and a Medical Company, in addition to a 'Sherdil' Guerilla Group which comprised of No. I Guerilla Brigade (Gandhi Brigade), No. II Guerilla Brigade (Azad Brigade), and No. III Guerilla Brigade (Nehru Brigade). There was a Special Service Group, an Intelligence Group, a reinforcement Group and the different Base and other Hospitals. The I.N.A. Headquarters had its own Military Police under the D.M.P., a legal section under D.A.G., which drafted the Indian National Army Act, and an Enlightenment and Culture Department which controlled four Broadcasting Stations, a newspaper and a cultural party. The spirited I.N.A. songs and the famous I.N.A. band under Capt. Ram

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Singh are the surviving relics of this Department.

The I.N.A. was an entirely voluntary force and quite independent of the Japanese Army. It had its own flag (being the flag of the Indian National Congress), its own Army Act, its own uniform and distinctive badges of rank, its own system of training, its own Military Police and Jail for offenders. It was completely officered by first class Indian officers. It carried the arms which were used in the Indian Army.

The I.N.A. was not a paid Army. Only a small amount was paid as pocket money in a graduated scale from Rs. 45 to a Sepoy to Rs. 220 to a General. I remember that as a Captain I received Rs. 80 as pocket money and this barely sufficed to purchase soap, hair oil, razor blades and tooth paste. The rations for the prisoners of war and I.N.A. were the same, namely, rice, dal, fish and red palm-oil. If anyone could, of his own, procure a few slices of cucumber and some pieces of onion, he was regarded a fop—a nawab.

For purposes of liaison between the Indians and the Japanese the latter had set up a department known as Hikari Kikan.

Then there came the rumblings of a crisis in December 1942. Differences arose between Gen. Mohan Singh and Sri Ras Behari Bose and the Japanese. Gen. Mohan Singh, a very brave man, was young and impetuous. Having taken such a momentous action, he was sensitive to his honour. He could not stand anything even remotely resembling Japanese interference or disregard of the understanding arrived at. The Bangkok resolutions were not yet ratified and the I.N.A. was not yet recognized. It came to his knowledge that the Japanese were using some Indian ack-ack-gunners in some island. These gunners were prisoners of war, not I.N.A. men, but it was against the clear understanding. Matters came to a head with the arrest of some I.N.A. officers by the Japanese. Sri Ras Behari Bose, an old man now, tried to restrain Gen. Mohan Singh, who wanted to deal with the Japanese with a firm hand. Sri Ras Behari Bose then decided to remove him from the command of the I.N.A.

I was present in the quadrangle at Bidadhari camp where all officers were required to assemble on that day in December 1942. Soon a cavalcade of cars arrived with 15 to 20 Japanese officers headed by Gen. Iwaguru. The General in a short speech announced that acting under orders of Sri Ras Behari Bose, they had arrested Mohan Singh and they hoped that the movement will carry on. The reply of the I.N.A. officers was characteristic. They said nothing, but with one accord they raised their hands to their shoulders, removed their badges of rank, and placed them in their pockets and then, without saluting,

turned their backs and left the quadrangle. With that gesture they announced that the I.N.A. was at an end, and that they stood behind Mohan Singh, who had the guts to fight against the Japanese, and were not willing to follow any other man in East Asia. The Japanese were stunned. Throughout their meteoric career they had never come across such defiance.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

A secret fear had always clutched at our hearts that the Japanese might exploit the I.N.A. But having renounced the technical allegiance to the crown, we had staked life itself; and that decision, through some process of functioning of the brain obscure to us, had generated a measure of courage, we were not aware before that we possessed, and we always felt confident to deal with the Japanese if need be. Now the time had come and the rank and file of I.N.A. showed a determination that shook the Japanese.

All persuasions, cajolry and threats having failed and the I.N.A. officers and men being prepared stoically to face the consequences, Sri Ras Behari Bose and the Japanese realized that the troops will not follow any other leader. It was made clear to them during the individual interviews Sri Ras Behari Bose had with some of the officers, that our decision to fight against the British remaining unaltered, we will do so only if Netaji Subhash Chandra Bose led us in person and not otherwise. Netaji was then contacted, and although it was not announced, but soon a rumour got afloat that he was coming to the East.

An Administrative Committee was formed and things continued half-heartedly till July, 1943. The episode of the dissolution of the first I.N.A. is a glorious chapter in the history of the I.N.A., as it demonstrated that the I.N.A. was not prepared to work according to the wishes of the Japanese and was capable of resisting them.

It must be understood that the Japanese had an object of their own in helping the I.N.A. They wanted a Free India with a friendly or neutral Government so that the Burma front could be secure from a counter-attack and they could withdraw their troops from Burma for fighting in the Pacific.

Then on July 2, 1943, everyone was electrified to hear that Netaji had arrived to lead the I.N.A. A load of anxiety was lifted from every heart. While we accepted personal risks, all political responsibility was now his—a recognized leader and patriot, an ex-President of the Indian National Congress. Our role now was, what the soldiers like best, implicit obedience.

Under his dynamic leadership the movement was now elevated to a much higher plane. After a whirlwind tour of the principal areas

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

where Indians resided and taking stock of the situation, he, on October 21, 1943, in a largely attended meeting of the Indian delegates from all parts of South-East Asia, proclaimed the formation of the *Provisional Government of Azad Hind* and announced the names of the Ministers. I remember the poignant moment when he, with tears flowing down his cheeks, took the Oath of Allegiance himself and administered it to others. Later, bulk of the three million Indian population was to take the Oath of Allegiance to the new Provisional State, which was soon recognized by the Governments of Germany, Japan, Italy, Manchuria, Phillipines, Indonesia, Thailand, Burma and Croatia.

The Provisional Government of Azad Hind declared war on Britain and America on October 22, 1943. He made the Japanese to cede the Andaman and Nicobar Islands which were renamed as Swaraj and Shaheed Islands. In March 1944, at a ceremony at Port Blair, the Islands were formally handed over by Admiral Ishi Kawa to Gen. Lokanathan in my presence. I was on his staff. He made the Japanese agree that all the territories liberated were to be taken over by the Provisional Government of Azad Hind, and he raised an Azad Hind Dal to administer such areas. He appointed Gen. Chatterjee as Governor-designate of such areas. In fact some 200 sq. miles of liberated Indian territory was thus governed by the P.G.A.H. He mobilized the moral and material resources and established an Azad Hind Bank to handle all finances. He made arrangements for the printing of Currency and Stamps. He approved a National Anthem of the P.G.A.H. He reorganized the Army into three Divisions and an independent Brigade. He assumed personal command of the Indian National Army.

The Indians in South-East Asia and the I.N.A. now had a new and quite legal status. The officers and men of the I.N.A. were now the Armed Force of the Provisional Government of Azad Hind, a State established and proclaimed and recognized, having territory, subjects, a Civil Government, with well defined objects and a National Flag of its own. The I.N.A. now had belligerent rights.

A good number of officers and men of the previous I.N.A. did not join the new I.N.A. under Netaji on the alleged grounds of their continued mistrust of the Japanese. Such officers were allowed to revert to the status of prisoners of war. While it is not fair to question their motives, it must be observed that the turn in the tide of war was now obvious even to a child. Germany had suffered the biggest ever defeat at Stalingrad and was being pushed out of Russia. Italy was knocked out of the War with Mussolini a prisoner. The Japanese had lost half of their navy and had lost Gaudal Canal, Gilbert, Mari-

Sri Aurobindo Ashram Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ana and Sol Agam Islands and their base at Kabadi was destroyed in the American offensive. The war production of the Allied factories was assuming unprecedented figures, while the Axis factories were being shattered. It was only a matter of time that the Allies were to emerge as victors. Those who had opted to fight under Netaji Bose in October 1943 knew it perfectly well (though it was not discussed) that it was a losing battle. Yet they were anxious to strike a blow for the Motherland though death stared them in the face.

The towering personality of Netaji soon eclipsed all other figures in South-East Asia. Tall, handsome and graceful, he looked every inch a soldier—a Supremo. His face had become a symbol of the will of his people. Genius of Bengal crowned his brow. His presence enthused confidence and inspired action. Officers and men of the I.N.A. looked at him and lost their hearts. Dismayed officers found that he outdistanced them in his knowledge of military affairs and strategy. He could keep his back as straight under enemy fire as the bravest of the soldier. Death held no terror for him. When informed of a warship threatening the submarine he was travelling in from Germany, he resumed reading the book in his hand. A somewhat perturbed Maj. Swami pointed out the imminence of danger and received the reply that if time was short, why waste it. He treated the arrogant Japanese Generals with scant ceremony and kept them waiting his pleasure in the ante-room. He refused to see Mr. Hashiya, the Japanese Ambassador to the Provisional Govt. of Azad Hind until he had procured his credentials. During the retreat he chose to march 200 miles on foot with his soldiers, including Rani of Jhansi Regiment, for whom he felt particularly responsible, and shouted at the Japanese General Shenda who had brought a car for him, "Do you think I am Baw-Maw of Burma to run away and leave my men in the lurch?" Such was the leader who inspired the I.N.A. in the Last Struggle.

Netaji organized the manpower in East Asia, raised several battalions for the training of civilian recruits at Singapore, Kuala Lampur, Serem Ban, Batu Pahat and Shanalei. I was given the command of the battalion at Serem Ban.

The I.N.A. started moving towards the front in December 1943. First to move was the Independence Brigade known as Subhash Regiment under its gallant commander Gen. (then Col.) Shah Nawaz. Sometime later started the move of No. I Division under the command of Gen. Zaman Kiani. No II Division under Col. Aziz Ahmad arrived in Burma still later. While No. III Division was being grouped under the command of Gen. Nagar, Netaji moved his advance

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
Headquarters to Rangoon.

The I.N.A. and its allies the Japanese crossed the border of India on March 22, 1944, towards Imphal, and on March 31, towards Manipur. A proclamation was issued by Netaji Bose to the I.N.A. that the final hour had arrived and the soldiers were urged to *Do or Die*. At the same time a proclamation was issued by Lt. Gen. Kawabe to the Japanese Army urging them to fight the British and not the Indians and that all territory and booty was to be handed over to the Provisional Govt. of Azad Hind.

The general war position had changed by now. Japan was on the defensive and her best troops and bulk of the air-force was drawn for the Pacific War. There were only seven Japanese and two I.N.A. Divisions which fought this war, while the Allies had large numbers and poured troops into India and had formed the South-East Asia Command under Field-Marshal Lord Mountbatten.

The I.N.A. and Japanese troops started operations in the Arakan area and Haka-Falam line in the Chin hills. Pallet, Tiddim and Fort White were captured in April 1944. The force under the command of Shah Nawaz, had an independent task, and he pierced the Kohima Road and cut the British line of supplies. The Japanese besieged Manipur but could not capture it, as the British had moved an air-borne African Division into the town while no Japanese reinforcements were at hand. Fighting continued from March to June 1944. Fierce I.N.A. and Japanese counter-attacks were launched on May 8, 1944 in Kohima area. By now early monsoon had settled in, making operations difficult. Then a threat developed in the rear from the combined U.S. and Chinese Troops.

During the period 200 sq. miles of territory was liberated and was administered by the Governor-designate Gen. Chatterjee. When the I.N.A. troops captured a small town Mawdok inside India, they threw themselves on the ground and reverently put the soil of India on their heads.

On April 22, 1944 the Americans started air-lifting large forces and dropped them 200 miles behind to effect a junction with the Chinese forces. This combined U.S.-Chinese Force, under Gen. Stilwell, advanced towards Mytkyina and by May 21, was in possession of one-third of the town. Here Japanese offered tough battle and it was not till August 4, that the U.S.-Chinese Force completely occupied Mytkyina. A part of Gen. Stilwell's large forces had bye-passed Mytkyina and continued downward drive and had captured Malakwang on June 1 and Kamaing, the Japanese supply base, on June 17. After the capture of Mytkyina being completed, the U.S.

Chinese Force captured Bhamo on November 23, in Central Burma.
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

The I.N.A. was not involved in this fighting, but these developments in the rear had obliged the I.N.A. as well as the Japanese to pull out of Assam by June 20, the more so as the British had launched an offensive lower down, which eventually led to the capture of Toungoo, the rail-head, on August 11, while another force of East-African troops was moving towards Kalewa, which was captured by November 11.

Thus getting surrounded on all sides by numerically superior British, American, Chinese and African forces, the No. I I.N.A. Division, which was operating in Mandalay, Meiktila withdrew gradually toward Pynmama, to avoid getting trapped.

By now the I.N.A. had suffered considerable casualties. No. II Division had moved from Prome to Kyauk Padaugn in January 1945. Commander Col. Aziz Ahmad being injured in an air-raid, the command was given to Gen. Shah Nawaz in February. The British crossed the Irrawadi river on February 16, overwhelming the Japanese, making the position of Col. Dhillon's Brigade precarious. He managed to extricate himself but not without much loss. On February 24, the enemy tanks broke through at Seiktin. The Japanese Kanju Regiment took up defensive position across Kayauk Padaung-Myngyian Road and Col. Sehgal's Regiment took over the defence of Popa Hill area. The fighting in this area continued till April 28, when Col. Sehgal, having reached the last stage of endurance, surrendered and General Shah Nawaz was also captured about that time near Pegu. The 14th Army of Gen. Slim took over Rangoon on May 4, 1945, six days after Sehgal's surrender.

The I.N.A. was in action from March 1944 to April 1945, against very heavy odds and under very difficult circumstances. Short of transport, some regiments marched 2000 miles druring the course of operations. Men carried their ration of rice on their backs and supplement it with wild roots and other edible stuff locally available. There have been times when surgical operations on the wounded were performed with razors without anesthesia. Without drawing pay, with their families in India, and fighting under austerity conditions, only their love of freedom sustained them.

Nearly 4000 I.N.A. dead lie in nameless graves or their scattered bones lying about.

The second Atom Bomb, dropped on August 8, 1945, compelled Japan to surrender. The Provisional Govt. of Azad Hind surrendered on August 6. The Americans and the British emerged victorious.

The I.N.A. officers and men, who survived the War and had

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
belonged to the British Indian Army, were now facing to face with the charge of treason punishable with death. The situation was grave indeed, but no one was unduly worried. In the camps the even tenor of life went on as usual. Officers and men talked, played and sang and no one's appetite seemed to be impaired.

On August 14, I was invited to dine with Netaji at Raffles Palace. I had returned from the Andamans on August 3 and it was his custom that officers coming back from far off stations were invited by him. Lt. Sube Singh and Lt. Iqbal, also back from Port Blair, were with me. Dressed in a light cream coloured summer suit he smoked almost continuously from a tin of Craven-A, talked graciously and listened with attention. That day I received some inkling of his mind.

I asked him about the mystery then surrounding Hitler's death. He said :

> "A man alive is always better than a dead man, *but mentality of that man was such that he may not have cared to survive the issue.*"

A fleeting thought crossed my mind that Netaji might be thinking of going in hiding to carry on the fight in the future. When I said that with this defeat all hopes for India's freedom were over, he replied emphatically :

> *"No, no. India will be free soon.* There is a fresh combination of favourable circumstances. *The I.N.A. struggle will also influence the issue. The I.N.A. stands victorious in its defeat.* Britain has now ceased to be a World Power. Britain now goes down as the *49th State on the star-spangled banner."*

The expressions printed in *italics,* above, were actually used by him, and have clung to my memory, the other words are mine to express what he said. The sequence of sentences is also mine.

I gathered an impression that he was satisfied with the result as he was not expecting a military victory. He felt satisfied that this struggle was to influence the course of events to follow.

On August 19, we heard about the air-crash at Taiwan. I don't recollect that anyone was worried. A similar news had appeared about the death of Dr. Baw-Maw of Burma in a plane-crash. A few days later appeared the news of the death of Wang Cheng Wei, head of the State of Manchuko, also in a plane-crash. We concluded that the Japanese had staged a uniform pattern of disappearance of the three heads of State. Baw- Maw and Wang Cheng Wei later reappeared on the scene alive. I had written a letter to the Khosla

Commission, through the Govt. of Uttar Pradesh, requesting that files of *Syonan Times* for August 1945 may be consulted.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Our friends in the Indian Independence League and others were sorry for us and very sympathetic. The I.N.A. had built a memorial for its dead, on the seaside in front of the Municipal office. The British blew it up, but the local Indians daily placed flowers on it. They had bravely sacrified shoulder to shoulder with us. It is a matter of gratification that the life, honour and property of the Indians in South-East Asia remained safe during the brutal Japanese occupation. Netaji had left strong contingents of the I.N.A. all over to protect Indians during the period the British could re-establish their authority. Col. Arshed was the virtual Ruler of Rangoon for seven days with his 6000 men, as there was no legal government in existence in Burma then.

Late in September 1945 the British forces occupied Malaya and the officers and men were taken prisoners for a second time. All the records, under orders of Netaji, were left intact and were taken in possession by the British. Enquiries regarding the I.N.A. were started by a special department known as C.S.D.I.C. under Major Hugh Toys. They guarded the prison camps with British troops, barbed wires and searchlights. I, along with some 400 other officers and men, was removed to the Reformatory Jail, guarded by a company of British paratroopers under the command of Lt. Whinrey. Detailed interrogations were made and statements of every man was recorded. This department later framed charges against those who came up for trial.

Maj. Hugh Toys, being in possession of the fullest history, wrote a book about the I.N.A., after his retirement from the Army. The name of the book, if I remember correctly, is *The Spring of the Tiger*. The I.N.A. Flag had a tiger on it instead of 'charkha'. This book, though harsh against the I.N.A., is nevertheless a very accurate record. The book is not readily available in India.

In the Reformatory Jail, a peculiar incident occurred. Lt. Whinrey asked me, being Adjutant, as a matter of internal arrangement, to see that the kitchens were separated into a Hindu kitchen and a Muslim kitchen. To my objections he gave rude replies and arranged for extra utensils. I passed the orders of the captors to the men. Next day, at meal time, Lt. Whinrey arrived to see if his orders were obeyed. A shock awaited him. The men having drawn their food in plates stood in two lines facing each other. Then suddenly the lines advanced towards each other and mixing the plates Hindus and Muslims started eating from out of the same plates. This was certainly

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

not the custom in the I.N.A., but it was the custom in the man chose to give to Whinrey. How he stamped his feet and swore and marched away, I had no inkling about it at all, but my heart swelled up with pride.

I never heard of any communal question in the I.N.A. Netaji dealt with the problem in the only possible way it should be dealt, i.e., by leaving it alone. Time has already brought about National Integration and has welded the Indians into one Nation with a common outlook, reactions, values, habits, customs and character. People who rub shoulders daily love, respect and trust each other and are not conscious of a communal question unless someone raises it. There were the British who raised it before and there are self-seeking persons who raise it now. In the I.N.A. there was none to raise the question.

While at the Reformatory Jail we heard about the famous trial of Shah Nawaz, Sehgal and Dhillon, which lasted from November 5 to December 31, 1945. We avidly read the details from newspapers smuggled into the jail. We had not imagined our trial to be held at Delhi. We expected to be summarily tried and executed where we were captured, and as the C.S.D.I.C. had recommended. But the British were then very strong, with two and a half million men in the Army, all their enemies crushed and the internal situation absolutely under their control. They decided to hold the trial at Red Fort, perhaps with a mischievous consideration to the I.N.A. slogan, *'Chalo Dilli'*. They imagined that the I.N.A. will stand condemned in public eyes as Jap stooges, but it turned out to be just the reverse.

Before the trial few people in India knew anything about the I.N.A., as the radio and news media being under British control all news relating to the I.N.A. was censored. But as the trial proceeded and the story of the I.N.A. unfolded itself, the public imagination was gripped and unprecedented enthusiasm was generated throughout the length and breadth of India, affecting all sections of society, including the two and a half million strong Army. The nature and magnitude of the movement, so far kept hidden from public eyes, released an emotional outburst of feeling which was most powerful as it was concentrated. Like an avalanche it swept away the British Empire, in the moment of their victory. Such are the ways of Providence.

I quote Pt. Jawaharlal Nehru's words below :

> "No trial in India ..... has attracted so much public attention ..... but behind the law there was something deeper and more vital, something that arrested the subconscious depths of the Indian mind. Those three officers and the I.N.A. become symbols of India fighting for her independence. All minor issues

faded away, even the personalities of the three men, being tried for an offence involving a death sentence, became blurred in that bigger picture of India. The trial ..... in reality became trial of strength between the WILL of the Indian People and the WILL of those who held Power in India. ..... But the triumph was that of the Indian People as a whole, Civil and Military, who had pronounced Judgement already and their verdict was too strong to be ignored.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"Eighty-eight years ago, another trial was held at this Red Fort, the trial of the last of a great line. That trial put a final end to a chapter of India's history. Was this second trial ..... to mark the end of another chapter? Surely it is a presage to that end."

Prophetic words those. The sudden upsurge of national feeling shook the British Raj—powerful as it was. There was Mutiny in the Navy and lot of bloodshed. There was trouble in the Royal Indian Air Force at Madras and there was trouble in the Police at Patna—grave and unheard of events which were like the heavy raindrops which precede a downpour. The British ascertained the feeling in the Indian Army and their hearts failed. The two and a half million Indian Army, having been out of the country, had its vision broadened, and now inspired by the I.N.A. and face to face with its own demobilization, was restive and had a definite feeling for the Independence of the country. The last bulwark of the British Raj had now turned to a virtual besieging force, and, competently officered, it was now different from 1857-58. The British nation was war-weary and nearly bankrupt. It also lacked moral support as the 'Quit India' Movement had loaded the world conscience with a sense of guilt. Hugh Toys, in his book, *The Spring of the Tiger,* writes that the Viceroy of India made a report to His Majesty's Government that India was throbbing with a new awareness and it was no more possible to curb it than to silence the engine throbbings of a liner by beating the decks with a cane.

The British were now convinced that they could not now crush any widespread struggle with their armed might and decided, in earnest, to throw up the sponge.

On August 15, 1947, the 'last post' was sounded on the British Raj amongst a general lowering of the Union Jack and the breaking out of the proud Tricolour from the flagmasts.

Netaji's vision was fulfilled. From the ashes of defeat of the Indian National Army rose the Phoenix of Victory. ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

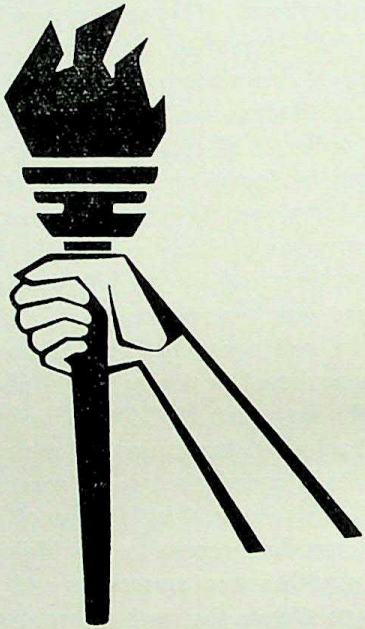

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों का एलान

[काकोरी शहीद अर्धशताब्दी समारोह में १९ दिसम्बर, १९७७ को लखनऊ में सम्मिलित स्वतंत्रता सेनानियों ने सर्वसम्मति से यह घोषणा की ।—सं.]

अंग्रेज़ी साम्राज्यशाही के पदार्पण के साथ ही हमारे देश में ग़ुलामी के विरुद्ध छिटपुट विद्रोह आरम्भ हो गया था । सन् १८५७ में बड़े व्यापक और संगठित रूप में प्रथम जन-क्रान्ति का बिगुल बजा । ब्रिटिश सेना के भारतीय सिपाहियों ने विद्रोह किया, अनेक स्थानों पर संगठित जनता का सहयोग और समर्थन मिला। हमारे सूरमा सिपाहियों ने बन्दूकों-संगीनों के बल पर अंग्रेज़ अफसरों और शस्त्रागारों, बारूदखानों पर अधिकार कर लिया, तो जनता ने भी अपना संगठन बनाकर आज़ादी की घोषणा कर दी । इस इन्क़लाबी सैलाब में धर्म-सम्प्रदाय, जात-पाँत, ऊँच-नीच की सब दीवारें ढह गयीं। सबकी मंजिल एक—मुल्क की मुकम्मिल आज़ादी। सबका मकसद एक—हिन्दुस्तान में हिन्दुस्तानी सरकार। मंगल पाण्डे और मौलवी अजीमुल्ला, लक्ष्मीबाई और बेगम हजरत महल, ताँत्या टोपे, मौलवी अहमदउल्ला शाही और एक बड़ी संख्या में सेना के सिपाहियों, स्वतंत्रता-कामी जनता के हिन्दू-मुसलमानों का खून एक साथ मिलकर प्रवाहित हुआ क्रान्ति के समर में ।

१८५७ में आज़ादी की लड़ाई विफल हो जाने के बाद भी क्रान्ति की चिनगारियाँ देश में सुलगती रहीं। १९०५ में बंग-भंग के विरुद्ध जन-संघर्ष में नौजवान क्रान्तिकारियों ने अगुवाई की । लोकमान्य तिलक का अमर आह्वान "स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है!" देश में गूंज उठा । प्रथम विश्व युद्ध (१९१४–१८) और साम्राज्यवादी विश्व का विभाजन, रूस की महान जनक्रान्ति की सफलता, समाजवादी सत्ता का उदय, उपनिवेश में मुक्ति आन्दोलनों का सैलाबी रूप—सबका संयुक्त प्रभाव हमारे देश के जन-जन में नयी आशाओं, नये अरमानों का उदय। ब्रिटिश हुकूमत बौखला गयी । पुराने दमन के सब शिकंजे—सेना, पुलिस, अदालतें, जेल—जन-आन्दोलन को दबाने, कुचल डालने के लिए जब अपर्याप्त हुए तो नये अस्त्र गढ़े गये—प्रेस सेडीशन एक्ट, रौलट एक्ट और नज़रबन्दी कानून। फिर भी जब काम न चला तो जलियाँवाला और बजबज हत्याकाण्ड।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किन्तु आज़ादी की आग शहीदों का खून पाकर और अधिक तेज़ी से भड़कती है।

१९२१ में महात्मा गाँधी के आवाहन पर देश पुनः उठ खड़ा हुआ। नव-प्रभात में आशा की नयी किरणों के साथ नव-जागरण आया। हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद और एकता, देशवासियों का मूलमंत्र बन गया। विदेशी सत्ता के भय और आतंक को इस आन्दोलन ने जनता के दिलों से निकाल फेंका। इसमें ग़दर पार्टी और कामागाटा मारू के साथियों का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। महान शहीद करतारसिंह ने अपना, देश के समस्त क्रान्तिकारियों का, परिचय देते हुए गाया था :

मैं हिन्दी ठेठ हिन्दी, खून हिन्दी जात हिन्दी हूँ।
यही मज़हब, यही फ़िरक़ा, यही है खानदान अपना।।

धर्म-निरपेक्षता का यह ज्वलन्त उदाहरण था। और उधर हमारा तत्कालीन इन्क़लाबी शायर झूम-झूमकर गा रहा था —

मज़हब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना
हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा।

एक अजीब उन्माद, देश की आज़ादी के लिए मज़बूत इन्क़लाबी एकता से हमारा उपवन महक उठा था।

साम्राज्यवादी शासकों के कुटिल कुचक्र भी चले, साम्प्रदायिकता के विषबीज बोये गये, साम्प्रदायिक झगड़ों को उभारने के षड़यंत्रों का आयोजन किया गया, आज़ादी की लड़ाई को हिन्दू-मुसलमान के खून में डुबा देने के लिए।

अब देश के क्रान्तिकारी नौजवानों ने—पंजाब में ग़दर पार्टी और बब्बर अकालियों ने, उत्तर प्रदेश में काकोरी काण्ड के योद्धाओं ने, बंगाल में दक्षिणेश्वर बम केस के वीरों ने, बिहार में देवघर षड़यन्त्र वाले बहादुरों ने, देश के कोने-कोने से आयी क्रान्तिकारी टोलियों ने—अपना जीवन-रक्त देकर क्रान्ति की मशाल जलाये रखी। सिर पर कफन बाँधकर एक टोली आती थी, अपना अर्घ्य चढ़ाकर चली जाती थी। दूसरी उसके स्थान पर आ जाती थी। रामप्रसाद 'बिस्मिल' और अशफ़ाक़उल्ला खाँ की टोली गयी तो उसका स्थान भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद की टोली ने ले लिया। स्वातंत्र्य युद्ध चलता रहा।

उधर १९३० और १९३२ के विशाल जन-आन्दोलन चले। किसानों के लगानबन्दी आन्दोलन, मज़दूरों की बड़ी-बड़ी हड़तालें, कांग्रेसजनों का नमक कानून तोड़ो अभियान, नौजवान क्रान्तिकारियों द्वारा लाला लाजपतराय की मौत का बदला सौण्डर्स बध, बहरों को सुनाने के लिए दिल्ली असेम्बली में बम विस्फोट, चटगाँव में सरकारी शस्त्रागार को लूटकर सरकार को चुनौती और शासन तंत्र को लुंज-पुंज कर देने के लिए मैमनसिंह, ढाका, बारीसाल, अनेक स्थानों पर अंग्रेज़ अफ़सरों को गोली का निशाना बनाया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उधर सरहद की सुर्खपोश तहरीक और पेशावर में २/१८ रॉयल गढ़वाल राइफिल्स के सिपाहियों का विद्रोह, महात्मा गाँधी के नेतृत्व में १९४२ का 'करो या मरो' आन्दोलन और आगे चलकर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में आज़ाद हिन्द फ़ौज का अभियान, बम्बई का नौसैनिक विद्रोह; थल-सेनाओं का बाग़ी सिपाहियों पर गोली चलाने से इनकार--सबने अंग्रेज़ी शासन की रीढ़ तोड़ दी।

काकोरी काण्ड के बहादुरों का एलान था :

> "हमारा उद्देश्य है देश की सम्पूर्ण आज़ादी, बालिग मताधिकार द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की विधानसभा के हाथों में शासन के अधिकार और ऐसी समाज-व्यवस्था का निर्माण जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण सम्भव न हो।"

लाहौर षड़यन्त्र तक पहुँचते-पहुचते साफ़-साफ़ एलान हुआ :

> **"हमारा उद्देश्य हिन्दुस्तान में साम्यवादी प्रजातंत्र की स्थापना, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक सब प्रकार के शोषण का अन्त कर अवाम को सच्ची आज़ादी और खुशहाली पहुँचाना है।"**

लगातार संघर्ष और त्याग-बलिदान की लम्बी परम्परा का निर्माण और निर्वाह करते हुए हमारे देश ने राजनीतिक आज़ादी पायी किन्तु आर्थिक-सामाजिक आज़ादी से अब भी हम बहुत दूर हैं। शहीदों के सपने आज भी अधूरे हैं और आज काकोरी के क्रान्तिकारियों के बलिदान दिवस पर इस आकाश के किसी कोने में अलक्ष्य खड़े हुए हमारे शहीद देश के सभी स्वतंत्रता संग्राम सैनिकों का आवाहन कर रहे हैं : "हमारे सपनों को पूरा करने का भार अब तुम पर है।" और हम सब उन शहीदों की स्मृति में संकल्प करते हैं :

हम तुम्हारे मिशन को पूरा करेंगे साथियो!
कसम हर हिन्दी तुम्हारे खून की खाता है आज!

अस्तु, हम एलान करते हैं कि जीवन की अन्तिम श्वाँस तक—

(१) प्रत्येक प्रकार के शोषण एवं अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध सतत संघर्ष करते रहेंगे।

(२) देश के सभी धर्मों, सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों के अनुयायियों के बीच सदैव एकता के लिए प्रयत्नशील रहेंगे।

(३) देश के पीड़ित, प्रताड़ित, पिछड़े वर्गों, हरिजनों एवं अन्य अल्पसंख्यकों का उन्नयन और उत्थान करते हुए अन्य वर्गों के साथ समाज में समान स्थान और विकास की समान सुविधाएँ दिलाने के लिए प्रयत्नशील रहेंगे।

(४) सामन्ती उत्पीड़न को समाप्त कर, भूमि-सुधारों को लागू कराके, भूमिहीन मज़दूरों को उनके अधिकार दिलाने की लड़ाई जारी रखेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(५) देश की आज़ादी की रक्षा के लिए हम सदा विदेशी पूँजीपतियों के कुचक्रों का विरोध करेंगे जो हमारी राजनीतिक या आर्थिक आज़ादी को कमज़ोर बनाने की कोशिश करते हैं । देश के अन्दर समाज की सुरक्षा एवं सुदृढ़ता के लिए हम सदैव कटिबद्ध रहेंगे ।

(६) देश में समाजवादी समाज की स्थापना का सपना साकार करेंगे।

(७) अपने शहीद एवं दिवंगत साथियों की स्मृति को जिन्दा रखेंगे । उनके आदेश का पालन करेंगे तथा स्वतंत्रता संग्राम के सैनिकों के आत्म-सम्मान की रक्षा हेतु सदैव आवश्यक कदम उठाने के लिए तत्पर रहेंगे।

हमें विश्वास है कि हमारे देश की महान जनता का प्रेम, स्नेह व सहयोग हम सदा की भाँति मिलता रहेगा ।

जय हिन्द !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Presidential Address of

Dr. Bhupendra Nath Dutta

Comrades and Fellow Citizens!

The Indo-Aryans were a freedom-loving people. They resisted every foreign invasion. Rishi Vashishtha's description of the 'Battle of Ten Rajas' is the earliest example of it. The dogged opposition to Alexander's invasion is the second illustration of it.

We have no records of later raids on the North-West Frontier. But if there were raids, there were repraisals as well, as envinced by the Mehrauli Inscription that Raja Chandra, crossing the source of the seven branches of the Indus, conquered Balkh.

But in course of time when in the medieval period, Arab and later-day Turkish invasion took place, the descendants of the Indo-Aryans did not take it lying down. The recent epigraphic records testify that the Indians though defeated yet kept their independent existence. Again, where possible, they have rebelled and have made themselves free.

But in course of time the foreigners and the Indians accommodated each other. There was a synthesis of the interests of the warring groups. The Hindus have served under the Indo-Moslem rulers, and the Moslems have served under the Hindu rulers.

With the advent of the English in India, a new vista opened before the Indians. State after State began to fall before the onslaught of the European invaders. There was consternation in the minds of the people. It is recorded that Madhoji Scindhia wanted to make an all-India combination against British aggression. But for diverse political reasons it did not materialize. Gradually the whole of India fell before the English.

But it is not to be taken for granted that the Indian people accepted their fate meekly. The new vista that opened before the mind of the people was the ushering of a new era. It is said that Raja Rammohan Roy perceived clearly that the cause of this downfall was the wornout medieval notions and institutions. It is also said that he said

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
that the lack of modern knowledge was the cause of this downfall. On this account he sided with Macaulay for the spread of modern knowledge. Strangely, much later Karl Marx in his letter to Federick Engels expressed the same opinion. He said that with the spread of modern education, the Indians would be able to regain their freedom.

Thus with the spread of modern education and the polito-economic change introduced in the country, a new era, the era of Bourgeois-democratic revolution, was ushered in. But this effort was stopped half the way towards progress. The functions of a Bourgeois-democratic revolution were not completed by the British rulers. Again, to the complaint of Engels that the British in India were not overhauling all the debris of medievalism, Marx answered : Have you ever seen the Bourgeoise introducing a complete change in the polity of a country? These utterances are quoted here to show that foreign revolutionaries were also thinking about the problem of India's dependence to foreign rule.

The British did not change the polity of India to make her walk abreast of modern times. They kept her in bondage for imperialist exploitation. Exploitation of the resources of India was the prime necessity of foreign colonial-imperialism. And this policy lasted till the last days of foreign rule.

In the meantime India was not sleeping. The revolutionary process started by Rammohan Roy, though on socio-religious plane, started the ball rolling. A new class began to grow with modern outlook of life. But this class at the beginning was mostly confined to Bengal and Bombay. A new spirit worked on religious and social reform planes. In the meantime, the so-called 'Sepoy Mutiny' broke out. The latest information tells us that it did not come all of a sudden. The sepoys were discontented. The talk of 'greased cartridge' was an eyewash on the part of the rulers to hide the real facts. For various socio-economic reasons, the masses were dissatisfied with British rule. It is from the masses that the Indian soldiery was recruited. The masses were dissatisfied with the conditions in which they lived. They wanted to break the foreign bondage. In the meantime the former ruling potentates were also dissatisfied with the treatment that was meted to them. Thus the masses and the classes joined hands.

The recent Soviet Russian writers have opined that it was a popular mass rising. The peasantry, the artisan classes, the middle class men and even some aristocrats joined in this popular upheaval.

It is a trite saying that this upheaval was not national. No revolution in the world has been national in the sense that all the classes or all sections of the people joined in the attempt. It is always the

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

minority that has worked. We have every justification to call it the First War of INDEPENDENCE from the British yoke.

After the subsidence of this attempt, the newly arisen middle class took the leadership of the national politics. Though the educated class was busy with reformations, yet the ideal of liberty was not lost sight of. The more and more the antagonism grew between the Indian Bourgeoise and the ruling class.

The antagonism began to take shape in various forms. The *Jatiya Mahamela,* otherwise called *Hindu Mahamela,* began to advocate the use of swadeshi goods. It used to hold annual exhibitions where physical feats, national songs were held and indigenous goods used to be exhibited. Along with it, came the groups of Rajnarain Bose, Bankim Chandra Chattopadhyaya and his colleagues, all vowing swadeshi and freedom. Pandit Shivnath Shastri formed a group which took a vow of not serving the Government and to devote one's life to the cause of the Motherland.

At this time Akharas for physical culture were established in different parts of the country. Jogendra Nath Vidyabhushan wrote at the behest of Surendranath Banerjee and the Bankim group, lives of Mazzini, Garibaldi, George Washington and others. His forceful writings inspired the minds of the youth. Then Surendranath Banerjee and Anand Mohan Bose started the 'Students Association' and made Mazzini known to young India. In his fiery speeches on Bengal Vaishnavism and Sikhism of the Punjab, he showed how revolutionary were these movements in their days.

During my itinerary in the country as a revolutionary worker, I met responsible members who avowed that Pandit Ishwar Chandra Vidyasagar used to tell about an armed revolt as the only way left. He used to say: "Go to the jungles and train men for fighting." Similarly Surendranath formed a group and used to send emissaries to the students advising them to prepare for the fight for freedom. Here it should be remembered that after taking of the Dewany of Bengal by the English the Paiks all over West Bengal rose in arms against the English Company rule. Similarly the peasantry rose in North Bengal.

While these were going in Bengal the other provinces were not sleeping. We hear of Kuka movement among the Punjab Sikhs, Phadke's rebellion in Maharashtra, Tantia Bhil's romantic movement. There were disturbances elsewhere as recorded by the ex-civilian O'donell. Again, in the Singbhum district which was then a part of Bengal, the Kols rose thrice under Birshah Bhagan. The Santhals also rose in rebellion.

Then in 1885 the Indian National Congress was founded. The

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
educated middle class joined it. The educated class wanted a public platform from where they could ventilate their grievances. Their eyes turned towards it. Thus the movement for freedom entered a new phase—the phase of constitutional agitation.

But it became a slough of moderatism. Later on, appeared Swami Vivekanand. On his return from America, he lectured in Madras that "Heaven is nearer through football than through Gita, we want men of strong biceps." The French Savant Romain Rolland has said that "the Neo-Vedantism of Swami Vivekanand put new wine in the moribund Indian Nationalism." Truly it did. Then after his demise, Sri Aurobindo came to Calcutta, and found like-minded men such as Barrister P. N. Mittra and Jatindra Nath Bandopadhyaya and students' group there. Thus, the Bengal Revolutionary Party was formed in 1902.

Then began work amongst the students, and bigger men were approached. The strange thing is that during our work we found like-minded groups all over the country either in a moribund state or freshly formed groups with a vigour and spirit of sacrifice. In this way, the Poona and Baroda groups were linked up with Bengal. In Bihar we found a moribund and scattered group whose prominent member joined us. In Orissa, we found the Malika Sampradaya—a religio-political group. Then we linked up with Sufi Ambaprasad's group of the Punjab. At the same time, Chidambaram Pillai of the extreme south, was converted to the cause of freedom by Taraknath Dass, who on his way to Japan stayed with him. Later, the poet Subramanya Bharati began to sing the cause of freedom through poetry. Again, there was Nagpur Jeotmal group which was linked up perhaps with the Poona group. In this way in 1907 the whole of India was being linked up with a network of organizations. Lots of extremist papers were started and in the course of time persecuted. Again a network of organizations was formed in 1915. All these are now parts of history for the freedom of India.

Here, I must say that the Rowlett Report has given lots of false reports. Here I beg to point out that the national revolutionary movement was not confined to the boundaries of India only. The students abroad in Europe and in America worked for the cause. There was the London group, the Paris group, the Californian group. It was the pamphlets sent from California to Lala Pindidas at Rawalpindi that caused him a long term imprisonment in jail. Later, in 1914 the Ghadar Party was formed in California composed mostly of labourers. Then came the World War. The revolutionaries living abroad who had worked for help from foreign countries saw their opportunity. The revolutionary students from the U.S.A. and Germany simultaneously

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

approached the German Government and got response. Thus the Berlin Revolutionary Committee was formed. Similarly, the young Turkish Government gave response to the approach. Then the Committee linked up the revolutionaries abroad and sent news to the revolutionary comrades at home. Then in 1915 Kunwar Mahendra Pratap of Hathras came to Europe. He was invited by the Berlin workers. He came and it was proposed that a mission be sent to Kabul asking the Ameer to move for India's independence with German help. Also, Indian ruling chiefs were asked to strike for freedom. The Kaiser's autographed letters to the King of Afghanistan and to the King of Nepal and the Indian chiefs were entrusted to Mahendra Pratap for safe delivery. Further, the Kaiser gave him an interview, and decorated him with 'The Second Order of the Eagle'.

The question of this interview was raised in the British Parliament. It came out in *London Times* that Lord Curzon, the then Foreign Secretary, had said that "the Indian Anarchists of Berlin had put up an Oudh Taluqdar before the Kaiser as a prince.

Later on, a group grew up in Rajputana. Still later, during World War II the 'Indian Independence League' was formed in S. E. Asia by Ras Behari. Again the revolutionaries were in touch with the revolt of the ratings of R.N.A. by Panna Lall.

On Mahendra Pratap's return from Afghanistan with the autographed letter of the Ameer, who desired friendship with the German Government, the Kaiser gave him another interview at Potsdam, and presented him with a solid framed autographed photo of his. These incidents are narrated here because from interested group, slanders have been heaped on the Berlin workers and their activities and attempt had been made to belittle Mahendra Pratap. Here I should stop and speak about the activities of the revolutionaries. Slander, calumny, persecutions both from the foreign Government and their Indian minions, novel ways of tortures, privations had been their lot. But that is not to be regretted. It is always the fate of a revolutionary. The young student revolutionaries living abroad had made foreign connections. They brought Indian politics in international arena. Sun-Yat Sen then living in Japan helped the revolutionaries. Leon Trotsky, upon receiving a telegram from the Stockholm branch of the Berlin Committee, took up the cause of Indians at the treaty negotiation at Brest-Litowsk and said, England must give the right of self-determination to India, Egypt and Ireland. The fact of this telegram he acknowledged to Mahendra Pratap when he was coming back to Germany in 1917.

The noticeable work of the Berlin Committee was to organize the

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
Indian and the deserting soldiers in Mesopotamia into a National Corps. Later on, the Berlin Committee tried to organize the Indian soldiers who had surrendered at Kut-el-Amara, into a revolutionary army to be marched to India. The German Government promised to equip the Indians. The Turkish Government agreed with the proposal. But ultimately, it was given up on account of the queer behaviour of the Turkish officials, and the German Government finally said that it was beyond the range of practical politics. Thus the first inception of I.N.A. was formed. How the failure of this first I.N.A. was perfected and rewarded with success by Ras Behari and Netaji is now the glorious property of history when the National Flag was hoisted on Indian territory by the National Army.

Here I want to give a rejoinder to the foreign critics like Trotsky who said in one of his books, that the Indian and Egyptian nationalists made a mistake in co-operating with the German Government. But Trotsky conveniently forgot that Lenin and his associates took the help of the same government in coming to Russia to make the Bolshevik Revolution. The extremist Socialists of Germany and elsewhere held up their hands in horror that the Asian Nationalists had worked with the Central Powers. But the British were helping the Polish, the Armenian Committees in their propaganda against the Central Powers. Even Pilsudsky, the later-day Polish dictator, was helped and his men were armed by Germany to fight the Russians.

The European Socialists did not realize that the Asian peoples were fighting for national independence. There was no social struggle, no fight between capital and labour. This I pointed out to Dr. Karl Liebknecht, the founder of the German Communist Party, that "as England is our enemy, England's foe is our friend. We are nationalists." He answered, "I understand that." Further there is no country which has not been helped by other governments in their struggle for freedom.

As regards Hitler, he attacked the revolutionaries. That was window dressing for English consumption! But he in his distress joined hands with the Indian revolutionaries.

Now, I have given a short sketch of the activities of the Indian revolutionaries. There was no difference of communities in this work. But all the facts are not known to the public. Independent India must know the works of her sons and daughters. Hence all news about the fight for freedom must be collected and threaded into a book. Of course there is a pitfall of personal boastings, vain glories and misrepresentations of facts due to group interests or personal motives. Here we must remember the key given by the Great Buddha in ex-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

plaining social phenomena : "discontinuous continuity". What seems to be discontinuous is really continuous in history. The Indian struggle for freedom is a continuous one. Sometimes it is violent, sometimes it is non-violent, sometimes one group is active, then scattered, sometimes the thread is taken up by another group. But all worked for the same goal—Freedom of the Motherland.

Hence we must collect all the relevant facts about the movement and thread them together. We hope the generous public will help in this attempt. It cannot be denied that the revolutionary movement has been a great lever in the fight for independence. It has influenced the country. Hindu and Moslem, Sikh and Parsi, men and women have given their lives for it. I remember and pay my respect to those who have died in various parts of the world for the cause of the Motherland, those whose bones are bleaching the deserts of Mesopotamia and Iran, those who have been burnt and those who have been unburnt, and those who have laid their lives on the gallows.

Let this day of union of the comrades be remembered, let this precious day be remembered.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'THE REVOLUTIONARY'
Quoted in the Kakori Judgement

Present :
The Hon'ble Sir Louis Stuart,
Kt., C.I.E., I.C.S., Chief Judge
The Hon'ble Mr. Justice Muhammad Raza, Khan Bahadur.

Between the 28th and 31st of January, 1925, a four-page printed pamphlet was circulated secretly by post and by hand in the United Provinces and other parts of India. This pamphlet bore the name of no printing press. The heading was "The Revolutionary—An Organ of the Revolutionary Party of India." It was called the first number of the first volume, and bore the date of the 1st January, 1925.

This was the first paragraph :

> " 'Chaos is necessary to the birth of a new star' and the birth of life is accompanied by agony and pain. India is also taking a new birth, and is passing through that inevitable phase, when chaos and agony shall play their destined role, when all calculations shall prove futile, when the wise and the mighty shall be bewildered by the simple and the weak, when great empires shall crumble down and new nations shall arise and surprise humanity with the splendour and glory which shall be all its own."

In continuation it was stated that a new power had come into existence in India, that power being the revolutionary movement amongst young men, which inspite of all opposition would eventually triumph. This movement had withstood repression for twenty years. It was now stronger than ever before, and its prospects were brighter. The writer then proceeded to justify the movement on the ground that India was ruled without justification by foreigners whose authority rested on dominion by the sword. The sword of these foreigners was to be met by the sword of the Indians.

The writer then proceeded to declare the "immediate" object of the Revolutionary Party which was "to establish a Federal Republic of the United States of India by an organised and armed revolution."

Under this Republic there would be universal suffrage, nationalisation of railways, mines, leading manufactures and the shipping industry. The legislature would control the executive. The aims of the Revolutionary Party were stated to be international rather than national "and in this respect it follows the footsteps of the great Indian Rishis of the glorious past and of Bolshevik Russia in the modern age." There would be equal rights for all communities, general co-operation and a spiritual recognition of the realities of life.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

The writer continued that the time was not ripe for the disclosure of the policy and the programme of the Party. The Party reserved to itself freedom to associate or not to associate with the Indian Congress. Then follow the words : "But this Party views all constitutional agitations in the country with contempt and ridicule." After some amplification of this idea came the following passage :

> "Young Indians! Shake off your illusions, face realities with a stout heart, and do not avoid struggles, difficulties and sacrifices. The inevitable is to come. Do not be misguided any more. Peace and tranquillity you cannot have and India's liberty can never be achieved through peaceful and legal means. The following memorable words of a great English author Mr. Robertson may serve to make the wise men of India wiser still:
>
> > 'The movement and programme of reform was mainly the achievement of Irish and Protestant leaders to whom British statesmen had revealed the fatal secret that England could be bullied but not argued into justice and generosity.' *(England under the Hanoverians,* page 197)
>
> "Indian public leaders are still ignorant of this 'fatal secret' or else they are foolishly wise to ignore it."

The writer then proceeded to dispute the accuracy of the view that Indians were unable to drive the British out of India by force of arms. The pamphlet concluded as follows :

> "A few words more about terrorism and anarchism. These two words are playing the most mischievous part in India to-day. They are being invariably misapplied whenever any reference to the revolutionaries is to be made because it is so very convenient to denounce the revolutionaries under that name. The Indian Revolutionaries are neither terrorists nor anarchists. They never aim at spreading anarchy in the land, and therefore they can never properly be called anarchists. Terrorism is never their object and they cannot be called terrorists. They do not believe that terrorism alone can bring independence and they do not want terrorism for terrorism's sake, although they at

time resort to this method as a very effective means of retalliation. The present government exists solely because the foreigners have successfully been able to terrorise Indian People. The Indian People do not love their English Masters, they do not want them to be here—but they do help the Britishers simply because they are ferribly afraid of them—and this very fear resists the Indians from extending their helping hand to the Revolutionaries, not that they do not love them.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"This official terrorism is surely to be met by counter-terrorism. A spirit of utter helplessness pervades every stratum of our society and terrorism is an effective means of restoring the proper spirits in the society without which progress will be difficult. Moreover the English Masters and hired lackeys can never be allowed to do whatever they like unhampered, unmolested. Every possible difficulty and resistance must be thrown in their way. Terrorism has international bearing also because the attentions of the enemies of England are atonce drawn towards India through the acts of terrorism and revolutionary demonstrations and these revolutionaries are thereby able to form an alliance with them, and thus expedite the speedy attainment of India's deliverance. But this Revolutionary Party has deliberately abstained itself from entering into this terrorist campaign at the present moment even at the greatest provocation in the form of outrages committed on their sisters and mothers by the agents of foreign government, simply because the Party is waiting to deliver the final blow. But when expendiency will demand it the Party will unhesitatingly enter into a desperate campaign of terrorism, when the life of every officer and the individual who will be helping the foreign rulers in any way will be made intolerable, be he Indian or European, high or low. But even then the Party will never forget that terrorism is not their object, and they will try incessantly to organise a hand of selfless and devoted workers who will devote their best energies towards the political and social emancipation of their country. They will always remember that 'the making of nations requires the self-sacrifice of thousands of obscure men and women who care more for the idea of their country than for their own comforts or interest, their own life and the lives of those whom they love.'

(Sd) Vijay Kumar
President of Central Council,
The R.P. of India."

(Vijay Kumar was a ficticious name.)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Constitution of
The Hindustan Republican Association

NAME

The name of the Association shall be The Hindustan Republican Association.

OBJECTS

The object of the Association shall be to establish a Federal Republic of the United States of India by an organised and armed Revolution.

The final form of the Constitution of the Republic shall be framed and declared by the representatives of the people at the time when they will be in a position to enforce their decisions.

The basic principle of the Republic shall be Universal Suffrage and the abolition of all systems which make any kind of exploitation of man by man possible.

CONSTITUTION

Governing Body :

The Governing Body of the Association shall be the Central Council composed of the representatives of every province of India. All decisions of the Central Council shall be arrived at by unanimous consent. The Central Council shall be vested with absolute powers.

The principal function of the Central Council shall be to supervise, adjust and co-ordinate the activities in the different provinces of which it shall have full knowledge.

The Central Council shall be in direct charge of the work to be carried on in countries outside India.

Provincial Organisation :

There shall be a committee ordinarily of five (5) men representing the five (5) different departments of the Association in every province which shall regulate all the activities of the Association in the province.

All decisions of the Committee shall be arrived at by unanimous consent.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Departments :

Every Provincial Organisation shall have the following departments :

1. Propaganda.
2. Collection of men.
3. Collection of funds and terrorism.
4. Collection and storage of arms and ammunition.
5. Foreign connection.

1. Propaganda shall be carried on
   (a) by an open and a secret press,
   (b) through private conversation,
   (c) through public platforms,
   (d) through a system of organised Kathas and
   (e) through magic lantern slides.
2. Collection of men shall be done by organisers in charge of different districts.
3. Funds shall be collected generally be means of voluntary subscriptions and occasionally by contributions exacted by force. In extreme cases of repressions by agent or agents of a foreign government it shall be the duty of the Association to retaliate in whatever form it shall consider suitable.
4. Every effort shall be made to arm every member of the Association; but all such arms shall be stored at different Centres and be used according to the directions of the Provincial Committee only.

   No Arms shall be removed from any place in the district or used without the knowledge and the permission of the district organiser or of the officer incharge of this department.
5. Foreign connection : This department shall carry on its work under the direct orders from the C.C.

District Organiser : His duties :

The district organiser shall be in sole charge of the members of his district.

He shall try to start branches of this Association in every part of his district. In order to have efficient recruitment he should keep himself in touch with the different public bodies and institutions in his district.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

The district organisers shall be subordinate in every way to the Provincial Committee, which shall supervise and direct all their activities.

The district organisers must see that the members are divided into separate groups and different groups do not know each other.

So far as possible the district organisers of any province must not know the activities of each other and if possible they must also not know each other by person or by name.

No district organiser shall leave his station without previously informing his superior.

Qualifications of a District Organiser :

1. He must have the tact and the ability to guide and handle men of different temperaments.

2. He must have the capacity to grasp political, social and economical problems of the present day with special reference to his Motherland.

3. He must be able to grasp the spirit of the History of India, with special reference to the particular civilisation which India has evolved.

4. He must have faith in the missions and the destiny of a free India, which is to bring harmony in the different spheres of Human activities both Spiritual and Material.

5. He must be courageous and self-sacrificing without which all his brilliant qualities will have no real value.

P.C. and C.C. members must see that every member of this Association gets full scope and ample opportunity to develop and use his individual abilities, without which the Association will tend to disintegrate.

PROGRAMME

All the activities of the Association shall be divided into two parts : public and private.

Public :

1. To start associations in the forms of clubs, libraries, seva samities and the like.

2. To start labour and peasants organisations. Suitable men must be engaged on behalf of the Association to organise and control the labourers in the different factories, the railways and in the coal-fields, and instil into their minds that they are not for the revolution but the revolution is for them.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
Similarly the kisans must also be organised.

3. To start weekly paper in every province to propagate the idea of an independent Indian Republic.

4. To publish booklets and pamphlets with a view to enlighten the public as to the course of events and current of thoughts as prevalent in the countries outside India.

5. To utilise and influence the Congress and other public activities as far as possible.

Private :

(a) To establish a secret press and through it to publish such literature which cannot easily be published openly.

(b) To circulate such literature.

(c) To establish branches of this Association in every part of the country, district by district.

(d) To collect funds in as many ways as possible.

(e) To send suitable men to foreign countries where they may get military or scientific training so that they may become military or scientific experts to take charge of arms and ammunition factories at the time of open rebellion.

(f) To import arms and ammunition and also to manufacture them, as far as possible, in the country.

(g) To remain in close touch and to co-operate with the Indian revolutionaries outside India.

(h) To get the members of this Association enlisted into the present army.

(i) To enlist the sympathy of the public to our cause by occasional retaliatory measures and propaganda and thus create a band of sympathisers.

Membership :

All members shall be recruited by organisers incharge of different districts in every province. Every member must be ready to devote his whole time for the Association and to risk his life if necessary.

He must obey the commands of the district organiser implicitly.

He should develop his own initiative and remember that the success of the Association depends much on the resourcefulness, the initiative and the sense of duty of its individual members.

He must behave in a manner that may not prejudice the cause for which this Association stands or may not do any harm directly or indirectly to this organisation.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

No member of this Association shall belong to any other organisation without the consent of the district organiser.

No member shall leave his station without informing the district organiser about it.

Every member must try to avoid being suspected of revolutionary connections by the police or public.

Every member must remember that his individual behaviour and mistakes might lead to the ruin of the whole organisation.

No member shall conceal anything from the district organiser as far as his public life is concerned.

Members who will betray shall be punished either with expulsion or death.

The authority of punishment shall rest entirely with "The P.C."

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फाँसी की कोठरी से शहीद के स्मरणीय उद्गार

☐ अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल'

[अमर शहीद पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' ने जो आत्मकथा फाँसी की कोठरी में लिखी थी उसमें उन्होंने अपने साथी अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला खाँ के सम्बन्ध में बहुत ही प्रेरणाप्रद वर्णन किया है, जो यहाँ उद्धृत है। —सं.]

मुझे भली भाँति याद है, जब मैं बादशाही एलान के बाद शाहजहाँपुर आया था, तो तुमसे स्कूल में भेंट हुई थी। तुम्हारी मुझसे मिलने की बड़ी हार्दिक इच्छा थी। तुमने मुझसे मैनपुरी षड़यन्त्र के सम्बन्ध में कुछ बातचीत करनी चाही थी। मैंने यह समझकर कि स्कूल का एक मुसलमान विद्यार्थी मुझसे इस प्रकार की बातचीत क्यों करता है, तुम्हारी बातों का उत्तर उपेक्षा की दृष्टि से दे दिया था। तुम्हें उस समय बड़ा खेद हुआ था। तुम्हारे मुख से हार्दिक भावों का प्रकाश हो रहा था। तुमने अपने इरादे को यों ही नहीं छोड़ दिया, अपने निश्चय पर डटे रहे। जिस प्रकार हो सका, कांग्रेस में बातचीत की। अपने इष्टमित्रों द्वारा इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश की कि तुम बनावटी आदमी नहीं, तुम्हारे दिल में मुल्क की खिदमत करने की ख्वाहिश थी। अन्त में तुम्हारी विजय हुई। तुम्हारी कोशिशों ने मेरे दिल में जगह पैदा कर ली। तुम्हारे बड़े भाई मेरे उर्दू मिडिल के सहपाठी तथा मित्र थे, यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

थोड़े दिनों में ही तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे, किन्तु छोटे भाई बनकर तुम्हें सन्तोष न हुआ। तुम समानता के अधिकार चाहते थे, तुम मित्र की श्रेणी में अपनी गणना चाहते थे। वही हुआ। तुम सच्चे मित्र बन गये।

सबको आश्चर्य था कि एक कट्टर आर्यसमाजी और मुसलमान का मेल कैसा? मैं मुसलमानों की शुद्धि करता था। आर्यसमाज मन्दिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातों की किंचित्मात्र चिन्ता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हारे मुसलमान होने के कारण कुछ घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय में दृढ़ थे। मेरे पास आर्यसमाज मन्दिर में आते-जाते थे। हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा होने पर, तुम्हारे मुहल्ले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के सब कोई तुम्हें मुसलमान कहकर पुकारते थे, काफ़िर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी भी उनके विचारों से सहमत न हुए । सदैव हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के पक्षपाती रहे।

तुम एक सच्चे मुसलमान तथा सच्चे स्वदेशभक्त थे। तुम्हें यदि जीवन में कोई विचार था तो यही कि मुसलमानों को खुदा अक्ल देता कि वे हिन्दुओं के साथ मिलकर हिन्दोस्तान की भलाई करते। जब मैं हिन्दी में कोई लेख या पुस्तक लिखता तो तुम सदैव यही अनुरोध करते कि उर्दू में क्यों नहीं लिखते, जो मुसलमान भी पढ़ सकें। तुमने स्वदेशभक्ति के भावों को भली भाँति समझने के लिए ही हिन्दी का अच्छा अध्ययन किया । अपने घर पर जब माताजी तथा भ्राताजी से बातचीत करते थे, तो तुम्हारे मुँह से हिन्दी शब्द निकल जाते थे, जिससे सबको बड़ा आश्चर्य होता था ।

तुम्हारी इस प्रकार की प्रवृत्ति देखकर बहुतों को सन्देह होता था कि कहीं इस्लाम धर्म त्यागकर शुद्धि न करा लो। पर तुम्हारा हृदय तो किसी प्रकार अशुद्ध न था, फिर तुम शुद्धि किस वस्तु की कराते ? तुम्हारी इस प्रकार की प्रगति ने मेरे हृदय पर पूर्ण विजय पा ली । बहुधा मित्रमण्डली में बात छिड़ती कि कहीं मुसलमान पर विश्वास करके धोखा न खाना । तुम्हारी जीत हुई, मुझमें तुममें कोई भेद न था । बहुधा मैंने तुमने एक थाली में भोजन किये। मेरे हृदय से यह विचार ही जाता रहा कि हिन्दू-मुसलमान में कोई भेद है। तुम मुझ पर अटल विश्वास तथा अगाध प्रीति रखते थे। हाँ, तुम मेरा नाम लेकर नहीं पुकार सकते थे। तुम तो मुझे सदैव 'राम' कहा करते थे । एक समय जब तुम्हें हृदय-कम्प (palpitation of heart) का दौरा हुआ, तुम अचेत थे, तुम्हारे मुँह से बारम्बार 'राम' 'हाय राम' शब्द निकल रहे थे । पास खड़े हुए भाई-बान्धवों को आश्चर्य था कि 'राम राम' कहता है । कहते कि 'अल्लाह अल्लाह' कहो, पर तुम्हारी 'राम राम' की रट थी। उसी समय किसी मित्र का आगमन हुआ, जो 'राम' के भेद को जानते थे । तुरन्त मैं बुलाया गया । मुझसे मिलने पर तुम्हें शान्ति हुई । तब सब लोग 'राम राम' के भेद को समझे ।

अन्त में इस प्रेम, प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ ? मेरे विचारों के रंग में तुम भी रँग गये । तुम भी एक कट्टर क्रान्तिकारी बन गये । अब तो तुम्हारा दिन-रात प्रयत्न यही था कि जिस प्रकार हो मुसलमान नवयुवकों में भी क्रान्तिकारी भावों का प्रवेश हो, वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दें । जितने तुम्हारे बन्धु तथा मित्र थे सब पर तुमने अपने विचारों का प्रभाव डालने का प्रयत्न किया । बहुधा क्रान्तिकारी सदस्यों को भी बड़ा आश्चर्य होता कि मैंने कैसे एक मुसलमान को क्रान्तिकारी दल का प्रतिष्ठित सदस्य बना लिया । मेरे साथ तुमने जो कार्य किये, वे सराहनीय हैं । तुमने कभी भी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की । एक आज्ञाकारी भक्त के समान मेरी आज्ञापालन में तत्पर रहते थे । तुम्हारा हृदय बड़ा विशाल था । तुम्हारे भाव बड़े उच्च थे ।

मुझे यदि शान्ति है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भारत के इतिहास में यह घटना भी उल्लेखनीय हो गयी कि अशफ़ाक़उल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दिया । अपने भाई-बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर कुछ भी ध्यान न दिया । गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचारों में दृढ़ रहे । जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए । इन सबके परिणामस्वरूप अदालत में तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टिनेण्ट) ठहराया गया, और जज ने मुकदमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले में जयमाल (फाँसी की रस्सी) पहना दी । प्यारे भाई, तुम्हें यह समझकर सन्तोष होगा कि जिसने अपन माता-पिता की धनसम्पत्ति को देशसेवा में अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देशसेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन-मन-धन-सर्वस्व मातृसेवा में अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफ़ाक़ को भी उसी मातृभूमि की भेंट चढ़ा दिया ।

'असग़र' हरीमे इश्क़ में हस्ती ही जुर्म है ।
रखना कभी न पाँव यहाँ सर लिये हुए ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्तिम इच्छा : हिन्दू-मुस्लिम एकता

☐ अमर शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल'

(आत्मकथा से उद्धृत)

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली और मेरी इच्छा पूरी होती दिखायी देती है। मैं तो अपना कार्य कर चुका। मैंने मुसलमानों में से एक नवयुवक निकालकर भारतवासियों को दिखला दिया, जो सब परीक्षाओं में पूर्णतया उत्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिये कि मुसलमानों पर विश्वास न करना चाहिये। पहला तजर्बा था, जो पूरी तौर से कामयाब हुआ। अब देशवासियों से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगों क फाँसी पर चढ़ने से ज़रा भी दुखित हुए हों, तो उन्हें यही शिक्षा लेनी चाहिये कि हिन्दू-मुसलमान तथा सब राजनीतिक दल एक होकर कांग्रेस को अपना प्रतिनिधि मानें। जो कांग्रेस तय करे, उसे सब पूरी तौर से मानें और उस पर अमल करें। ऐसा करने के बाद वह दिन बहुत दूर न होगा जबकि अंग्रेज़ी सरकार को भारतवासियों की माँग के सामने सिर झुकाना पड़े और यदि ऐसा करेंगे तब तो स्वराज्य कुछ दूर नहीं, क्योंकि फिर तो भारतवासियों को काम करने का पूरा मौका मिल जायेगा। **हिन्दू-मुस्लिम एकता ही हम लोगों की यादगार तथा अन्तिम इच्छा है, चाहे वह कितनी कठिनता से क्यों न प्राप्त हो।** जो मैं कह रहा हूँ वही श्री अशफ़ाक़उल्ला खाँ वारसी का भी मत है, क्योंकि अपील के समय हम दोनों लखनऊ जेल में फाँसी की कोठरियों में आमने-सामने कई दिन तक रहे थे। आपस में हर तरह की बातें हुई थीं। गिरफ्तारी के बाद से हम लोगों की सज़ा पढ़ने तक श्री अशफ़ाक़उल्ला खाँ की बड़ी उत्कट इच्छा यही थी कि वह एक बार मुझसे मिल लेते, जो परमात्मा ने पूरी कर दी।

श्री अशफ़ाक़उल्ला खाँ तो अंग्रेज़ी सरकार से दया-प्रार्थना करने पर राज़ी ही न थे। उनका तो अटल विश्वास यही था कि खुदावंद करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करनी चाहिये, परन्तु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्होंने सरकार से दया-प्रार्थना की थी। इसका दोषी मैं ही हूँ, जो मैंने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारों का उपयोग करके श्री अशफ़ाक़ उल्ला खाँ को उनके दृढ़ निश्चय से विचलित किया। मैंने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुए भ्रातृद्वितीया के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री अशफ़ाक़ को पत्र लिखकर क्षमा-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
प्रार्थना की थी। परमात्मा जाने कि वह पत्र उनके हाथों तक पहुँचा भी या नहीं। खैर, परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी कि हम लोगों को फाँसी दी जाये, भारतवासियों के जले हुए दिलों पर नमक पड़े, वे बिलबिला उठें और हमारी आत्माएँ उनके कार्य को देखकर सुखी हों जब हम नवीन शरीर धारण करके देशसेवा में योग देने को उद्धत हों, उस समय तक भारतवर्ष की राजनीतिक स्थिति पूर्णतया सुधरी हुई हो। जनसाधरण का अधिक भाग सुशिक्षित हो जाये। ग्रामीण लोग भी अपने कर्तव्य समझने लग जायें।

* * * *

देशवासियों से यही अन्तिम विनय है कि जो कुछ करें, सब मिलकर करें, और सब देश की भलाई के लिए करें। इसी से सबका भला होगा।

मरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफ़ाक़' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रुधिर की धार से॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रान्ति : एक सामाजिक आवश्यकता

☐ प्रिन्स क्रोपाटकिन
(प्रसिद्ध रूसी क्रान्तिकारी विचारक)

मानव समाज के जीवन में ऐसे अवसर आया करते हैं, जब क्रान्ति एक अनिवार्य आवश्यकता हो जाया करती है, जब वह पुकार-पुकार कर कहती है कि वह अवश्यम्भावी है। हर तरफ नये विचार उत्पन्न हो जाते हैं, जो प्रकाश में आकर लोगों के जीवन में लागू होने के लिए जबर्दस्ती अपना मार्ग ढूंढ़ निकालते हैं। जिन लोगों का स्वार्थ पुरानी व्यवस्था को कायम रखने में ही सिद्ध होता है, उनकी अकर्मण्यता इन विचारों का विरोध करती है। तो भी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संस्थाएँ टूटने-फूटने लग जाती हैं। हमारा सामाजिक भवन ऐसी स्थिति में रहने योग्य नहीं रह जाता। जो लोग न्याय की विजय के लिए लालायित रहते हैं अथवा जो लोग नवीन विचारों को काम में लाना चाहते हैं, उन्हें शीघ्र ही यह मालूम हो जाता है कि इस समय समाज जिस प्रकार संगठित है उसमें उनके नवजीवन संचारक विचार सफल नहीं हो सकते। तब उन्हें क्रान्ति की ऐसी आँधी की आवश्यकता दिखलायी देने लगती है, जो समाज के समस्त सड़े-गले अंश को उड़ा ले जाये, जो अपने पवित्र पवन से आलसी हृदयों में स्फूर्ति दे और मानव-समाज में श्रद्धा, आत्मत्याग तथा वीरता के भावों का संचार कर दे।

ऐसे समय शासन संस्थाओं की दशा बड़ी विचित्र होती है। वे सुधार करने में अशक्त होती हैं, क्योंकि खुल्लमखुल्ला सुधार का अर्थ होता है क्रान्ति का रास्ता खोलना। साथ ही वे इतनी नपुंसक होती हैं कि खुले आम सुधारों का विरोध भी नहीं कर सकतीं। फल यह होता है कि वे मामूली सुधार करती हैं, जिनसे सन्तोष उत्पन्न होने के स्थान में और भी असन्तोष बढ़ता है। ऐसे परिवर्तनों के अवसर पर प्रतिभाशून्य व्यक्तियों का, जिनके हाथ में शासन की बागडोर होती है, एक ही उद्देश्य हुआ करता है। वह होता है—भावी महान् उलट-पलट के पूर्व धन बटोरकर अपना घर भर लेना।..... ऐसे अवसरों पर ही क्रान्ति की आवश्यकता हुआ करती है। क्रान्ति एक सामाजिक आवश्यकता हो जाती है। ऐसे अवसर स्वयं ही क्रान्तिकारी होते हैं। ★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे दीवाने

☐ अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी

अनुत्तरदायी ? जल्दबाज़ ? अधीर आदर्शवादी ? डाकू ? हत्यारे ? अरे, ओ दुनियादार तू उन्हें किस नाम से, किस गाली से विभूषित करना चाहता है ?

वे मस्त हैं, वे दीवाने हैं, वे इस दुनियाँ के नहीं । वे स्वप्नलोक की वीथियों में विचरण करते हैं । उनकी दुनिया में, शासन की कटुता से, माँ धरित्री का दूध अपेय नहीं बनता । उनके कल्पना लोक में ऊँच-नीच का, धनी-निर्धन का, हिन्दू-मुसलमान का भेद नहीं है । इसी सम्भावना का प्रचार करने के लिए वे जीते हैं । इसी दुनिया में उसी आदर्श को स्थापित करने के लिए वे मरते हैं । दुनिया के पठित मूर्खों की मण्डली उनको गालियाँ देती हैं । लेकिन यदि सत्य के प्रचारक गालियों की परवाह करते तो शायद दुनिया में आज सत्य, न्याय, स्वातंत्र्य और आदर्श के उपासकों के वंश में कोई नामलेवा और पानीदेवा भी न रह जाता । लोकरुचि अथवा लोकोक्तियों के अनुसार जो अपना जीवन-यापन करते हैं, वे अपने पड़ोसियों की प्रशंसा के पात्र भले ही बन जायें, पर उनका जीवन औरों के लिए नहीं होता । संसार को जिन्होंने ठोकर मारकर आगे बढ़ाया वे सभी अपने अपने समय में लांछित हो चुके हैं । दुनिया खाने, पीने, पहनने, ओढ़ने तथा उपभोग करने की वस्तुओं का व्यापार करती है । पर कुछ दीवाने चिल्लाते फिरते हैं--

"सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है !"

ऐसे कुशल किन्तु औघट व्यापारी भी कभी देखे हैं ? अगर एक बार आप हम उन्हें देख लें तो कृतकृत्य हो जायें ।

('प्रताप' के एक अग्रलेख से उद्धृत)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'बिस्मिल' की आत्मकथा की भूमिका

☐ स्वर्गीय पं. विष्णुदत्त शुक्ल

["भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में अमर शहीद 'बिस्मिल' की आत्मकथा का स्थान बहुत ऊँचा है। फाँसी के तीन दिन पहले उसे क्रान्तिकारी 'बिस्मिल' ने समाप्त किया था। गोरखपुर जेल से वह चोरी से 'स्वदेश' सम्पादक के पास भेजी गयी थी और वहाँ से 'प्रताप' कार्यालय आयी। अमर शहीद गणेशजी के आदेशानुसार स्व. पं. विष्णुदत्त शुक्ल ने उसका सम्पादन किया था।"

क्रान्तिकारियों की स्मृति की रक्षा के महायज्ञ के महान् नेता स्वनामधन्य डा बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा ऊपर उद्धृत टिप्पणी के साथ प्रेषित यह 'भूमिका' हम यहाँ साभार प्रकाशित कर रहे हैं। —सं.]

हिन्दी साहित्य के लिए पं. बनारसीदासजी का अस्तित्व एक वरदान है, विशेषकर इस अर्थ में कि ढूँढ़-ढूँढ़कर वे देशसेवकों और साहित्यसेवियों के जीवनचरित्रों और संस्मरणों से हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि कर रहे हैं। अब तो उन्होंने अपना शेष जीवन अमर शहीदों की चरित्रचर्चा में बिताने का संकल्प ही कर लिया है। उनके इस उद्योग से जहाँ एक ओर साहित्य का शृंगार होता है, वहीं उन शहीदों और सम्माननीय महानुभावों की स्मृति भी ताज़ी होती है। 'एक पन्थ दो काज' वाला चतुर्वेदीजी का यह व्रत निश्चय ही साहित्य के लिए बड़ा मूल्यवान होगा।

चतुर्वेदीजी की प्रेरणा, उनके प्रयास और उनके परिश्रम से शहीद ग्रन्थमाला का प्रथम पुष्प **'अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल की आत्मकथा'** के रूप में सामने आया है। इसका सम्पादन श्री बनारसीदासजी ने स्वयं ही किया है।

चतुर्वेदीजी की कृपा से यह पुस्तक मुझे भी देखने को मिली। इसके सामने आते ही तीस वर्ष पुरानी अनेक बातें याद आ गयीं। सन् १९२८ के मई या जून की बात होगी। एक दिन श्रद्धेय गणेशशंकर विद्यार्थी रास्ते में मिले। पूछा, आजकल क्या कर रहे हो। मैंने जवाब दिया, इस समय तो कोई विशेष कार्य नहीं कर रहा। "तो फिर किसी समय मिलना, तुमसे एक काम लेना है", कहकर वे चले गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं यथासमय 'प्रताप' कार्यालय पहुँचा। अपने कमरे में ले जाकर उन्होंने फुलस्केप साइज़ के काग़ज़ों पर पेंसिल से लिखी हुई एक पाण्डुलिपि देते हुए मुझसे कहा, "यह श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' की आत्मकथा है। इसका सम्पादन कर डालो, इसे छपवाना है।" साथ ही यह आदेश भी दिया कि भूमिका भाग में काकोरी की घटना और उस मुकदमे का विवरण भी दे देना।

काकोरी केस में मैं भी गवाह था। भाई सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य उन दिनों 'प्रताप' कार्यालय में ही मेरे साथ काम करते थे। वे भी केस में फँसे थे, उनकी सफाई में मैं भी गवाह था। मेरी गवाही यद्यपि हुई नहीं, परन्तु इस बहाने मुकदमे के दौरान अदालत जाने और वहाँ उन आज़ादी के दीवानों के दर्शन करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। उन्हीं दिनों सरदार भगतसिंह भी 'प्रताप' कार्यालय में आकर टिके थे और उनसे मेरा स्नेहपूर्ण व्यवहार था। गणेशजी इन सब बातों से परिचित थे, इसलिए और सम्भव है इसलिए भी कि 'प्रताप' से अलग होकर मैं कुछ समय के लिए बेकार-सा था और उस बेकारी में कुछ काम देने की उनकी इच्छा से ही उन्होंने वह पुस्तक मुझे सम्पादन करने के लिए दी।

मैं पाण्डुलिपि अपने साथ गाँव लेता गया और उसका सम्पादन वहीं किया। भूमिका भाग लिखने के लिए मैं कानपुर आ गया था, क्योंकि देहात में समाचारपत्र आदि उपलब्ध न थे। सब सामग्री तैयार करके मैंने गणेशजी को दे दी।

उस समय हमारे मित्र श्री देवव्रत शास्त्री प्रताप प्रेस में काम करते थे। उनसे यह भी मालूम हुआ कि वह सामग्री गणेशजी ने बाद में श्री विजयकुमार सिनहा को भी देखने को दी थी। उसके बाद पुस्तक प्रकाशित हुई। उसमें काकोरी के अन्य शहीदों का उल्लेख भी बाद में जोड़ा गया। वह किसका लिखा हुआ है, यह मुझे ज्ञात नहीं।

जो आत्मकथा प्रकाशित हुई वह मूल की वास्तविक प्रतिलिपि तो हो ही नहीं सकती। मूल पाण्डुलिपि में अनेक घटनाओं और अनेक व्यक्तियों के विवरण थे, जिनका दिया जाना खतरे से खाली न था, यद्यपि वे बातें क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास की सामग्री के रूप में बड़ी मूल्यवान होतीं। परन्तु अंग्रेज़ी शासन के उस ज़माने में उस पाण्डुलिपि का ज्यों-का-त्यों प्रकाशन शायद अनेक देशभक्तों को आफत में डाल देता और क्रान्तिकारी योजना को भी हानि पहुँचती। पता नहीं वह पाण्डुलिपि अब कहीं सुरक्षित है भी या नहीं, परन्तु यदि वह होती तो कहीं अधिक मूल्यवान सामग्री उपलब्ध हो सकती। खैर।

वह पुस्तक प्रकाशित हुई और अंग्रेज़ी हुकूमत ने उसे ज़ब्त कर लिया। उसके बाद भी शायद वह एक बार प्रकशित हुई, परन्तु उसकी पूरी जानकारी मुझे नहीं है। उसके बाद ठीक ढंग से 'बिस्मिल' जी की आत्मकथा अब प्रकाशित हुई। यद्यपि इसकी सामग्री का मूल आधार 'काकोरी के शहीद' की सामग्री है, तथापि उसे जिस ढंग से सजाया गया है, उसमें भूमिका भाग, परिशिष्ट के दोनों भाग और सम्पादकीय वक्तव्य देकर इसकी महत्ता और उपादेयता को और अधिक बढ़ाया गया है, वह इस संस्करण की विशेषता है। 'बिस्मिल' जी का जीवन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एक आदर्श नौजवान का जीवन था। उनमें सादगी थी, संजीदगी थी, सूझ थी, संगठन शक्ति थी, रूप था, स्वास्थ्य था, चरित्र था, विद्या थी, बुद्धि थी, साहस था। सारांश यह कि एक उच्च कोटि के नौजवान में जो कुछ होना चाहिये था वह सब कुछ उनमें था। फिर उनका सारा जीवन त्याग और बलिदान का जीवन था। जननी जन्मभूमि के लिए प्राणों को हथेली पर रखकर बड़ा-से-बड़ा खतरा लेना उनके लिए एक मामूली-सी बात थी। ऐसे वीर देशभक्त का जीवन-चरित्र, फिर जब वह उन्हीं की भाषा में लिखा गया हो, किसका मन न हर लेगा। यह पुस्तक तो प्रत्येक नवयुवक का मार्गदर्शक हो सकती है।

'बिस्मिल' जी अल्पजीवी थे। पर तेजस्वी पुरुषों की उम्र को कौन पूछता है। "तेजस्विनां न वय : समीक्ष्यते।" ३०-३१ वर्ष की आयु में ही उन्हें फाँसी पर लटका दिया गया था, परन्तु इतनी अवधि में ही उन्होंने देश को स्वतंत्र करने के लिए कितना बड़ा काम किया। उनकी एक-एक बात जीवन में जोश भरने वाली है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि इस आत्मकथा के प्रकाशन से अनेक नवयुवक देशसेवा की प्रेरणा प्राप्त करेंगे और 'बिस्मिल' जी के विचारों से अवगत होकर अपने लिए उचित मार्ग बना सकेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

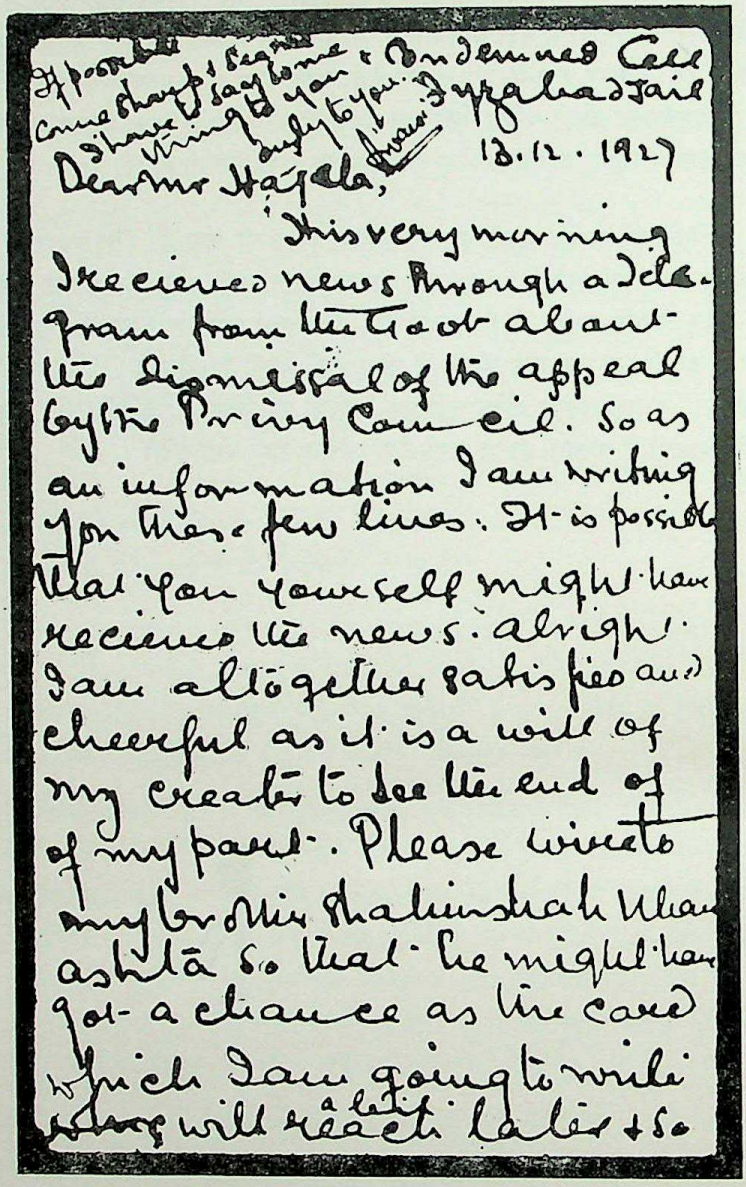

If possible
come short & say some
thing to you. Condemned Cell
I have to say
Fyzabad Jail
13.12.1927

Dear Mr Hajela,

This very morning I received news through a telegram from the Govt about the dismissal of the appeal by the Privy Council. So as an information I am writing you these few lines. It is possible that you yourself might have received the news. Alright. I am altogether satisfied and cheerful as it is a will of my creator to see the end of of my part. Please write to my brother Mr Shahinshah Khan ashfā so that he might have got a chance as the card which I am going to write will reach later + so

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ का, फाँसी से पहले, जेल से अपने वकील श्री हजेला को लिखे गया ख़त ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जामे शहादत पीने से पहले

शहीदे क़ौम अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ का पैग़ाम

बरादराने वतन के नाम

बरादराने वतन की ख़िदमत में उनके इस भाई का सलाम पहुँचे जो उनकी इज़्ज़त व नामूस की ख़ातिर फ़ैज़ाबाद जेल में कुरबान हो गया। आज यह पैग़ाम मैं बरादराने वतन को भेज रहा हूँ। इसके बाद मुझको तीन दिन और चार रातें गुजारना हैं। इधर फिर मैं हूँगा और आगोशे मादरे वतन। हम लोगों पर जो चार जुर्म लगाये गये थे वह इस सूरत में पब्लिक के सामने लाये गये कि बहुत-से लोग जो ग़ैर-तालीमयाफ़्ता या हुकूमत के दस्तरखान की हड्डियाँ चिचोड़ने वाले थे, हमें डाकू खूनी और कातिल के लकब से पुकारा किये। मैं आज इस कोठरी में बैठा हुआ भी खुश हूँ और अपने उन भाइयों का शुक्रिया अदा करता हूँ और कहूँगा :

मर मिटा आप पै कौन आपने यह भी न सुना
आपकी जान से दूर आपसे शिकवा है मुझे।

खैर, यह तुम्हारा फैल है कि हमारी कुरबानियों को कबूल न करो और यह हमारा फ़र्ज़ है कि तुम बारबार ठुकराओ और हम तुम्हारा ही दम भरते जायें।

बरादराने वतन! मैं इसी पाक और मुक़द्दस वतन की क़सम खाकर कहूँगा कि हम नंग और नामूस पर कुरबान हो गये हैं। क्या यह शर्म की बात न थी कि हम अपनी आँखों से देखते कि नित नये मज़ालिम हो रहे और ग़रीब हिन्दोस्तानी हर हिस्सा-ए-मुल्क और ख़ता-ए-दुनिया में ज़लील और ख्वार हो रहा है। न कहीं ठिकाना है न कहीं सहारा। क़िस्सा मुख्तसर कि हमारा वतन भी हमारा नहीं। हम पर टैक्सों की भरमार, हमारी हालत का रोज़-ब-रोज़ गिरते चले जाना, तैंतीस करोड़ बहादुर हिन्दोस्तानी गैर-मसलह भेड़-बकरियों के मानिंद बनाये गये। हमारे गोरे आक़ा हमें ठोकर मार दें तो उनसे बाज़पुर्स न हों। जलियानवाला बाग़ को नमूना-ए-हश्र बनादें, हमारी माँओं की बेइज़्ज़ती करें, हमारे बूढ़े बजुर्गों और बच्चों पर बम के गोले और मशीनगन की गोलियाँ बरसायें, और हर नया दिन हमारे लिए नयी मुसीबतें लेकर आये और फिर भी हम सब बाद-ए-ग़फलत और ऐश-औ-इशरत में अय्याम नौजवानी गुज़ार देते। यह ख्याल करके कि—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुझमें हुब्बे वतन का वैसा शबाब में है
लहू में फिर ये रवानी रहे रहे न रहे ।

जो भी किया भला किया। आज हम नाकाम हैं। अगर कामयाब होते तो मुहिब्बे वतन के लक़ब से पुकारे जाते और जो हम पर गवाहियाँ दे गये, हमारे नाम के जैकारे लगाते ।

बहे बहरे फ़ना में जल्द या रब लाश बिस्मिल की
कि भूखी मछलियाँ हैं जौहरे शमशीरे क़ातिल की ।

आह ! क्या ऐसे दौर में ज़िन्दगी प्यारी ख़याल की जा सकती है जबकि हमारे सियासी गिरोह में खलफ़शार मचा हुआ है, कोई तबलीग़ का दिलदादा तो कोई शुद्धी पर मर मिटने को वायसे जात समझ रहा है। मुझे तो रह-रहकर ग़म उन दिमाग़ों और अक्लों पर आ रहा है जो कि बहतरीन दिमाग़ हैं और माहिरीन सियासत हैं। काश वह आज़ादी-ए-मिस्र की जद्दोजहद व अहरारानें मिस्र के कारनामे और बरतानवी चालें स्टडी कर लें और फिर हमारे हिन्दोस्तान की मौजूदा हालत से मुकाबला व मवाजाना करें। क्या ठीक वही हाल इस वक्त नहीं है ? गवर्मेण्ट के खुफ़िया एजेण्ट मज़हबी बुनियादों पर प्रोपगेण्डा कर रहे हैं। इन लोगों का मक़सद मज़हब की हिफ़ाज़त या तरक्की नहीं है, बल्कि चलती गाड़ी में रोड़ा अटकाना है। मेरे पास वक़्त नहीं और न मौका है कि कच्चा चिट्ठा खोलकर रख देता जो मुझे अय्यामे फ़रारी और इसके बाद मालूम हुआ है। यहाँ तक मुझको मालूम है कि मौलवी नामतुल्ला क़ादयानी कौन था जो काबुल में संगबार किया गया। वह ब्रिटिश एजेण्ट था जिसके पास हमारे करमफरमा तसदीक हुसैन साहब डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस सी. आई. डी. गवर्मेण्ट आफ इंडिया बहुक्म गवर्मेण्ट पैग़ाम लेकर एक मर्तबा गये थे, मगर बेदार मग्ज हुकूमत काबुल ने जल्द इलाज कर दिया और मर्ज़ को फैलने न दिया।

मैं अपने हिंदू और मुसलमान भाइयों को बता देना चाहता हूँ कि सब ढोंग है जो सी. आई. डी. के खुफ़िया ख़ज़ाने से रचा गया है। मैं मर रहा हूँ और वतन पर मर रहा हूँ। मेरा फ़र्ज़ है कि हर नेक व बद बात भाइयों तक पहुँचा दूँ। मानना न मानना उनका काम है। मुल्क के बड़े-बड़े लोग इससे बचे हुए नहीं हैं। पस अवाम को आँखें खोलकर इत्तबाअ करना चाहिये। भाइयो ! तुम्हारी ख़ानाजंगी, तुम्हारी आपस की फूट, तुम दोनों में से किसी के लिए भी सूदमन्द साबित न होगी और यह ग़ैर-मुमकिन है कि सात करोड़ मुसलमान शुद्ध कर लिये जायें, और ऐसी यह भी मुहमिल-सी बात है कि बाईस करोड़ हिन्दू मुसलमान बना लिये जायें। मगर हाँ, यह आसान है और बिल्कुल आसान है कि यह सब मिलकर ग़ुलामी का तोक़ गले में डाल लें। ऐ वह क़ौम जिसका कोई झण्डा नहीं, ऐ वह क़ौम कि तेरा वतन नहीं, ऐ वह क़ौम कि जो दूसरों की तरफ हाथ फ़ैलाये हुए रहम की दरख्वास्त पर नज़र रखती है, तेरी अपनी ग़लतियों का ही नतीजा है कि आज तू ग़ुलाम है और फिर भी वही ग़लतियाँ कर रही कि आनेवाली नस्लों के लिए भी तू ग़ुलामी का धब्बा छोड़ जायेगी कि जो भी सरज़मीने हिन्द पर क़दम रक्खेगा, ग़ुलामी में रक्खेगा और ग़ुलाम मरेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
ऐ खुदावन्द कदूस ! क्या कोई ऐसा सवेरा नहीं आयेगा कि जिस सुबह को तेरा आफ़ताब आज़ाद हिन्दोस्तान में चमके और फ़जाए हिन्द आज़ादी के नारों से गूँज उठे ?

कांग्रेसवाले हों या सुराजिस्ट, तबलीगवाले हों या शुद्धीवाले, कम्युनिस्ट हों कि रेवोल्युशनरी, अकाली हों या बंगाली, मेरा पैग़ाम हर फरजंदे वतन को पहुँचे । मैं हर उस शख्स को इसकी इज्ज़त व मज़हब का वास्ता देता हूँ और अगर वह मज़हब का कायल नहीं हो तो उसके ज़मीर को या जिसको भी वह मानता हो अपील करता हूँ कि हम काकोरी केस के मर जानेवाले नौजवानों पर तरस खाओ और फिर हिन्दोस्तान को सन् २०-२१ वाला हिन्दोस्तान बना दो । फिर अहमदाबाद कांग्रेस का सा इत्तहाद व इत्तफ़ाक सामने हो । बल्कि उससे भी बढ़कर हो और मुकम्मिल आज़ादी का जल्द अज़ जल्द ऐलान करके इन गोरे आक़ाओं को बता दो कि यह काले अब कैंचुली उतार चुके हैं और अब वह किसी मंतर से राम न होंगे ।

तबलीग और शुद्धीवालो ! खुदारा आँखें खोलो, कहाँ थे और कहाँ पहुँच गये । आज कौन ऐसा हिन्दू मुसलमान है जो मज़हबी आज़ादी इतनी रखता है जितना उसे हक है ? क्या ग़ुलाम क़ौम का कोई मज़हब होता है ? तुम अपने मज़हब का सुधार क्या कर सकते हो? आपस में मिलजुलकर रहो और मुत्तहद हो जाओ, नहीं तो सारे हिन्दोस्तान की बदबख्ती का वार तुम्हारी गर्दनों पर है और ग़ुलामी का वायस तुम हो । कम्युनिस्ट ग्रूप से अशफ़ाक़ की गुजारिश है कि तुम इस ग़ैर-मुल्की तहदीक को लेकर हिन्दोस्तान में आये हो, इसलिए अपने आपको ग़ैर-मुल्की ही तसव्वुर करते हो । इससे काम नहीं चलेगा । अपने असली रंग में आ जाओ, देस के लिए जियो, देस के लिए मरो । मैं तुमसे काफ़ी तौर पर मुन्तफ़िक़ हूँ और कहूँगा कि मेरा दिल हमेशा ग़रीब किसानों और दुखिया मज़दूरों के लिए दुखी रहा है । अपने अय्यामे फ़रारी में भी अक्सर उनकी हालत देखकर मैं रोया किया हूँ क्योंकि मुझे उनके साथ दिन गुजारने का मौक़ा मिला है ।

मुझसे पूछो तो कहूँगा कि मेरा वस हो तो मैं दुनिया की हर मुमकिन चीज़ उनके लिए वक्फ़ कर दूँ । हमारे शहरों की रौनक़ इनके दम से है । हमारे कारख़ाने इनके दम से आबाद और काम कर रहे हैं । हमारे पम्पों से उनके हाथ पानी निकालते हैं । ग़रज कि दुनिया का हर काम उनकी वजह से ही हुआ करता है । ग़रीब किसान बारिश के मूसलाधार पानी और जेठ-बैसाख की तपती हुई दोपहर में खेतों में जमा होकर जंगल में मँडलाते हुए हमारी खुराक का सामान पैदा करते हैं । यह बिल्कुल सच है कि जो वह पैदा करते हैं, जो वह बनाते हैं, उसमें उनका हिस्सा नहीं होता और हमेशा दुखी और मफलुकुल हाल रहते हैं । मैं इत्तफाक करता हूँ कि इन तमाम बातों के ज़िम्मेदार हमारे गोरे आक़ा और उनके एजेण्ट हैं । मगर इसका इलाज क्या है कि उनको इस हालत पर ले आये कि वह महसूस करने लगें कि वह क्या हैं ? इसका वाहिद ज़रिया यह है कि तुम उन जैसी वजअ कतअ अख्तयार करो और जण्टलमैनी छोड़कर देहात का चक्कर लगाओ, कारख़ानों में डेरे डालो और उनकी हालत स्टडी करो, उनमें अहसास पैदा करो । तुम 'कैथराइन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्राण्डमदर ऑफ रूस का सवानिह उमरी पढ़ो और वहाँ के नौजवानों की कुरबानियाँ देखो। तुम कालर, टाई और उम्दा : सूट पहनकर लीडर जरूर बन सकते हो, मगर किसानों और मज़दूरों के लिए मुफ़ीद साबित नहीं हो सकते। दीगर पोलिटिकल पार्टियों से मुन्तहद होकर काम करो और माद्दापरस्ती से किनारा करो कि यह फ़ज़ूल है। मेरे दिल में तुम्हारी इज्ज़त है और मैं मरते हुए भी तुम्हारे सियासी मक़ासिद से बिल्कुल मुन्तफ़िक़ हूँ। मैं हिन्दोस्तान की ऐसी आज़ादी का ख्वाहिशमन्द था जिसमें ग़रीब खुशी और आराम से रहते और सब बराबर होते। खुदा मेरे बाद वह दिन जल्द लाये जबकि छतरमंज़िल लखनऊ में अब्दुल्ला मिस्त्री और धनिया चमार और किसान भी मिस्टर ख़लीकुज्ज़माँ, जगतनारायन और नवाब महमूदाबाद के बराबर कुर्सी पर बैठे नज़र आयें।

मेरे कामरेड, मेरे रेवोल्युशनरी भाइयो ! तुमसे मैं क्या कहूँ और तुमको क्या लिखूं। पस यह तुम्हारे लिए क्या कुछ कम मुसर्रत की बात होगी जब कि तुम सुनोगे कि तुम्हारा एक भाई हँसता हुआ फाँसी पर चढ़ गया और मरते-मरते खुश था। मैं खूब जानता हूँ कि जो स्प्रिट तुम्हारा तबका रखता है मुझको भी फ़ख्र है और अब बहुत ज्यादा फख्र है कि एक सच्चा रेवोल्युनशनरी होते हुए जान दे रहा हूँ। अपना पैग़ाम तुम तक पहुँचाना मेरा फ़र्ज़ था। मैं खुश हूँ, मसरूर हूँ और उस सिपाही की तरह हूँ जो फायरिंग लाइन पर हँसता हुआ जा रहा हो और ख़न्दकों में बैठा हुआ गा रहा हो।

हज़ार दुख क्यों न आयें, बहर व जख्वार दरमियान मौजें मारें, आतशपहाड़ दरमियान में क्यों न हायल हो जायें, मगर ऐ आज़ादी के शेरो ! अपने गरम-गरम खून को मातृभूमि पर छिड़कते हुए अपनी जानों को मातृभूमि की वेदी पर कुरबान करते हुए आगे बढ़ते चले जाओ।

मैं बहुत खुश हूँ। क्या मेरे लिए इससे बढ़कर कोई इज्ज़त हो सकती है कि सबसे पहला और अव्वल मुसलमान मैं हूँ जो आज़ादी-ए-वतन की ख़ातिर फाँसी पर चढ़ रहा हूँ ! मेरे भाइयो ! मेरा सलाम लो और इस नामुकम्मिल काम को जो हमसे बाकी रह गया है, तुमको पूरा करना है।

उठो उठो सो रहे हो नाहक़ पयामे बाँगे जरस तो सुन लो।
बढ़ो कि कोई बुला रहा है निशाने मंज़िल दिखा-दिखाकर ।।

ज़्यादा क्या लिखूं। सलाम लो और कमरें बाँध लो और मैदाने अमल में आन पहुँचो। खुदा तुम्हारे साथ है। वतन की मुत्तहदा सियासी जमातो और उनके लीडरो ! मेरा सलाम क़बूल करो। तुम हम लोगों को उस नज़र से न देखना जिस नज़र से दुश्मनाने वतन देखते हैं। न हम डाकू थे न क़ातिल।

कहाँ गया वह कोहनूर हीरा, किधर गयी हाय मेरी दौलत।
वह सब का सब लूट करके उलटा हमीं को डाकू बता रहे है !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमीं को दिन-दहाड़े लूटा, फिर भी हमीं डाकू हैं। अगर हम ऐसे हैं तो वह कैसे हैं और किस खिताब से पुकारे जाने के क़ाबिल हैं जिन्होंने हिन्दोस्तान का सुहाग लूट लिया ?

अच्छा अब मैं रुख़सत होता हूँ और हमेशा के लिए ख़ैरबाद करता हूँ। खुदा तुम्हारे साथ हो और फज़ाए हिन्द पर आज़ादी का झण्डा लहराये। मेरे पास न वह ताक़त है कि हिमालिया की चोटी पर पहुँचकर एक ऐसी आवाज़ लगाऊँ जो हर शख्स को बेदार कर दे, और न वह असबाब हैं कि जिनसे मैं तुम्हारे दिलों को मुश्तअल कर दूँ कि तुम उसी जोश से आगे बढ़कर खड़े हो जाओ जैसे सन् २०-२१ में थे। बाद को मैं अपने उन भाइयों से शुक्रिया के साथ रुख़सत होता हूँ जिन्होंने हमारी मदद ज़ाहिरा तौर पर की या पोशीदा, और उन्हें यक़ीन दिलाऊँगा कि अशफ़ाक़ आख़िर दम तक सच्चा रहा और खुश-ख़ुश मर गया और खयानते वतनी का इस पर कोई जुर्म नहीं लगाया जा सकता। वतनी भाइयों से गुज़ारिश है कि वह मेरे भाइयों को मेरे बाद न भूलें और उनकी मदद करें और ख्याल रखें।

—अशफ़ाक़उल्ला खाँ 'हसरत' बारसी

फ़ैज़ाबाद जेल,
१६ दिसम्बर, १९२७ ई.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अश'आरे अशफ़ाक़

ग़ज़ल

सुनाएँ ग़म की किसे कहानी हम तो अपने सता रहे हैं।
हमेशा वह सुबहो-शाम दिल पर सितम के ख़ंजर चला रहे हैं ।।
न कोई इंगलिश न कोई जर्मन न कोई रशियन न कोई टर्की ।
मिटाने वाले हैं अपने हिन्दी जो आज हमको मिटा रहे हैं ।।
कहाँ गया कोहेनूर हीरा किधर गयी हाय मेरी दौलत ।
वह सबका सब लूट करके उलटा हमीं को डाकू बता रहे हैं ।।
जिसे फ़ना वह समझ रहे हैं वफ़ा का है राज़ इसी में मुज़मर ।
नहीं मिटाये से मिट सकेंगे वह लाख हमको मिटा रहे हैं ।।
जो है हुकूमत वह मुद्दई है जो अपने भाई हैं हैं वह दुश्मन ।
ग़ज़ब में जान अपनी आ गयी है क़ज़ा के पहलू में जा रहे हैं ।।
चलो चलो यारो रंगे थियटर दिखाएँ तुमको वहाँ पे लिबरल ।
जो चन्द टुकड़ों पे सीमोज़र के नया तमाशा दिखा रहे हैं ।।
ख़ामोश 'हसरत' खामोश 'हसरत' अगर है जज़्बा वतन का दिल में।
सज़ा को पहुँचेंगे अपनी बेशक जो आज हमको फँसा रहे हैं ।।

ग़ज़ल

वह रंग अब कहाँ है नसरीनो नस्तरन में।
उजड़ा हुआ पड़ा है क्या ख़ाक है वतन में ।।
कुछ आरज़ू नहीं है, है आरज़ू तो यह है।
रख दे कोई ज़रा-सी ख़ाके वतन क़फन में ।।
ए पुख़्ताकारे उल्फ़त हुशयार डिग न जाना ।
मेराजे आशिक़ाँ है इस दार औ रसन में ।।
था नारा-ए-'अनलहक़' और दावा-ए-मुहब्बत ।
रक्खा हुआ था और' क्या मन्सूरो कोहकन में ।।
मौत और ज़िन्दगी है दुनिया का इक तमाशा ।
फ़रमान कृष्ण का था अर्जुन को बीच रन में ।।
जिसने हिला दिया है दुनिया को एक पल में
अफ़सोस क्यों नहीं है वह रूह अब वतन में ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ए वारिसीन मिल्लत यह ख़ूब याद रखना।
हैं बोस और कन्हाई अब भी बहुत वतन में ।।
सैयादे ज़ुल्म पेशा आया है जब से हसरत
हैं बुलबुले क़फ़स में जागो जगत चमन में ।।

ग़ज़ल

बहार आयी हुई शोरिशे जनूने फ़ितना सामाँ की।
इलाही ख़ैर करना तू मेरे जेबो गरीबाँ की ।।
सही जज़्बातें हुर्रियत कहीं मेटे से मिटते हैं।
अबस है धमकियाँ दारोरसन की और ज़िन्दाँ की ।।
वह गुलशन जो कभी आबाद था गुज़रे ज़माने में
मैं शाख़े ख़ुश्क हूँ हाँ हाँ उसी उजड़े गुलिस्ताँ की ।।
नहीं तुमसे शिकायत ऐ सफ़ीराने चमन मुझको।
मेरी तक़दीर ही में था कफ़स और क़ैद ज़िन्दाँ की ।।
करो ज़ब्ते मुहब्बत गर तुम्हें दावाए उलफ़त है।
ख़मोशी साफ़ बतलाती है ये तस्वीरे जानाँ की ।।
यूँ ही लिक्खा था क़िस्मत में चमन पैराए आलम ने।
कि फ़स्ले गुल में गुलशन छोड़कर है क़ैद ज़िन्दाँ की ।।
ज़मीं दुश्मन, ज़माँ दुश्मन, जो अपने थे पराये हैं ।।
सुनोगे दास्ताँ क्या तुम मेरे हाले परीशाँ की ।।
ये झगड़े औ बखेड़े मेटकर आपस में मिल जाओ।
ये तफ़रीक़े अबस है तुम में हिन्दू और मुसलमाँ की
सभी सामाने इशरत थे मज़े से अपनी कटती थी।
वतन के इश्क़ ने हमको हवा खिलवायी ज़िन्दाँ की ।।
ख़ुदा वाक़िफ़ है जैसी भी गुज़रती है गुज़रती है।
सुनोगे दास्ताँ क्या यार तुम बीमारे हिजराँ की ।।
मिसाले क़ैस दीवाना किसी लैला की ख़ातिर में।
महीनों ठोकरें खाया किया कोहो बियाबाँ की ।।
बहम्दल्लाह चमक उट्ठा सितारा मेरी क़िस्मत का।
कि तक़लीदे हक़ीक़ी की अता शाहे शहीदाँ की ।।
इधर ख़ौफ़े ख़ुदा है आशियाँ का ग़म उधर दिल को।
हमें यकसाँ है तफ़रीहे चमन और क़ैद ज़िन्दाँ की ।।
ज़बीं साई दरे हज़रत की हसरत अपना ईमाँ है
मुबारक हज़रते वाइज़ को ख़्वाहिश बाग़े रिज़वाँ की ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तस्वीरे नाकामी

क़तआत

जोश पर अल्लाह कैसा दीदए खूँरेज़ है
अश्क का हर एक क़तरा आज तूफ़ाँखेज़ है।
आतिशे मायूसिए दिल आह कैसी तेज़ है
जो नज़र के सामने मंज़र है ग़म-अंगेज़ है ।।

जिस बिसाते ख़ाक पर मैंने क़दम रक्खा जहाँ
वह ज़मीं देने लगी दुःख बनके मुझको आस्माँ।
टूटती है रोज़ मुझ पर इक बलाए नागहाँ
मेरी दुश्मन हो गयी बर्क़े हवादिस बेगुमाँ ।।

हूँ गिरफ़्तारे बला क्या क्या परेशानी नहीं
दामने क़िस्मत में मेरे तारे आस्मानी नहीं।
उफ़ मेरी तक़दीर में आसूदा सामानी नहीं
कौनसा ग़म आज मुझमें दर्द पिनहानी नहीं ।।

मैं खिज़ाँ क़िस्मत मुजस्सिम ग़म की इक तस्वीर हूँ
बेकसों की यास हूँ बिगड़ी हुई तक़दीर हूँ।
नालाहा-ए-बेरसा हूँ आहे बेतासीर हूँ
रास जो आती नहीं अफ़सोस वह तदबीर हूँ ।।

गुल भी क़िस्मत से हमारे वास्ते अब ख़ार हैं
राहतें जिनको समझते थे वह सब आज़ार हैं।
बेकसी अपनी है हमदम और ग़म ग़मख़्वार हैं
गो नहीं रोते मगर रोने के सब आसार हैं ।।

जो दुआएँ थीं सरासर बद-दुआएँ हो गयीं
दर्द अफ़ज़ा आजकल सारी दवाएँ हो गयीं।
जब कभी बेड़ा चला उल्टी हवाएँ हो गयीं
ख़त्म हम पर आस्माँ तेरी बलाएँ हो गयीं ।।

मेरे नाले बढ़के कर देते हैं मुझको बेक़रार
आह बनकर तीर हो जाती है मेरे दिल के पार।
क़ाबिले इबरत ये मंज़र है कि बनके ग़मगुसार
मेरी आँखें हाल पर रोती हैं होकर बेक़रार ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाए नाकामी कि उठ जाती है ये आँखें जिगर
हैफ़ सब दुनिया मुझे तारीक आती है नज़र।
रंजो ग़म आफ़त मुसीबत दर्दे दिल दर्दे जिगर
कौनसी आफ़त है या रब जो नहीं है मेरे सर।।

फ़रारी के दिनों में

ख़ुदाया देख ले हम कैसे ख़्वार हो के चले
वतन के नाम पै गोया निसार होके चले।
ख़राबो खस्तः व ज़ार व नज़ार होके चले
वतन में आह ग़रीबुद्दयार होके चले।
फ़साना ए सितम ए सद हज़ार होके चले।।

मुआफ़ हो ये मेरी गुफ़्तगूए बेतासीर
मुक़द्दरात में चलती नहीं कोई तदबीर।
हमारी तरह से हैं और भी कई दिलगीर
फिराये देखिये हमको कहाँ कहाँ तक़दीर
असीरे गर्दिशे लैलो निहार होके चले।।

तेरे ही वास्ते आलम में हो गये बदनाम
तेरे सिवा नहीं रखते किसी से हम कुछ काम।
तेरे ही नाम को जपते रहे हैं सुबहोशाम
वतन न दे हमें तर्केवफ़ा का तू इल्ज़ाम
कि आबरू पे तेरी हम निसार होके चले।।

मुतफ़र्रक़ात

शहीदों के मज़ारों पर लगेंगे हर बरस मेले
वतन पर मरनेवालों का यही बाक़ी निशाँ होगा
बहुत ही जल्द टूटेंगी गुलामी की ये ज़जीरें
किसी दिन देखना आज़ाद यह हिन्दोस्ताँ होगा।

बुज़दिलों को सदा मौत से डरते देखा
गो कि सौ बार उन्हें रोज़ ही मरते देखा।
वीर को मौत से हमने नहीं डरते देखा
तख़्ताए मौत पै भी खेल ही करते देखा।

मौत इक रोज़ जब आनी है तो डरना क्या है
हम सदा खेल ही समझा किये मरना क्या है।

CC-0. Agamnigam Digital Prosevation Foundation, Chandigarh

तोड़ा था रहम भी उनके ज़ुल्म से बेदाद से
चल दिये सूए अदम ज़िन्दाने फ़ैज़ाबाद से।

ज़िन्दगी बादे फ़ना तुझको मिलेगी 'हसरत'
तेरा जीना तेरे मरने की बदौलत होगा।

गर्दन अब हाथ से अपने ही कटानी है हमें
मादरे हिन्द पै यह भेंट चढ़ानी है हमें।
किस तरह मरते हैं अहरारे वतन भारत पर
सारे आलम को यही बात दिखानी है हमें।

बहरे ज़ख्खारे हवादिस से तू डर क्या 'हसरत'
कौम की नाव किनारे से लगानी है हमें।
ऐ मातृभूमि तेरी सेवा किया करूँगा
मुश्किल हज़ार आयें हर्गिज़ नहीं डरूँगा।

निश्चय यह कर चुका हूँ सन्देह कुछ नहीं है
तेरे लिए जिऊँगा, तेरे लिए मरूँगा।
फाँसी मिले मुझे या हो जनम क़ैद मेरी
बेड़ी बजा बजा कर तेरा भजन करूँगा।

फट्टा ये मूँज का फिर फूलों की सेज होगी
इसको बिछा के तेरी जब गोद में पड़ूँगा।
चक्की की दो मशक्कत या रामबाँस की हो
सब कुछ मैं तेरी ख़ातिर माता किया करूँगा।

वतन हमेशा रहे शाद काम और आज़ाद
हमारा क्या है अगर हम रहे रहे न रहे।

अकीदत के फूल

ज़ुबाने हाल से अशफ़ाक़ की तुरबत ये कहती है।
मुहब्बाने वतन ने क्यों हमें दिल से भुलाया है।।
बहुत अफ़सोस होता है बहुत तकलीफ़ होती है।
शहीद अशफ़ाक की तुरबत है और धूपों का साया है।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ क्रान्तिकारी गाने

[काकोरी काण्ड के अभियुक्त जब मुकदमा चलने के दौरान जेल में एक साथ रहते थे तो जिन क्रान्तिकारी गीतों से वे अपना मनोरंजन करते थे उनमें से कुछ नीचे उद्धृत किये जा रहे हैं। —सं.]

(१)

चाह नहीं है सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ
चाह नहीं है प्यारी के गले पड़ूँ हार में ललचाऊँ।
चाह नहीं है राजाओं के शव पर मैं डाला जाऊँ
चाह नहीं है देवों के सिर चढ़ूँ भाग्य पर इतराऊँ।
मुझे तोड़कर हे वनमाली उस पथ में तू देना फेंक
मातृभूमि हित शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक।

(२)

भारत जननि तेरी जय विजय हो, हो।
तू बुद्धि और ज्ञान की आगार, तेरा विजय सूर्य माता उदय हो॥
हो ज्ञान सम्पन्न जीवन सुफल होवे, सन्तान तेरी अखिल प्रेममय हो।
आयें पुनः कृष्ण देखें दशा तेरी, सरिता सरों में भी बहता प्रणय हो॥
साबर के संकल्प पूरण करें ईश, विघ्न और बाधा सभी का प्रलय हो।
गाँधी रहें और तिलक फिर यहाँ आवें अरविंद, लाला, महेन्द्र की जय हो॥
मेरे लिए जेल हो स्वर्ग का द्वार, बेड़ी की झनझन में वीणा की लय हो।
कहता खलिल आज हिन्दू मुसलमान सब मिलके गावो जननि तेरी जय हो॥

(३)

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है।
सुना है आज मक़तल में हमारा इम्तहाँ होगा॥
जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे वतन हरगिज़।
न जाने बाद मुर्दन मैं कहाँ और तू कहाँ होगा॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले ।
वतन पर मरनेवालों का यही बाक़ी निशाँ होगा ।।
इलाही वह भी दिन होगा जब अपना राज देखेंगे ।
जब अपनी ही ज़मीं होगी और अपना आसमाँ होगा ।।

(४)

हैफ़ हम जिस पै कि तैयार थे मर जाने को
यकबयक हमसे छुड़ाया उसी काशाने को ।
आसमाँ क्या यही बाक़ी था ग़ज़ब ढाने को
लाके गुरबत में जो रक्खा हमें तड़पाने को ।।
क्या कोई और बहाना न था तरसाने को ।।१।।

फिर न गुलशन में हमें लायेगा सैयाद कभी
क्यों सुनेगा तू हमारी कोई फरियाद कभी ।
याद आयेगा किसे यह दिले नाशाद कभी
हम भी इस बाग़ में थे क़ैद से आज़ाद कभी ।।
अब तो काहे को मिलेगी यह हवा खाने को ।।२।।

दिल फ़िदा करते हैं क़ुरबान जिगर करते हैं
पास जो कुछ है वह माता की नज़र करते हैं ।
खाना वीरान कहाँ देखिये घर करते हैं
खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं ।
जाके आबाद करेंगे किसी वीराने को ।।३।।

देखिये कब ये असीराने मुसीबत छूटें
मादरे हिन्द के अब भाग खुलें या फूटें ।
देश सेवक सभी अब जेल में मूँजें कूटें
हम यहाँ ऐश से दिनरात बहारें लूटें ।।
क्यों न तरजीह दें इस जीने पै मर जाने को ।।४।।

कोई माता की उमीदों पै न डाले पानी
ज़िन्दगी भर को हमें भेज के कालेपानी ।
मुँह में जल्लाद हुए जाते हैं छाले पानी
आब खंजर का पिला करके दुआ ले पानी ।।
भरने क्यों जायें हम इस उम्र के पैमाने को ।।५।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रहकर
हमको भी पाला था माँ-बाप ने दुख सह-सहकर।
वक़्ते रुख़सत उन्हें इतना भी न आये कहकर
गोद में आँसू जो टपकें कभी रुख से बहकर।।
तिफ़्ल उनको ही समझ लेना जी बहलाने को ।।६।।

देश-सेवा ही का बहता है लहू नस-नस में
अब तो खा बैठे हैं चित्तौड़ के गढ़ की कसमें।
सरफ़रोशी की अदा होती हैं यूँ ही रसमें
भाई ख़ंजर से गले मिलते हैं सब आपस में।।
बहनें तैयार चिताओं पै हैं जल जाने को ।।७।।

नौजवानो जो तबीयत में तुम्हारी खटके
याद कर लेना कभी हमको भी भूले–भटके।
आपके उज़वे बदन होवें जुदा कट-कटके
और सर चाक हो माता का कलेजा फटके।।
पर न माथे पै शिकन आये क़सम खाने को ।।८।।

अपनी किस्मत में अज़ल से ही सितम रक्खा था
रंज रक्खा था, मुहिन रक्खा था ग़म रक्खा था।
किसको परवाह थी और किसमें यह दम रक्खा था
हमने जब बादिए गुरबत में क़दम रक्खा था।।
दूर तक यादे वतन आयी थी समझाने को ।।९।।

अपना कुछ ग़म नहीं पर यह ही ख़याल आता है
मादरे हिन्द पे कब तक यह ज़वाल आता है।
हरदयाल आता है योरुप से न पाल आता है
क़ौम अपनी पै तो रह-रहके मलाल आता है।।
मुन्तजिर रहते हैं हम खाक में मिल जाने को ।।१०।।

मैकदा किसका है यह जामे सुबू किसका है
वार किसका है मेरी जाँ यह गुलू किसका है।
जो बहे क़ौम की ख़ातिर वह लहू किसका है
आसमाँ साफ़ बता दे तू उदू किसका है।।
क्यों नये रंग बदलता है ये तड़पाने को ।।११।।

दर्दमन्दों से मुसीबत की हवालत पूछो
मरने वालों से ज़रा लुत्फ़े शहादत पूछो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चश्मे मुश्ताक़ से कुछ दीद की हसरत पूछो
कुश्त-ए-नाज़ से ठोकर की क़यामत पूछो ।।
सोज़ कहते हैं किसे पूछो तो परवाने को ।।१२।।

बात तो जब है कि इस बात की ज़िद्दें ठानें
देश के वास्ते कुरबान करें सब जानें ।
लाख समझाये कोई एक न उसकी मानें
कहता है ख़ून से मत अपना गरेबाँ साने ।।
नासिहा ! आग लगे तेरे इस समझाने को ।।१३।।

न मयस्सर हुआ राहत में कभी मेल हमें
जान पर खेल के आया न कोई खेल हमें ।
एक दिन को भी न मंजूर हुई बेल हमें
याद आयेगा बहुत लखनऊ का जेल हमें ।।
लोग तो भूल ही जायेंगे इस अफ़साने को ।।१४।।

अब तो हम डाल चुके अपने गले में झोली
एक होती है फ़कीरों की हमेशा बोली ।
खून से फाग रचाएगी हमारी टोली
जब से बंगाल में खेले हैं कन्हैया होली ।।
पूछता कौन है उस दिन से ही बरसाने को ।।१५।।

नौजवानो यही मौक़ा है उठो खुल खेलो
खिदमते क़ौम में जो बला आए खुशी से झेलो ।
देश के सदक़े में माता को जवानी दे दो
फिर मिलेंगी न यह माता की दुआएँ ले लो ।।
देखें कौन आता है इरशाद बजा लाने को ।।१६।।

(५)

उरियानी न हैरानी न थे पाँव में छाले
हम भी थे कभी आह बड़े नाज़ों से पाले ।
ज़ुल खाया मिटे उड़ गयी आज़ादी औ राहत
अल्लाह यह दिन अपने तो दुश्मन पै भी न डाले ।।

मारा है मिटाया है हमें आह उन्हींने
कर बैठे थे हम जानो जिगर जिनको हवाले ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमने तो हमेशा तेरी खुशनूदी ही चाही
खुद बिगड़े मगर काम तो तेरे ही सँभाले ।।

उसका यह सिला हमको मिला उफ़ री मुहब्बत
बरबाद किया डाल दिये जान के लाले ।
बेबस हुए ज़लील हुए मिट तो चुके हम
अब और क़यामत भी जो ढाना हो सो ढाले ।।
सौगन्द है तुझको तेरे उस जोरो जफ़ा की
जी भरके हमें जितना सताना हो सता ले ।
क़िस्मत का कभी अपनी भी चमकेगा सितारा
हम भी देखेंगे आज़ादी के उजाले ।।
बदले की लहर तब तेरे सर चढ़ के कहेगी
था ज़हर पर केंचुल से ये लाचार थे काले ।।

(६)

खुशी के दौर-दौरे में है याँ रंजो मुहिन पहले,
बहार आती है पीछे से ख़िजाँ गरदे चमन पहले ।

मुनव्वर अंजुमन होती है महफ़िल गर्म होती है,
मगर कब तक कि खुद जलती शमा ये अंजुमन पहले ।

मुसीबत आ, क़यामत आ, कहाँ ज़ंजीरों जिन्दाँ है,
यहाँ तैयार बैठे हैं ग़रीबाने वतन पहले ।

हमारा हिन्द भी फूले-फलेगा एक दिन लेकिन,
मिलेंगे ख़ाक में लाखों हमारे गुलबदन पहले ।

हमें दुःख भोगना लेकिन हमारी नस्ल सुख पावे,
ये दिल में ठान लो अपने ए हिन्दी मर्दो-ज़न पहले ।

—लालचन्द 'फलक'

(७)

जो कोई पूछे कौन हो तुम
तो कह दो बाग़ी ये नाम अपना ।

जुल्म मिटाना हमारा पेशा,
ग़दर का करना ये काम अपना ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नमाज़ संध्या यही हमारी,
श्रीपाठ पूजा भी सब यही है।

धरम करम सब यही है प्यारो,
यही ख़ुदा और राम अपना।

तेरी सेवा में ए भारत अगर तन जाये सिर जाये,
तो मैं समझूँ कि है मरना यहाँ पर भक्ति पथ मेरा।

—अमर शहीद करतारसिंह सराबा

(८)

सरफ़रोशी की तमन्ना

[यह ग़ज़ल क्रान्तिकारियों का प्रिय गाना था, जिसे गाते हुए वे अदालत में प्रवेश करते थे और उससे वापस जेल में ले जाये जाते हुए भी समवेत गान के रूप में गाते थे और उनके दर्शनार्थ एकत्र जनता श्रद्धा-विभोर हो उनके मार्ग के दोनों और खड़ी होकर इसे सुनती रहती थी और उनके स्वर में स्वर मिलाकर गाने भी लगती थी। —सं.]

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दल में है
देखना है ज़ोर कितना बाजुए क़ातिल में है।

रहबरे राहे मुहब्बत रह न जाना राह में
लज़्ज़ते सहरान वर्दी दूरिए मंज़िल में है।।

आज मक़तल में यों कातिल कह रहा है बार बार
क्या तमन्नाए शहादत भी किसी के दिल में है।

वक़्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आसमाँ,
हम अभी से क्या बतायें क्या हमारे दिल में है।।

अब न अगले वलवले हैं औ न अरमानों की भीड़
एक मिट जाने की हसरत अब दिले बिस्मिल में है।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'बिस्मिल' का शिक़वा

[क्रान्तिकारी दल पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' को गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी से निकाल लाने की योजना बना रहा था। योजना ऐसी थी कि पं. रामप्रसादजी को भी आशा हो गयी थी कि वह सफल हो सकेगी, परन्तु कई कारणों से योजना कार्यान्वित न हो सकी। तब एक प्रेमगीत ग़ज़ल के छद्म से उन्होंने अपना यह उपालम्भ दल को भेजा था। मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा से यह ग़ज़ल उसी समय समाचारपत्रों में छप गयी थी। यह एक शहीद की ऐतिहासिक कृति है अतः उसे यहाँ उद्धृत किया जा रहा है। —सं.]

ग़ज़ल

मिट गया जब मिटनेवाला फिर सलाम आया तो क्या
दिल की बर्बादी के बाद उनका पयाम आया तो क्या !
काश अपनी ज़िन्दगी में हम ये मंज़र देखते
बर सरे तुरबत कोई महशर ख़राम आया तो क़्या !
ए दिले नाशाद मिट जा अब तू कूए यार में
फिर मेरी नाकामियों के बाद काम आया तो क्या !
आख़िरे शब दीद के क़ाबिल थी 'बिस्मिल' की तड़प
सुबह होते गर कोई बालाए बाम आया तो क्या !

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh